॥ॐ॥
॥श्री परमात्मने नम: ॥
॥श्री गणेशाय नमः॥

# ॥ ऋग्वेद संहिता ॥

# ॥ ऋग्वेद ॥

# ॥अथ अष्टम मण्डलं॥

**श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन**

**॥ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ॥**

# विषय सूची


सूक्त १ .......... 9
सूक्त २ .......... 22
सूक्त ३ .......... 37
सूक्त ४ .......... 47
सूक्त ५ .......... 55
सूक्त ६ .......... 68
सूक्त ७ .......... 83
सूक्त ८ .......... 95
सूक्त ९ .......... 103
सूक्त १० .......... 111
सूक्त ११ .......... 114
सूक्त १२ .......... 118
सूक्त १३ .......... 130
सूक्त १४ .......... 142
सूक्त १५ .......... 147
सूक्त १६ .......... 152
सूक्त १७ .......... 157
सूक्त १८ .......... 163
सूक्त १९ .......... 171

सूक्त २० ........................................................................ 184
सूक्त २१ ........................................................................ 194
सूक्त २२ ........................................................................ 201
सूक्त २३ ........................................................................ 208
सूक्त २४ ........................................................................ 218
सूक्त २५ ........................................................................ 229
सूक्त २६ ........................................................................ 238
सूक्त २७ ........................................................................ 246
सूक्त २८ ........................................................................ 255
सूक्त २९ ........................................................................ 257
सूक्त ३० ........................................................................ 260
सूक्त ३१ ........................................................................ 262
सूक्त ३२ ........................................................................ 269
सूक्त ३३ ........................................................................ 278
सूक्त ३४ ........................................................................ 286
सूक्त ३५ ........................................................................ 293
सूक्त ३६ ........................................................................ 302
सूक्त ३७ ........................................................................ 306
सूक्त ३८ ........................................................................ 310
सूक्त ३९ ........................................................................ 314

सूक्त ४० ........................................................................ 319
सूक्त ४१ ........................................................................ 325
सूक्त ४२ ........................................................................ 330
सूक्त ४३ ........................................................................ 333
सूक्त ४४ ........................................................................ 344
सूक्त ४५ ........................................................................ 354
सूक्त ४६ ........................................................................ 368
सूक्त ४७ ........................................................................ 380
सूक्त ४८ ........................................................................ 387
सूक्त ४९ ........................................................................ 394
सूक्त ५० ........................................................................ 399
सूक्त ५१ ........................................................................ 403
सूक्त ५२ ........................................................................ 407
सूक्त ५३ ........................................................................ 412
सूक्त ५४ ........................................................................ 416
सूक्त ५५ ........................................................................ 420
सूक्त ५६ ........................................................................ 422
सूक्त ५७ ........................................................................ 424
सूक्त ५८ ........................................................................ 425
सूक्त ५९ ........................................................................ 428

सूक्त ६० .................................................................................. 432
सूक्त ६१.................................................................................. 440
सूक्त ६२ .................................................................................. 447
सूक्त ६३ .................................................................................. 452
सूक्त ६४ .................................................................................. 457
सूक्त ६५.................................................................................. 461
सूक्त ६६.................................................................................. 466
सूक्त ६७.................................................................................. 472
सूक्त ६८ .................................................................................. 479
सूक्त ६९ .................................................................................. 486
सूक्त ७० .................................................................................. 493
सूक्त ७१ .................................................................................. 499
सूक्त ७२ .................................................................................. 505
सूक्त ७३ .................................................................................. 512
सूक्त ७४ .................................................................................. 519
सूक्त ७५.................................................................................. 525
सूक्त ७६.................................................................................. 531
सूक्त ७७.................................................................................. 536
सूक्त ७८ .................................................................................. 540
सूक्त ७९ .................................................................................. 543

सूक्त ८०........................................................................... 547
सूक्त ८१........................................................................... 551
सूक्त ८२ .......................................................................... 555
सूक्त ८३........................................................................... 559
सूक्त ८४ .......................................................................... 563
सूक्त ८५ .......................................................................... 567
सूक्त ८६ .......................................................................... 571
सूक्त ८७ .......................................................................... 574
सूक्त ८८ .......................................................................... 577
सूक्त ८९ .......................................................................... 580
सूक्त ९०........................................................................... 583
सूक्त ९१........................................................................... 586
सूक्त ९२ .......................................................................... 589
सूक्त ९३........................................................................... 600
सूक्त ९४ .......................................................................... 611
सूक्त ९५ .......................................................................... 615
सूक्त ९६ .......................................................................... 619
सूक्त ९७ .......................................................................... 628
सूक्त ९८ .......................................................................... 634
सूक्त ९९ .......................................................................... 639

सूक्त १०० .......................................................................... 643
सूक्त १०१ .......................................................................... 648
सूक्त १०२ .......................................................................... 654
सूक्त १०३ .......................................................................... 662

# सूक्त १

ऋषि: १-२ प्रगाथो काण्व; ३-२९ मेध्वातिथि काण्वौ, ३०-३३ प्लायो-गिरासंग, ३४ अंगिरसी, शाश्वती ऋषिका।
देवता – इन्द्र:, ३०-३४ आसंग। छंद – १-४ प्रगाथ

मा चिदन्यद्वि शंसत सखायो मा रिषण्यत ।
इन्द्रमित्स्तोता वृषणं सचा सुते मुहुरुक्था च शंसत ॥१॥

हे मित्रों ! इन्द्रदेव को छोड़कर अन्य किसी देव की स्तुति उपादेय नहीं है। उसमें शक्ति नष्ट न करें। सोम शोधित करके, एकत्र होकर, संयुक्तरूप से बलशाली इन्द्रदेव की ही बार-बार प्रार्थना करें॥१॥

अवक्रक्षिणं वृषभं यथाजुरं गां न चर्षणीसहम् ।
विद्वेषणं संवननोभयंकरं मंहिष्ठमुभयाविनम् ॥२॥

(हे स्तोतागण ! आप) सशक्त वृषभ (साँड़) के सदृश संघर्षशील जरारहित, शत्रुओं का विरोध और उनका संहार करने वाले, महान् दैविक और भौतिक ऐश्वर्यों के दाता इन्द्रदेव का ही स्तवन करे॥२॥

यच्चिद्धि त्वा जना इमे नाना हवन्त ऊतये ।
अस्माकं ब्रह्मेदमिन्द्र भूतु तेऽहा विश्वा च वर्धनम् ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! अपनी रक्षा के निमित्त यद्यपि सभी मनुष्य आपका आवाहन करते हैं, फिर भी हमारी स्तुतियाँ आपके गौरव को सतत बढ़ाती रहें॥३॥

वि तर्तूर्यन्ते मघवन्विपश्चितोऽर्यो विपो जनानाम् ।
उप क्रमस्व पुरुरूपमा भर वाजं नेदिष्ठमूतये ॥४॥

ऐश्वर्यवान्, ज्ञानी, श्रेष्ठ तथा मनुष्यों के पालक हे इन्द्रदेव ! आपकी अनुकम्पा से स्तोतागण समस्त विपत्तियों से बचे रहते हैं। आप हमारे निकट पधारें और पोषण के निमित्त विविध प्रकार के बल प्रदान करें॥४॥

महे चन त्वामद्रिवः परा शुल्काय देयाम् ।
न सहस्राय नायुताय वज्रिवो न शताय शतामघ ॥५॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! अत्यधिक धन मिलने पर भी आपको नहीं त्यागा जा सकता । हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! सौ हजार-दस हजार (किसी भी) कीमत पर आपकी भक्ति नहीं त्यागी जा सकती॥५॥

वस्याँ इन्द्रासि मे पितुरुत भ्रातुरभुञ्जतः ।
माता च मे छदयथः समा वसो वसुत्वनाय राधसे ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे जन्मदाता पिता की अपेक्षा अधिक धनवान् हैं। पालन न करने वाले भाई से भी अधिक धनवान् हैं। सबके पालनकर्ता इन्द्रदेव, आप हमारी माता के समतुल्य हैं। हम धन-धान्य से परिपूर्ण जीवन की कामना करते हैं। आप हमें महान् बनाएँ॥६॥

क्वेयथ क्वेदसि पुरुत्रा चिद्धि ते मनः ।
अलर्षि युध्म खजकृत्पुरंदर प्र गायत्रा अगासिषुः ॥७॥

विभिन्न स्थानों में मन को रमाने वाले, युद्ध कौशल में निपुण, शत्रुओं के नगरों को उजाड़ने वाले हे बलवान् इन्द्रदेव ! आप कहाँ गये थे? अब आप कहाँ हैं ? हमारे कुशल स्तोताओं द्वारा किये जा रहे सामगान को सुनने के लिए आप यज्ञ में पधारें॥७॥

प्रास्मै गायत्रमर्चत वावातुर्यः पुरंदरः ।
याभिः काण्वस्योप बर्हिरासदं यासद्वज्री भिनत्पुरः ॥८॥

उपासकों पर कृपा करने वाले तथा रिपुओं की पुरियों को ध्वस्त करने वाले, इन्द्रदेव की गायत्री छन्दके द्वारा प्रार्थना करें। जिन स्तुतियों से प्रसन्न होकर कण्व पुत्रों के यज्ञ में पधारकर उन्होंने रिपुओं की पुरियों को वज्र से तोड़ा था, उन्हीं ऋचाओं से उनकी प्रार्थना करें॥८॥

ये ते सन्ति दशग्विनः शतिनो ये सहस्रिणः ।
अश्वासो ये ते वृषणो रघुद्रुवस्तेभिर्नस्तूयमा गहि ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! आप अपने सैकड़ों हजारों योजन तक दौड़ने वाले शक्तिशाली तथा वेगवान् अश्वों द्वारा हमारे पास शीघ्र पधारें॥९॥

आ त्वद्य सबर्दुघां हुवे गायत्रवेपसम् ।
इन्द्रं धेनुं सुदुघामन्यामिषमुरुधारामरंकृतम् ॥१०॥

इन्द्रदेव की प्रसन्नता के लिए हम, सुगमता से दुहीं जाने योग्य, सबको दुग्ध (पोषण) प्रदान करने वाली गौ की तरह, अन्य प्रकार के अन्न (पोषण) प्रदान करने वाली, अनेकों धाराओं से युक्त गायत्री रूपी धेनु (वाणी-स्तुति) का आवाहन (उच्चारण करते हैं॥१०॥

यत्तुदत्सूर एतशं वङ्कू वातस्य पर्णिना ।

वहत्कुत्समार्जुनेयं शतक्रतुः त्सरद्गन्धर्वमस्तृतम् ॥११॥

जब सूर्यदेव ने वायु की तरह वक्र (आड़ी, तिरछी किसी भी दिशा में चल पड़ने वाली) गति वाले 'एतश' को व्यथित किया, तब शतक्रतु (सैकड़ों यज्ञ कर्म करने वाले) इन्द्रदेव ने आर्जनेय (अर्जुन, जो कुटिल नहीं है उससे उत्पन्न) कुत्स को साथ लेकर नष्ट न होने वाले गंधर्व (सूर्य) पर छद्म रूप से आक्रमण किया॥११॥

य ऋते चिदभिश्रिषः पुरा जत्रुभ्य आतृदः ।
संधाता संधिं मघवा पुरूवसुरिष्कर्ता विह्रुतं पुनः ॥१२॥

जो इन्द्रदेव हँसुली (गले से नीचे की हड्डी) को रक्त निकलने से पूर्व संधानद्रव्य के बिना ही जोड़ देते हैं, (जो कठिनतम कार्यों को सुगमता से सम्पन्न कर देते हैं), महान् धन के स्वामी वे इन्द्रदेव छिन्न-भिन्न होने वालों को पुन: जोड़ (एकत्रकर) देते हैं॥१२॥

मा भूम निष्ट्या इवेन्द्र त्वदरणा इव ।
वनानि न प्रजहितान्यद्रिवो दुरोषासो अमन्महि ॥१३॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी कृपा से हमारा पतन न हो और न ही हम दुःखी हों । पतझड़ में शाखाविहीन वृक्षों के समान हम संतानरहित न हों ।

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! हम अपने घरों में सुरक्षित रहकर आपकी स्तुति करते हैं॥१३॥

अमन्महीदनाशवोऽनुग्रासश्च वृत्रहन् ।
सकृत्सु ते महता शूर राधसा अनु स्तोमं मुदीमहि ॥१४॥

हे वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ! हम हड़बड़ाहट तथा क्रोधरहित होकर आपका स्तवन करें । हे वीर इन्द्रदेव ! आपके निमित्त हम भले ही जीवन में एक बार ही यज्ञ करें, पर प्रचुर धन-धान्य से सम्पन्न होकर करें॥१४॥

यदि स्तोमं मम श्रवदस्माकमिन्द्रमिन्दवः ।
तिरः पवित्रं ससृवांस आशवो मन्दन्तु तुग्र्यावृधः ॥१५॥

यदि वे इन्द्रदेव हमारी स्तुति को सुनें, तो हम उत्साह प्रदान करने वाला, पवित्र होने वाला तथा जल से निकलकर बढ़ने वाला सोमरस समर्पित करके उन्हें हर्षित करें॥१५॥

आ त्वद्य सधस्तुतिं वावातुः सख्युरा गहि ।
उपस्तुतिर्मघोनां प्र त्वावत्वधा ते वश्मि सुष्टुतिम् ॥१६॥

हे इन्द्रदेव ! आप अपने सेवा भावी मित्र के साथ हमारी तथा दूसरे धनवानों की स्तुतियों को सुनकर आज हमारे निकट आएँ । हम आपकी विधिवत् प्रार्थना करना चाहते हैं॥१६॥

सोता हि सोममद्रिभिरेमेनमप्सु धावत ।
गव्या वस्त्रेव वासयन्त इन्नरो निर्धुक्षन्वक्षणाभ्यः ॥१७॥

हे ऋत्विज्ञो ! पत्थरों से कूटकर छाने हुए सोमरस को (वसतीवरी नामक) जल में मिश्रित करें । पृथ्वी को बादलों से आच्छादित करते हुए वायुदेव नदियों के निमित्तं पानी को बरसाते हैं॥१७॥

अध ज्मो अध वा दिवो बृहतो रोचनादधि ।
अया वर्धस्व तन्वा गिरा ममा जाता सुक्रतो पृण ॥१८॥

हे इन्द्रदेव ! उत्तम यज्ञ के आधार पृथ्वी एवं द्युलोक में आप अपनी आभा का विस्तार करें और अपनी प्रेरणा से हमारे सहयोगियों को पोषण प्रदान करें॥१८॥

इन्द्राय सु मदिन्तमं सोमं सोता वरेण्यम् ।
शक्र एणं पीपयद्विश्वया धिया हिन्वानं न वाजयुम् ॥१९॥

हे स्तोताओ! आप अत्यन्त हर्ष प्रदायक तथा महान् सोमरस इन्द्रदेव के निमित्त तैयार करें, जिससे वे (इन्द्रदेव) अपने सम्पूर्ण विवेक से स्तवन करने वाले तथा अन्न प्राप्ति की कामना करने वाले याजकों की इच्छा को पूर्ण करें॥१९॥

मा त्वा सोमस्य गल्दया सदा याचन्नहं गिरा ।
भूर्णिं मृगं न सवनेषु चुक्रुधं क ईशानं न याचिषत् ॥२०॥

सिंह के समान महान् पराक्रमी भरण-पोषण करने में समर्थ हे इन्द्रदेव ! यज्ञ में सोमरस प्रदान करते हुए, विजयिनी स्तुतियों द्वारा हम निरन्तर आपसे याचना करते हैं। हम क्रोध के पात्र कदापि नहीं हैं; क्योंकि कौन ऐसा व्यक्ति है, जो अपने अधिपति से याचना नहीं करता॥२०॥

मदेनेषितं मदमुग्रमुग्रेण शवसा ।
विश्वेषां तरुतारं मदच्युतं मदे हि ष्मा ददाति नः ॥२१॥

प्रसन्नतापूर्वक तैयार किए हुए शक्तिशाली तथा हर्ष प्रदायक इस सोमरस का पान करके इन्द्रदेव महान् शक्ति से सम्पन्न हों । वे समस्त रिपुओं के मद को चूर करके उनका विनाश करने वाली सन्तान हमें प्रदान करें॥२१॥

शेवारे वार्या पुरु देवो मर्ताय दाशुषे ।
स सुन्वते च स्तुवते च रासते विश्वगूर्तो अरिष्टुतः ॥२२॥

समस्त विश्व के पालक इन्द्रदेव रिषुओं द्वारा भी प्रशंसित होते हैं। वे सत्कर्म करने वाले, दान करने वाले, सोम अभिषव करने वाले तथा स्तुति करने वाले मनुष्यों को प्रचुर सम्पत्ति प्रदान करते हैं॥२२॥

एन्द्र याहि मत्स्व चित्रेण देव राधसा ।
सरो न प्रास्युदरं सपीतिभिरा सोमेभिरुरु स्फिरम् ॥२३॥

महान् तेजस्वी हे इन्द्रदेव ! आप यहाँ पधारें और हमें इच्छित धन प्रदान करके हर्षित करें । मरुद्गणों के साथ सोमरस पीकर अपने उदर को पूर्णरूपेण भर लें॥२३॥

आ त्वा सहस्रमा शतं युक्ता रथे हिरण्यये ।
ब्रह्मयुजो हरय इन्द्र केशिनो वहन्तु सोमपीतये ॥२४॥

हे इन्द्रदेव ! स्वर्णिम रथ में जुड़ने वाले, स्तुति योग्य, लम्बे बालों वाले सैकड़ों हजारों घोड़े (वाला स्वर्णिम रथ) आपको सोमपान करने के लिए यहाँ (यज्ञस्थल पर) ले आएँ॥२४॥

आ त्वा रथे हिरण्यये हरी मयूरशेप्या ।

शितिपृष्ठा वहतां मध्वो अन्धसो विवक्षणस्य पीतये ॥२५॥

हे इन्द्रदेव ! हर्षदायी सोमरस का पान करने के लिए मयूरवर्ण तथा सफेद पीठ वाले घोड़े आपको स्वर्ण रथ पर बैठाकर यहाँ (यज्ञस्थल पर) ले आएँ॥२५॥

पिबा त्वस्य गिर्वणः सुतस्य पूर्वपा इव ।
परिष्कृतस्य रसिन इयमासुतिश्चारुर्मदाय पत्यते ॥२६॥

हे स्तुत्य इन्द्रदेव ! आप सर्वप्रथम इस शोधित-निष्पन्न सोमरस का पान करें। यह सोमरस अत्यधिक आह्लादवर्धक है॥२६॥

य एको अस्ति दंसना महाँ उग्रो अभि व्रतैः ।
गमत्स शिप्री न स योषदा गमद्धवं न परि वर्जति ॥२७॥

अपने महान् पराक्रम से अकेले ही शत्रुओं को परास्त करने वाले, अति उग्र तथा व्रत पालन के कारण सर्वश्रेष्ठ इन्द्रदेव हमारे पास पधारें । वे हमसे कभी भी दूर न हों, हमारे यज्ञ में आकर सदैव विद्यमान रहें॥२७॥

त्वं पुरं चरिष्ण्वं वधैः शुष्णस्य सं पिणक् ।
त्वं भा अनु चरो अध द्विता यदिन्द्र हव्यो भुवः ॥२८॥

हे प्रकाशमान इन्द्रदेव ! दूर तक पीछा करते हुए आपने शुष्ण (शोषक असुर) के चलते-फिरते आवास को अपने वज्र से ध्वस्त कर दिया। उसके बाद होताओं द्वारा आवाहन-योग्य आप दोनों (स्तोताओं एवं याजकों) से प्रशंसनीय हुए॥२८॥

मम त्वा सूर उदिते मम मध्यंदिने दिवः ।
मम प्रपित्वे अपिशर्वरे वसवा स्तोमासो अवृत्सत ॥२९॥

सबके पालक हे इन्द्रदेव ! सूर्योदय के समय, मध्याह्नकाल में दिन के अन्त में तथा रात्रि के प्रारम्भ में हमारे स्तवन आपको प्राप्त हों॥२९॥

स्तुहि स्तुहीदेते घा ते मंहिष्ठासो मघोनाम् ।
निन्दिताश्वः प्रपथी परमज्या मघस्य मेध्यातिथे ॥३०॥

(राजर्षि आसङ्ग का कथन) हे मेधातिथे ! हम आपको सबसे ज्यादा सम्पत्ति प्रदान करते हैं। हमारे बल से ही दूसरों को नीचा दिखाने वाले, अश्व तथा श्रेष्ठ आयुध आपको प्राप्त हुए हैं । अतः आप बार-बार स्तुति करें॥३०॥

आ यदश्वान्वनन्वतः श्रद्धयाहं रथे रुहम् ।

उत वामस्य वसुनश्चिकेतति यो अस्ति याद्वः पशुः ॥३१॥

(राजर्षि आसंग का कथन) हे मेधातिथे ! नम्रतापूर्वक श्रद्धा के साथ हमने आपके रथ को अश्वों के साथ नियोजित किया है । पशुधन से सम्पन्न यदुवंश में उत्पन्न हमने आपको बहुत-सा धन प्रदान किया है, इसलिए (हमारी) स्तुति करो॥३१॥

य ऋज्रा मह्यं मामहे सह त्वचा हिरण्यया ।
एष विश्वान्यभ्यस्तु सौभगासङ्गस्य स्वनद्रथः ॥३२॥

(मेधातिथि का कथन) जिन आसङ्ग ने मुझे सुवर्णमय आवरण सहित बहुत-सा धन प्रदान किया है, वे शब्दायमान रथ से युक्त होकर शत्रुओं के व्यापक धन-वैभव पर विजय प्राप्त करें॥३२॥

अध प्लायोगिरति दासदन्यानासङ्गो अग्ने दशभिः सहस्रैः ।
अधोक्षणो दश मह्यं रुशन्तो नळा इव सरसो निरतिष्ठन् ॥३३॥

हे अग्निदेव ! दस हजार गौओं को प्रयोग के पुत्र आसंग ने दान कर दिया, जिससे वे अन्य दानियों में सर्वोच्च हो गये । इसके अलावा हमें प्रदान किए गए दस हजार परिपुष्ट गोधन, सरोवर के तट से प्रादुर्भूत वेंत के पौधे की भाँति प्रचुर मात्रा में वृद्धि को प्रात हों॥३३॥

अन्वस्य स्थूरं ददृशे पुरस्तादनस्थ ऊरुरवरम्बमाणः ।
शश्वती नार्यभिचक्ष्याह सुभद्रमर्य भोजनं बिभर्षि ॥३४॥

(अङ्गिरस की पुत्री आसङ्ग की पत्नी शश्वती कहती हैं) हे स्वामिन् आपका शरीर हष्ट-पुष्ट हैं। आपका शक्तिशाली विशाल शरीर अति सुन्दर हैं, आप परम सौभाग्यशाली और सर्वश्रेष्ठ॥३४॥

# *सूक्त २*

ऋषि: १-४० मेघातिथि: काण्व; अंगीरस, प्रियमेधश्च, ४१-४२ मेधातिथि काण्व ।
देवता – इन्द्र:, ४१-३२ विभिन्दु:। छंद – गायत्री, २८ अनुष्टुप

इदं वसो सुतमन्धः पिबा सुपूर्णमुदरम् ।
अनाभयिन्नरिमा ते ॥१॥

भयभीत न होने वाले ऐश्वर्यवान् हे इन्द्रदेव ! आप अभिषुत सोमरस को ग्रहण करके पूर्णरूपेण तृप्त हों । आपको आनन्दित करने के लिए यह सोमरस अर्पित है॥१॥

नृभिर्धूतः सुतो अश्नैरव्यो वारैः परिपूतः ।
अश्वो न निक्तो नदीषु ॥२॥

जिस प्रकार घोड़े को जलाशय में धोकर स्वच्छ किया जाता है, उसी प्रकार याजकों द्वारा सोम (सोमलता को) स्वच्छ करके पत्थरों से कूटकर, छलनी से छानकर यह सोमरस तैयार किया गया है॥२॥

तं ते यवं यथा गोभिः स्वादुमकर्म श्रीणन्तः ।
इन्द्र त्वास्मिन्त्सधमादे ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! पुरोड़ाश की भाँति, गाय के दूध में मिलाकर शोधित यह मधुर सोमरस आपके लिए तैयार किया गया है। इस आनन्ददायी सोमपान के लिए हम आपका आवाहन करते हैं॥३॥

इन्द्र इत्सोमपा एक इन्द्रः सुतपा विश्वायुः ।
अन्तर्देवान्मर्त्यांश्च ॥४॥

देवों और मनुष्यों में केवल इन्द्रदेव ही सोमरस को पीने के अधिकारी हैं। सोमरस को पीने वाले इन्द्रदेव दीर्घजीवी हैं॥४॥

न यं शुक्रो न दुराशीर्न तृप्रा उरुव्यचसम् ।
अपस्पृण्वते सुहार्दम् ॥५॥

जिन इन्द्रदेव को सामान्य सोमरस, क्षीर से युक्त सोमरस तथा तृप्तकारी सोमरस रुष्ट नहीं करता (सन्तुष्ट करता है, उन विशाल तथा श्रेष्ठ हृदय वाले इन्द्रदेव की हम प्रार्थना करते हैं॥५॥

गोभिर्यदीमन्ये अस्मन्मृगं न व्रा मृगयन्ते ।

अभित्सरन्ति धेनुभिः ॥६॥

(जाल एवं वाद्ययंत्र लेकर) मृगों को जिस प्रकार शिकारी ढूंढते-फिरते हैं, उसी प्रकार हम ऋत्विक् और यजमान गौ दुग्ध और श्रेष्ठ स्तुतियों के साथ इन्द्रदेव को खोजते हैं॥६॥

त्रय इन्द्रस्य सोमाः सुतासः सन्तु देवस्य ।
स्वे क्षये सुतपाव्नः ॥७॥

यज्ञ मण्डप में इन्द्रदेव की तृप्ति (पीने) के लिए याजकगण तीनों समय (प्रातः, मध्याह्न, सायं) निचोड़े हुए सोमरस को तैयार रखें॥७॥

त्रयः कोशासः श्चोतन्ति तिस्रश्चम्वः सुपूर्णाः ।
समाने अधि भार्मन् ॥८॥

समान रूप से पोषण करने वाले अधिष्ठानों वाले यज्ञों में तीन कलशों से सोमरस टपकाया जाता है तथा तीन भरी हुई सुचियों (चमचा) से आहुति दी जाती है॥८॥

शुचिरसि पुरुनिःष्ठाः क्षीरैर्मध्यत आशीर्तः ।
दध्ना मन्दिष्ठः शूरस्य ॥९॥

हे सोम ! आप पवित्र हैं तथा अनेकों के अन्त:करण में विद्यमान रहते हैं। आप दुग्ध-दधि में मिलकर शूरवीर इन्द्रदेव को आनन्द प्रदान करते हैं॥९॥

इमे त इन्द्र सोमास्तीव्रा अस्मे सुतासः ।
शुक्रा आशिरं याचन्ते ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी तृप्ति के निमित्त हमारे द्वारा अभिषुत हुए तीखे तथा कषैले स्वाद वाला सोमरस दुग्धादि मिलाये जाने की आवश्यकता अनुभव करता है॥१०॥

ताँ आशिरं पुरोळाशमिन्द्रेमं सोमं श्रीणीहि ।
रेवन्तं हि त्वा शृणोमि ॥११॥

हे इन्द्रदेव ! आप ऐश्वर्यवान् हैं, अत: हमारे द्वारा प्रदान किये गये पुरोड़ाश तथा दूध मिले सोमरस का पान करके हमें ऐश्वर्य प्रदान करें॥११॥

हृत्सु पीतासो युध्यन्ते दुर्मदासो न सुरायाम् ।
ऊधर्न नग्ना जरन्ते ॥१२॥

जैसे सुरा पीने के बाद उन्मत्त लोग आपस में युद्ध करते हैं, वैसे ही हे इन्द्रदेव ! यह सोमरस आपके हृदय में युद्ध (मन्थन करता है । जिस प्रकार दुग्ध से युक्त थनों वाली गाय की लोग प्रशंसा करते हैं, उसी प्रकार प्रार्थना करने वाले आपकी प्रशंसा करते हैं॥१२॥

रेवाँ इद्रेवतः स्तोता स्यात्त्वावतो मघोनः ।
प्रेदु हरिवः श्रुतस्य ॥१३॥

हे विभूतिवान् इन्द्रदेव ! आपकी स्तुति करने वाला निश्चय ही धन प्राप्त करता है । आपका उपासक सभी ऐश्वर्यों से युक्त होता है॥१३॥

उक्थं चन शस्यमानमगोररिरा चिकेत ।
न गायत्रं गीयमानम् ॥१४॥

स्तुति न करने वाले (आस्था हीनों) के इन्द्रदेव शत्रु हैं । स्तोताओं द्वारा पठित स्तोत्रों को वे भली-भाँति जानते हैं। वे सामवेद गायक (उद्गाता) के गायन को भी सुनते और समझते हैं॥१४॥

मा न इन्द्र पीयत्नवे मा शर्धते परा दाः ।
शिक्षा शचीवः शचीभिः ॥१५॥

हे इन्द्रदेव ! हिंसक शत्रुओं और उपेक्षित करने वालों के आश्रय में हमें न छोड़े। अपने बल से हमें अभीष्ट ऐश्वर्य प्रदान करें॥१५॥

वयमु त्वा तदिदर्था इन्द्र त्वायन्तः सखायः ।
कण्वा उक्थेभिर्जरन्ते ॥१६॥

हे इन्द्रदेव ! आपसे मित्रता करने के इच्छुक हम याजकगण (आपके स्तोता) तथा सभी कण्ववंशीय हमारे पुत्र-पौत्रादि स्तोत्रों द्वारा आपकी स्तुति करते हैं॥१६॥

न घेमन्यदा पपन वज्रिन्नपसो नविष्टौ ।
तवेदु स्तोमं चिकेत ॥१७॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! यज्ञ कर्म में आपकी स्तुति करने के अतिरिक्त हम अन्य दूसरे की स्तुति नहीं करेंगे । हम स्तोत्रों द्वारा आपकी ही स्तुति करना जानते हैं अर्थात् आपकी ही स्तुति करते हैं॥१७॥

इच्छन्ति देवाः सुन्वन्तं न स्वप्नाय स्पृहयन्ति ।
यन्ति प्रमादमतन्द्राः ॥१८॥

यज्ञ के निमित्त सदैव सोमरस तैयार करने वाले साधकों से देवगण प्रसन्न रहते हैं, उन्हीं की कामना करते हैं । आलस्यरहित देवगण आनन्द प्रदान करने वाले सोमरस को सदा पान करते हैं॥१८॥

ओ षु प्र याहि वाजेभिर्मा हृणीथा अभ्यस्मान् ।
महाँ इव युवजानिः ॥१९॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार विचारशील पुरुष अपनी पत्नी पर क्रोध नहीं करते, उसी प्रकार आप भी हमारे ऊपर क्रोधित न हों। आप अपने घोड़ों के द्वारा हमारे इस यज्ञ में पधारें॥१९॥

मो ष्वद्य दुर्हणावान्त्सायं करदारे अस्मत् ।
अश्रीर इव जामाता ॥२०॥

शत्रुओं पर असह्य प्रहार करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप हमारे निकट शीघ्र ही आएँ । श्रीहीन तथा बार-बार बुलाए जाने वाले, किन्तु फिर भी शीघ्र न आने वाले अहंकारी दामाद की तरह सायं आने में आप विलम्ब न करें॥२०॥

विद्मा ह्यस्य वीरस्य भूरिदावरीं सुमतिम् ।
त्रिषु जातस्य मनांसि ॥२१॥

प्रचुर सम्पत्ति प्रदान करने वाली, शूरवीर इन्द्रदेव की बुद्धि तथा तीनों लोकों में विख्यात उनके मानस को हम भली-भाँति जानते हैं॥२१॥

आ तू षिञ्च कण्वमन्तं न घा विद्म शवसानात् ।
यशस्तरं शतमूतेः ॥२२॥

हे याजको ! कण्ववंशीय ऋषि इन्द्रदेव को सोमरस से अभिषिंचित करें । अत्यन्त शक्तिशाली तथा अनेकों । प्रकार के रक्षण-साधनों से सम्पन्न इन्द्रदेव से अधिक कीर्तिमान् देवता के बारे में हम कुछ भी नहीं जानते हैं॥२२॥

ज्येष्ठेन सोतरिन्द्राय सोमं वीराय शक्राय ।
भरा पिबन्नर्याय ॥२३॥

सोमरस तैयार करने वाले है याजको ! आप सबसे अधिक महान् , पराक्रमी, बलशाली तथा श्रेष्ठ इन्द्रदेव को सोमरस प्रदान करें, जिसका कि वे प्रसन्नतापूर्वक पान करें॥२३॥

यो वेदिष्ठो अव्यथिष्वश्वावन्तं जरितृभ्यः ।
वाजं स्तोतृभ्यो गोमन्तम् ॥२४॥

जिन याजकों के यज्ञ मण्डप में इन्द्रदेव पधारते हैं, वे कभी भी दुःखीं नहीं होते। वे देव प्रार्थना करने वालों को अश्व, गौ आदि धन प्रदान करते हैं॥२४॥

पन्यम्पन्यमित्सोतार आ धावत मद्याय ।
सोमं वीराय शूराय ॥२५॥

हे सोम शोधन में रत याजको ! पराक्रमी शूरवीर इन्द्रदेव के लिए आनन्ददायी सोमरस अर्पित करो॥२५॥

पाता वृत्रहा सुतमा घा गमन्नारे अस्मत् ।
नि यमते शतमूतिः ॥२६॥

सैकड़ों साधनों से (हर प्रकार से) हमारी रक्षा करने वाले, वृत्रासुर का हनन करने वाले सोमपायी हे इन्द्रदेव ! आप हमारे यज्ञ में अवश्य पधारें और शत्रुओं को हमसे दूर करें॥२६॥

एह हरी ब्रह्मयुजा शग्मा वक्षतः सखायम् ।
गीर्भिः श्रुतं गिर्वणसम् ॥२७॥

संकेतमात्र से रथ में नियोजित होने वाले सुखवर्धक दोनों अश्व, सबको आश्रय प्रदान करने वाले, मित्ररूप इन्द्रदेव को, स्तुति गान के साथ यज्ञ मण्डप पर लेकर पहुँचें॥२७॥

स्वादवः सोमा आ याहि श्रीताः सोमा आ याहि ।
शिप्रिन्नृषीवः शचीवो नायमच्छा सधमादम् ॥२८॥

हे सौन्दर्यवान् , ज्ञानवान् तथा वीर्यवान् इन्द्रदेव ! आप यहाँ पधारें । सोमरस अभिषुत होकर तैयार हो चुका है। आपके उपासक आपको बुला रहे हैं। अत: आप यहाँ पधारें॥२८॥

स्तुतश्च यास्त्वा वर्धन्ति महे राधसे नृम्णाय ।
इन्द्र कारिणं वृधन्तः ॥२९॥

हे कर्मशील इन्द्रदेव ! स्तवन करने वाले समस्त साधक मन्त्रों से आपको समृद्ध करते हैं। आप स्तुतियों को ग्रहण करके हमें श्रेष्ठ तथा हितकारी धन प्रदान करें॥२९॥

गिरश्च यास्ते गिर्वाह उक्था च तुभ्यं तानि ।
सत्रा दधिरे शवांसि ॥३०॥

उक्थ (स्तुति) मंत्रों के साथ आवाहन योग्य तथा प्रशंसनीय हे इन्द्रदेव ! आपके निमित्त की जाने वाली समस्त स्तुतियाँ एक साथ मिलकर आप में बल उत्पन्न करती हैं॥३०॥

एवेदेष तुविकूर्मिर्वाजाँ एको वज्रहस्तः ।
सनादमृक्तो दयते ॥३१॥

हे इन्द्रदेव ! आप विविध प्रकार के श्रेष्ठ कर्म करने वाले तथा अद्वितीय वज्रधारी हैं। आप रिपुओं के लिए अजेय हैं तथा यजमान को सदैव अन्नादि प्रदान करते हैं॥३१॥

हन्ता वृत्रं दक्षिणेनेन्द्रः पुरू पुरुहूतः ।
महान्महीभिः शचीभिः ॥३२॥

अपनी कुशलता द्वारा(दायें हाथ से) वृत्र को मारने तथा विराट् शक्तियों के कारण इन्द्रदेव महान् हैं । सर्वव्यापी इन्द्रदेव को समस्त प्राणी अपनी रक्षा के लिए बुलाते हैं॥३२॥

यस्मिन्विश्वाश्चर्षणय उत च्यौत्ना ज्रयांसि च ।
अनु घेन्मन्दी मघोनः ॥३३॥

जिन इन्द्रदेव में विश्व के समस्त प्राणी तथा सम्पूर्ण बल स्थित हैं, ऐसे ऐश्वर्यवान् देव को निश्चित रूप से प्रसन्न करना चाहिए॥३३॥

एष एतानि चकारेन्द्रो विश्वा योऽति शृण्वे ।
वाजदावा मघोनाम् ॥३४॥

जिन इन्द्रदेव को सभी लोग अत्यन्त बलशाली तथा शूरवीर के रूप में जानते हैं, उन्होंने ही ये सब पराक्रम पूर्ण कर्म सम्पन्न किये हैं। सभी ऐश्वर्यवानों को अन्न प्रदान करने वाले वे ही हैं॥३४॥

प्रभर्ता रथं गव्यन्तमपाकाच्चिद्यमवति ।
इनो वसु स हि वोळ्हा ॥३५॥

सभी के पोषक इन्द्रदेव, वेगपूर्वक दौड़ते हुए अपने रथ की , रिपुओं से रक्षा करते हैं। वे इन्द्रदेव सबके स्वामी होकर धन को प्राप्त करते हैं॥३५॥

सनिता विप्रो अर्वद्भिर्हन्ता वृत्रं नृभिः शूरः ।
सत्योऽविता विधन्तम् ॥३६॥

ज्ञानी इन्द्रदेव अपने अश्वों से सभी गन्तव्य स्थलों पर पहुँच जाते हैं तथा शूरवीर नेताओं (मरुद्गणों) की सहायता से वृत्र का वध करते हैं। वे सत्यरूप इन्द्रदेव अपने सेवकों की रक्षा करते हैं॥३६॥

यजध्वैनं प्रियमेधा इन्द्रं सत्राचा मनसा ।
यो भूत्सोमैः सत्यमद्वा ॥३७॥

(ऋषि मेध का स्वयं के प्रति अथवा अन्तः चेतना को अपनी प्रिय मेधा से कथन) हे प्रियमेध ! सोमरस पान करके इन्द्रदेव वास्तविक शक्ति से सम्पन्न होते हैं । अत: मनोयोग से उनके निमित्त यज्ञ करो॥३७॥

गाथश्रवसं सत्पतिं श्रवस्कामं पुरुत्मानम् ।
कण्वासो गात वाजिनम् ॥३८॥

हे कण्वपुत्रो ! सज्जनों का पालन करने वाले, कीर्ति की कामना करने वाले, दृढ़ आत्मबल वाले तथा जिनके यश का गान सर्वत्र होता है, ऐसे इन्द्रदेव की आप स्तुति करें॥३८॥

य ऋते चिद्गास्पदेभ्यो दात्सखा नृभ्यः शचीवान् ।
ये अस्मिन्काममश्रियन् ॥३९॥

जो देवगण इन (इन्द्रदेव) पर अपनी कामनाएँ आश्रित करते हैं, उन्हें श्रेष्ठ कर्म वाले, सखारूप इन्द्रदेव ने पद चिह्न न प्राप्त होने पर भी गौएँ (दिव्य वाणियाँ) खोजकर प्रदान कीं॥३९॥

इत्था धीवन्तमद्रिवः काण्वं मेध्यातिथिम् ।
मेषो भूतोऽभि यन्नयः ॥४०॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आपने इस प्रकार स्तुति करते हुए, ज्ञानी कण्वपुत्र मेधातिथि को मेषरूप में (अनुगमन करने वाले के रूप में प्राप्त किया है॥४०॥

शिक्षा विभिन्दो अस्मै चत्वार्ययुता ददत् ।
अष्टा परः सहस्रा ॥४१॥

हे विभिन्दो ! आपने इस ऋषि के लिए चालीस हजार की संख्या में धन प्रदान किया। इसके अतिरिक्त पुनः आठ सहस्र की संख्या में धन प्रदान किया॥४१॥

उत सु त्ये पयोवृधा माकी रणस्य नप्त्या ।
जनित्वनाय मामहे ॥४२॥

जल की वृष्टि करने वाले, सबका निर्माण करने वाले, याजकों को ऊँचा उठाने वाले, पृथ्वी तथा द्युलोक के पूर्वोक्त धन प्रादुर्भूत करने के लिए हम स्तुति करते हैं॥४२॥

# सूक्त ३

ऋषि: १-४० मेघातिथि: काण्व ।
देवता – इन्द्र:, २१-२४ गायत्री। छंद – प्रगाथ, २१ अनुष्टुप, २२-२३ गायत्री, २४ अनुष्टुप

पिबा सुतस्य रसिनो मत्स्वा न इन्द्र गोमतः ।
आपिर्नो बोधि सधमाद्यो वृधेऽस्माँ अवन्तु ते धियः ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! गौ के दूध में मिश्रित रस रूप में हमारे द्वारा शोधित किए गये सोमरस का आप पान करें और प्रफुल्लित हों । संगठित रूप से किये गए कार्यों में हमारे सहचर बनकर हमें उन्नतशील मार्ग दिखाएँ। आपकी बुद्धि हमारा संरक्षण करने वाली बने॥१॥

भूयाम ते सुमतौ वाजिनो वयं मा नः स्तरभिमातये ।
अस्माञ्चित्राभिरवतादभिष्टिभिरा नः सुम्नेषु यामय ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी अनुकूल उत्तम बुद्धि द्वारा प्रेरित होकर हम सामर्थ्य प्राप्त करें । शत्रु हमें नष्ट न करें । अपने सामर्थ्यशाली रक्षण-साधनों से हमारी रक्षा करते हुए सुख-समृद्धि बढ़ाएँ॥२॥

इमा उ त्वा पुरूवसो गिरो वर्धन्तु या मम ।
पावकवर्णाः शुचयो विपश्चितोऽभि स्तोमैरनूषत ॥३॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! हमारी स्तुतियाँ आपकी कीर्ति को बढ़ाएँ । अग्नि के समान प्रखर, पवित्रात्मा और विद्वान् साधक स्तोत्रों द्वारा आपकी प्रार्थना करते हैं॥३॥

अयं सहस्रमृषिभिः सहस्कृतः समुद्र इव पप्रथे ।
सत्यः सो अस्य महिमा गृणे शवो यज्ञेषु विप्रराज्ये ॥४॥

ये इन्द्रदेव हजारों ऋषियों के स्तुतिबल को पाकर प्रख्यात हुए हैं। इससे समुद्र की तरह विस्तृत हुए हैं। इनकी सत्यनिष्ठा और शक्ति प्रसिद्ध है । यज्ञों में स्तोत्रगान करते हुए इनका सम्मान किया जाता है॥४॥

इन्द्रमिद्देवतातय इन्द्रं प्रयत्यध्वरे ।
इन्द्रं समीके वनिनो हवामह इन्द्रं धनस्य सातये ॥५॥

दैवी प्रयोजनों के लिए किये गये यज्ञों में हम याजकगण जिस प्रकार यज्ञ के प्रारम्भ और उसकी समाप्ति के समय इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं, वैसे ही धन प्राप्ति की कामना से भी इन्द्रदेव को आवाहित करते हैं॥५॥

इन्द्रो मह्ना रोदसी पप्रथच्छव इन्द्रः सूर्यमरोचयत् ।
इन्द्रे ह विश्वा भुवनानि येमिर इन्द्रे सुवानास इन्दवः ॥६॥

इन्द्रदेव ने अपनी सामर्थ्य से द्युलोक और पृथ्वी को विस्तृत किया। इन्द्रदेव ने ही सूर्यदेव को आलोकयुक्त किया । इन्द्रदेव ने ही सभी लोकों को आश्रय प्रदान किया । ऐसे इन्द्रदेव के लिए ही यह सोमरस समर्पित हैं॥६॥

अभि त्वा पूर्वपीतय इन्द्र स्तोमेभिरायवः ।
समीचीनास ऋभवः समस्वरन्रुद्रा गृणन्त पूर्व्यम् ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! प्राचीन काल से ही भुगणों तथा रुद्रों द्वारा आपकी स्तुति की जाती रही है । याजकगण स्तुति करते हुए सोमपान के लिए सर्वप्रथम आपको ही बुलाते हैं॥७॥

अस्येदिन्द्रो वावृधे वृष्ण्यं शवो मदे सुतस्य विष्णवि ।
अद्या तमस्य महिमानमायवोऽनु ष्टुवन्ति पूर्वथा ॥८॥

वे इन्द्रदेव सोमरस का सेवन करके अत्यधिक आनन्दित होकर यजमान के वीर्य और बल को बढ़ाते हैं। अतएव स्तोतागण आज भी इन्द्रदेव की महिमा का वर्णन करते हैं॥८॥

तत्त्वा यामि सुवीर्यं तद्ब्रह्म पूर्वचित्तये ।
येना यतिभ्यो भृगवे धने हिते येन प्रस्कण्वमाविथ ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! आपने जिस शक्ति से यतियों तथा भृगुऋषि को धन प्रदान किया था तथा जिस ज्ञान से ज्ञानियों (प्रस्कण्व) की रक्षा की थी, उस ज्ञान तथा बल की प्राप्ति के लिए सबसे पहले हम आपसे प्रार्थना करते हैं॥९॥

येना समुद्रमसृजो महीरपस्तदिन्द्र वृष्णि ते शवः ।
सद्यः सो अस्य महिमा न संनशे यं क्षोणीरनुचक्रदे ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! जिस शक्ति से आपने समुद्र तथा विशाल नदियों का निर्माण किया है; वह शक्ति हमारे अभीष्ट को पूर्ण करने वाली है। आपकी जिस महिमा का अनुगमन द्यु तथा पृथ्वीलोक करते हैं, उसका कोई पारावार नहीं॥१०॥

शग्धी न इन्द्र यत्त्वा रयिं यामि सुवीर्यम् ।
शग्धि वाजाय प्रथमं सिषासते शग्धि स्तोमाय पूर्व्य ॥११॥

हे इन्द्रदेव ! जिस श्रेष्ठ पराक्रम से युक्त ऐश्वर्य की हम आपसे याचना करते हैं, आप उसे प्रदान करें । अन्न के इच्छुक मनुष्यों को सबसे पहले अन्न प्रदान करें । हे इन्द्रदेव ! आप स्तुतिकर्ता को भी धन-धान्य प्रदान करें॥११॥

शग्धी नो अस्य यद्ध पौरमाविथ धिय इन्द्र सिषासतः ।
शग्धि यथा रुशमं श्यावकं कृपमिन्द्र प्रावः स्वर्णरम् ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! जिस शक्ति से आपने पुरु के पुत्रों की रक्षा की थीं, उसी शक्ति को विवेक से काम करने वाले लोग प्राप्त करें। जिस शक्ति से आपने तेजस्वी धन दाताओं तथा रुशम, श्यावक और कृप ( इस नाम के व्यक्तियों अथवा रोग शामकों, विद्वानों तथा कृपालुओं) की रक्षा की थी, उसी शक्ति से हमें भी सुरक्षा प्रदान करें॥१२॥

कन्नव्यो अतसीनां तुरो गृणीत मर्त्यः ।
नही न्वस्य महिमानमिन्द्रियं स्वर्गृणन्त आनशुः ॥१३॥

प्राचीनकाल से ही स्तुति करने वाले ऋषिगण जब उन इन्द्रदेव की महिमा-मण्डित शक्ति को नहीं जान सके, तो आज के स्तोता कौन सी नवीन स्तुति करें ?॥१३॥

कदु स्तुवन्त ऋतयन्त देवत ऋषिः को विप्र ओहते ।
कदा हवं मघवन्निन्द्र सुन्वतः कदु स्तुवत आ गमः ॥१४॥

हे इन्द्रदेव ! ऐसे कौन से देव हैं, जो आपके निमित्त यज्ञ करते हैं तथा कौन से ऋषिज्ञानी हैं, जो आपकी स्तुति करके कृपा प्राप्त करते हैं? हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप सोमरस अभिघुत करने वालों की स्तुति सुनकर उनके पास कब जाते हैं?॥१४॥

उदु त्ये मधुमत्तमा गिरः स्तोमास ईरते ।
सत्राजितो धनसा अक्षितोतयो वाजयन्तो रथा इव ॥१५॥

(जीवन-संग्राम में) वास्तविक विजय दिलाने वाले, ऐश्वर्य प्राप्ति के माध्यम, सतत रक्षा करने वाले मधुर स्तोत्र, युद्ध के उपकरण रथ के समान कहे जाते हैं॥१५॥

कण्वा इव भृगवः सूर्या इव विश्वमिद्धीतमानशुः ।
इन्द्रं स्तोमेभिर्महयन्त आयवः प्रियमेधासो अस्वरन् ॥१६॥

कण्व गोत्रोत्पन्न ऋषियों की भाँति स्तुति करते हुए भृगुगोत्रोत्पन्न ऋषियों ने इन्द्रदेव को चारों ओर से उसी प्रकार घेर लिया, जिस प्रकार सूर्य रश्मियाँ इस संसार में चारों ओर फैल जाती हैं। ऐसे महान् इन्द्रदेव का प्रियमेध ने स्तुति करते हुए पूजन किया॥१६॥

युक्ष्वा हि वृत्रहन्तम हरी इन्द्र परावतः ।
अर्वाचीनो मघवन्त्सोमपीतय उग्र ऋष्वेभिरा गहि ॥१७॥

वृत्रासुर के विनाश में सक्षम, रथ पर आसीन, ऐश्वर्य सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! आप शक्ति-सम्पन्न होकर मरुद्गणों के साथ सुदूर प्रदेश (द्युलोक) से हमारे यज्ञ में पधारें॥१७॥

इमे हि ते कारवो वावशुर्धिया विप्रासो मेधसातये ।
स त्वं नो मघवन्निन्द्र गिर्वणो वेनो न शृणुधी हवम् ॥१८॥

हे प्रार्थनीय इन्द्रदेव ! मेधा जागरण के निमित्त, स्तोतागण विवेकपूर्वक आपकी साधना करते हैं । हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप आतुर व्यक्ति की भाँति हमारी स्तुतियों को स्वीकार करें॥१८॥

निरिन्द्र बृहतीभ्यो वृत्रं धनुभ्यो अस्फुरः ।
निरर्बुदस्य मृगयस्य मायिनो निः पर्वतस्य गा आजः ॥१९॥

हे इन्द्रदेव ! आपने अपने विशाल धनुष से वृत्र, मायावी अर्बुद तथा मृगय नामक असुरों का वध किया । इसके अलावा पर्वतों द्वारा छिपाई हुई गौओं (बादलों में छिपी जल धाराओं) को मुक्त किया॥१९॥

निरग्नयो रुरुचुर्निरु सूर्यो निः सोम इन्द्रियो रसः ।
निरन्तरिक्षादधमो महामहिं कृषे तदिन्द्र पौंस्यम् ॥२०॥

हे इन्द्रदेव ! जब आपने आकाश से विशाल अहि को नीचे धकेलकर अपने शौर्य को प्रकट किया, तब अग्नियाँ (यज्ञादि) और सूर्य प्रकाशित होने लगे तथा आपके प्रिय सोम भी चमकने लगे॥२०॥

यं मे दुरिन्द्रो मरुतः पाकस्थामा कौरयाणः ।
विश्वेषां त्मना शोभिष्ठमुपेव दिवि धावमानम् ॥२१॥

कुरयाण(कर्मनिष्ठ) के पुत्र पाकस्थामा (परिपक्व बलयुक्त) ने हमको वहीं प्रदान किया, जो इन्द्र और मरुद्गणों ने प्रदान किया था। वह ऐश्वर्य सभी धनों में अत्यधिक सुशोभित होता हुआ, आलोकित होने वाले गतिमान् सूर्य के सदृश सुशोभित होता है॥२१॥

रोहितं मे पाकस्थामा सुधुरं कक्ष्यप्राम् ।
अदाद्रायो विबोधनम् ॥२२॥

पाकस्थामा (परिपक्व बलयुक्त) ने हमें श्रेष्ठ धुरी (धारण में समर्थ) से योजित, रोहित (लाल अथवा वर्धमान-गतिशील अश्व) प्रदान किया तथा ज्ञानयुक्त ऐश्वर्य भी दिया॥२२॥

यस्मा अन्ये दश प्रति धुरं वहन्ति वह्नयः ।
अस्तं वयो न तुग्र्यम् ॥२३॥

वय (अश्व, पक्षी या आयुष्य) ने जिस प्रकार तुग्र (तेजस्वी परमात्म चेतना) के पुत्र (भुज्यु नामक व्यक्ति अथवा योगयोग्य जीव) को उसके आवास (ठिकाने) तक पहुँचाया, उसी प्रकार अन्य दस (वहनकर्ता अश्व, इन्द्रियाँ या प्राण-उपप्राण) धुरे (जीव चेतना के धारक शरीर) को (उसके लक्ष्य-आवास) तक ले जाते हैं॥२३॥

आत्मा पितुस्तनूर्वास ओजोदा अभ्यञ्जनम् ।
तुरीयमिद्रोहितस्य पाकस्थामानं भोजं दातारमब्रवम् ॥२४॥

आत्मरूप पिता का पुत्र पाकस्थामा श्रेष्ठ आवास देने वाला तथा शत्रुहन्ता हैं। ऐसे रोहित (आरोहणशील-प्रगतिशील) तेज को देने वाले की हम स्तुति करते हैं॥२४॥

# ऋग्वेद – अष्टम मंडल

## *सूक्त ४*

ऋषि: देवातिथि: काण्व ।
देवता – इन्द्र:, १५-१८ पूषा, १९-२१ कुरुङ। छंद – प्रगाथ

यदिन्द्र प्रागपागुदङ्न्यग्वा हूयसे नृभिः ।
सिमा पुरू नृषूतो अस्यानवेऽसि प्रशर्ध तुर्वशे ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! आप स्तोताओं द्वारा सहायता के लिए चारों ओर से आवाहित किये जाते हैं । शत्रुनाशक इन्द्रदेव ! 'अनु' और 'तुर्वश' के लिए आपको प्रार्थनापूर्वक बुलाया जाता है॥१॥

यद्वा रुमे रुशमे श्यावके कृप इन्द्र मादयसे सचा ।
कण्वासस्त्वा ब्रह्मभिः स्तोमवाहस इन्द्रा यच्छन्त्या गहि ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आप रुम, रुशम, श्यावक और कृप के लिए प्रसन्न किये जाते हैं । कण्व वंशीय ऋषिगण आपको विभिन्न स्तोत्रों से प्रभावित करने का प्रयास करते हैं। हे इन्द्रदेव ! आप यज्ञार्थ पधारें॥२॥

यथा गौरो अपा कृतं तृष्यन्नेत्यवेरिणम् ।
आपित्वे नः प्रपित्वे तूयमा गहि कण्वेषु सु सचा पिब ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! प्यासे गौर मृग जिस तरह पानी से भरे तालाब के निकट द्रुतगति से जाते हैं, उसी प्रकार आप हमारे सहचर बनकर यज्ञ में आयें और हम कण्वपुत्रों के यज्ञ में सोमपान कर तृप्त हों॥३॥

मन्दन्तु त्वा मघवन्निन्द्रेन्दवो राधोदेयाय सुन्वते ।
आमुष्या सोममपिबश्चमू सुतं ज्येष्ठं तद्दधिषे सहः ॥४॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! सोमयज्ञ सम्पन्न करने वाले साधकों को वैभव प्रदान करने के लिए सोमरस आपको आनन्दित करे । पात्र में रखे शोधित सोमरस को पीकर आप श्रेष्ठ बल से युक्त होते हैं॥४॥

प्र चक्रे सहसा सहो बभञ्ज मन्युमोजसा ।
विश्वे त इन्द्र पृतनायवो यहो नि वृक्षा इव येमिरे ॥५॥

अपनी शक्ति और तेज से इन्द्रदेव ने रिपुओं को वशीभूत करके उनके क्रोध और अहंकार को नष्ट किया । उसके पश्चात् उन्होंने सबको वृक्ष के सदृश जडवत् निष्क्रिय बना दिया॥५॥

सहस्रेणेव सचते यवीयुधा यस्त आनळुपस्तुतिम् ।
पुत्रं प्रावर्गं कृणुते सुवीर्ये दाश्नोति नमउक्तिभिः ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! जो व्यक्ति आपकी प्रार्थना करता है, उसे आप हजारों अस्त्र-शस्त्र प्रदान करते हैं । जो विनम्र भाव से आपको आहुति प्रदान करता है, वह व्यक्ति पराक्रमी तथा शत्रु-विध्वंसक पुत्र को प्राप्त करता है॥६॥

मा भेम मा श्रमिष्मोग्रस्य सख्ये तव ।
महत्ते वृष्णो अभिचक्ष्यं कृतं पश्येम तुर्वशं यदुम् ॥७॥

महान् बलशाली हे इन्द्रदेव ! आपकी मित्रता के प्रभाव से हम किसी से भयभीत न हों और न कभी थकें । उपासकों की कामना पूर्ति करने वाले हे देव ! आपके सत्कार्य प्रशंसनीय हैं। हम तुर्वश और यदु को भी प्रसन्नता की स्थिति में देखें॥७॥

सव्यामनु स्फिग्यं वावसे वृषा न दानो अस्य रोषति ।
मध्वा सम्पृक्ताः सारघेण धेनवस्तूयमेहि द्रवा पिब ॥८॥

सर्वशक्तिमान् हे इन्द्रदेव ! आप अपने बाँयें हाथ से (सरलता से सबको आश्रय देते हैं । नष्ट-भ्रष्ट करने वाले क्रूर शत्रु आपको कष्ट देने में सक्षम नहीं हैं । शहद की तरह मधुर दूध से युक्त सुखदायी

सोम आपके लिए प्रस्तुत है । शीघ्रता से यज्ञवेदी के समीप पधारें और सोमपान करें॥८॥

अश्वी रथी सुरूप इद्गोमाँ इदिन्द्र ते सखा ।
श्वात्रभाजा वयसा सचते सदा चन्द्रो याति सभामुप ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! मनुष्य जब आपको अपना मित्र बना लेता है, तब वह रथों से युक्त सौन्दर्यवान्, ऐश्वर्यवान् तथा धन-धान्य से सदैव पूर्ण रहता है । वह सदा श्रेष्ठ आभूषणों से सुसज्जित तथा सबको प्रसन्नता देने वाला होकर सभा गृहे आदि में जाता है॥९॥

ऋश्यो न तृष्यन्नवपानमा गहि पिबा सोमं वशाँ अनु ।
निमेघमानो मघवन्दिवेदिव ओजिष्ठं दधिषे सहः ॥१०॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! ऋश्य (दिखाई देने में सुन्दर) तृषित हिरण के सदृश आप सोमपात्र के सन्निकट आकर इच्छानुसार सोमपान करें । आप नित्य वर्षा करते हुए ओज से सम्पन्न हों॥१०॥

अध्वर्यो द्रावया त्वं सोममिन्द्रः पिपासति ।
उप नूनं युयुजे वृषणा हरी आ च जगाम वृत्रहा ॥११॥

बलवान् अश्वों वाले रथ पर आरूढ़, वृत्र-संहारक इन्द्रदेव का आगमन हो गया है । हे अध्वर्यो ! आप सोमरस पान के इच्छुक इन्द्रदेव के लिए शीघ्र ही सोमरस तैयार करें॥११॥

स्वयं चित्स मन्यते दाशुरिर्जनो यत्रा सोमस्य तृम्पसि ।
इदं ते अन्नं युज्यं समुक्षितं तस्येहि प्र द्रवा पिब ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! जिसके घर पर पधारकर आप सोमरस पान करके सन्तुष्ट होते हैं, वह दानी व्यक्ति अपने को श्रेष्ठ समझता है । हे इन्द्रदेव ! आपके निमित्त सोमरस रूप श्रेष्ठ आहार तैयार है, आप पधारकर उसका पान करें॥१२॥

रथेष्ठायाध्वर्यवः सोममिन्द्राय सोतन ।
अधि ब्रध्नस्याद्रयो वि चक्षते सुन्वन्तो दाश्वध्वरम् ॥१३॥

हे अध्वर्यो ! रथ पर आरूढ़ होने वाले इन्द्रदेव के निमित्त सोमरस को निचोड़े। सोमरस अभिषुत करने वाले ऊँचे स्थान पर विद्यमान पत्थरों से ज्ञात होता है कि योजकों द्वारा यज्ञ सम्पन्न किया जा रहा है॥१३॥

उप ब्रध्नं वावाता वृषणा हरी इन्द्रमपसु वक्षतः ।
अर्वाञ्चं त्वा सप्तयोऽध्वरश्रियो वहन्तु सवनेदुप ॥१४॥

अन्तरिक्ष में विचरण करने वाले दो शक्तिशाली घोड़े हमारे इस यज्ञ में इन्द्रदेव को ले आएँ । हे इन्द्रदेव ! यज्ञ की सेवा करने वाले एवं सदैव गतिशील रहने वाले घोड़े आपको इस यज्ञ में लाएँ॥१४॥

प्र पूषणं वृणीमहे युज्याय पुरूवसुम् ।
स शक्र शिक्ष पुरुहूत नो धिया तुजे राये विमोचन ॥१५॥

अनेकों द्वारा आहूत होने वाले हे पूषादेव ! आप बहुत ऐश्वर्यवान् तथा सबके पोषक हैं । हम श्रेष्ठ मित्रभाव से आपका आवाहन करते हैं। आप धन देकर तथा शत्रुओं को नष्ट करके विपत्ति से हमें मुक्ति प्रदान करें॥१५॥

सं नः शिशीहि भुरिजोरिव क्षुरं रास्व रायो विमोचन ।
त्वे तन्नः सुवेदमुस्रियं वसु यं त्वं हिनोषि मर्त्यम् ॥१६॥

संकट से छुड़ाने वाले हे पूषादेव ! आप हमारी मेधा को (नाई के) हाथ के छुरे के समान तीक्ष्ण करें तथा हमें ऐश्वर्य प्रदान करें । हे इन्द्रदेव ! जिस ऐश्वर्य को आप अन्य मनुष्यों के लिए प्रदान करते हैं, उस गौ रूप धन को हमें भी प्रदान करें॥१६॥

वेमि त्वा पूषन्नृञ्जसे वेमि स्तोतव आघृणे ।
न तस्य वेम्यरणं हि तद्वसो स्तुषे पज्राय साम्ने ॥१७॥

सभी के पालक है पूषादेव ! आप रिपुओं के विनाशक तथा सज्जनों के हर्ष प्रदायक हैं। हम आपको प्रसन्न करना चाहते हैं । हे तेजस्वी इन्द्रदेव ! हम केवल आपकी उपासना करना चाहते हैं, क्योंकि आपके अतिरिक्त किसी अन्य देव की उपासना हितकारी नहीं है । हे वास प्रदान करने वाले इन्द्रदेव ! आप स्तुतिकर्ता पज्र (कक्षीवान्) की तरह हमें भी धन प्रदान करें॥१७॥

परा गावो यवसं कच्चिदाघृणे नित्यं रेक्णो अमर्त्य ।
अस्माकं पूषन्नविता शिवो भव मंहिष्ठो वाजसातये ॥१८॥

हे तेजस्वी इन्द्रदेव ! जब कभी हमारी गौएँ चरती हुई दूर चली जाएँ, तो वहाँ आप उन्हें सुरक्षित रखें। हे पूषन् ! आप हमारे रक्षक तथा कल्याणकारी हैं। आप हमें प्रचुर अन्न तथा धन प्रदान करें॥१८॥

स्थूरं राधः शताश्वं कुरुङ्गस्य दिविष्टिषु ।
राज्ञस्त्वेषस्य सुभगस्य रातिषु तुर्वशेष्वमन्महि ॥१९॥

प्रखरता सम्पन्न, श्रेष्ठ धन वाले कुरुङ्ग (नामक राजा अथवा कर्मशील) के द्वारा दिव्यदान देते समय हमें सैकड़ों अश्वों से युक्त प्रचुर धन मिला॥१९॥

धीभिः सातानि काण्वस्य वाजिनः प्रियमेधैरभिद्युभिः ।
षष्टिं सहस्रानु निर्मजामजे निर्यूथानि गवामृषिः ॥२०॥

हमने (देवातिथि ऋषि ने) साठ हजार पवित्र गौओं को कण्व पुत्र मेधातिथि, उनके स्तोताओं तथा प्रिय मेधे के द्वारा प्राप्त किया था॥२०॥

वृक्षाश्चिन्मे अभिपित्वे अरारणुः ।
गां भजन्त मेहनाश्वं भजन्त मेहना ॥२१॥

हमने (देवातिथि ष ) जो पूर्वोक्त (साठ हजार गौ रूप) धन प्राप्त किया, उसे देखकर वृक्षों ने हर्षध्वनि पूर्वक कहा कि इस (ऋषि) को स्तुति योग्य श्रेष्ठ गौएँ एवं श्रेष्ठ अश्व प्राप्त हुए॥२१॥

# सूक्त ५

ऋषि: ब्रह्मातिथि: काण्व ।
देवता – आश्विनौ, ३९ चैद्य: कुश: । छंद – गायत्री, ३७-३८ वृहती, ३९ अनुष्टुप

दूरादिहेव यत्सत्यरुणप्सुरशिश्वितत् ।
वि भानुं विश्वधातनत् ॥१॥

बहुत दूर होते हुए भी अति समीप दिखाई देने वाली अरुणाभा उषा जब अपनी स्वर्णिम रश्मियों को फैलाती हैं, तब उसके प्रकाश से समूचा विश्व प्रकाशित हो जाता हैं॥१॥

नृवद्दस्रा मनोयुजा रथेन पृथुपाजसा ।
सचेथे अश्विनोषसम् ॥२॥

हे शत्रुनाशक अश्विनीकुमारो ! आप नेतृत्व करने वाले हैं। इच्छा मात्र से ही आप अति विशाल ऐश्वर्यवान् रथ द्वारा उषा के पास पहुँच जाते हैं॥२॥

युवाभ्यां वाजिनीवसू प्रति स्तोमा अदृक्षत ।
वाचं दूतो यथोहिषे ॥३॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप धन प्रदाता हैं, इसलिए आपके निमित्त स्तवन गाये जाते हैं । हम दूत के समान अपनी वाणी से आपका वर्णन करते हैं (आपकी स्तुति करते हैं ) ॥३॥

पुरुप्रिया ण ऊतये पुरुमन्द्रा पुरूवसू ।
स्तुषे कण्वासो अश्विना ॥४॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप सभी को प्रिय लगने वाले, सबको आनन्दित करने वाले तथा प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं। हम कण्ववंशीय (स्तोतागण) अपनी रक्षा के लिए आपकी स्तुति करते हैं॥४॥

मंहिष्ठा वाजसातमेषयन्ता शुभस्पती ।
गन्तारा दाशुषो गृहम् ॥५॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों अत्यन्त पूजनीय, बल प्रदान करने वाले, श्रेष्ठ कर्म करने वाले तथा अन्न उत्पन्न करने वाले हैं। आप यज्ञादि श्रेष्ठ कर्म करने वाले दानियों के घर जाकर उनका कल्याण करते हैं॥५॥

ता सुदेवाय दाशुषे सुमेधामवितारिणीम् ।
घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम् ॥६॥

श्रेष्ठ देवों के लिए देने वाले (हव्यदाता) को आप नष्ट न होने वाली बुद्धि (स्थिर प्रज्ञा) तथा (उनकी) गौओं (गौ, वाणी या इन्द्रियों) के पोषण क्षेत्र को घृत (तेजस् अथवा जल) से सिंचित करें॥६॥

आ नः स्तोममुप द्रवत्तूयं श्येनेभिराशुभिः ।
यातमश्वेभिरश्विना ॥७॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों श्येन पक्षी की तरह द्रुतगामी अश्वों के द्वारा हमारे इस यज्ञ में शीघ्र ही पधारें॥७॥

येभिस्तिस्रः परावतो दिवो विश्वानि रोचना ।
त्रीँरक्तून्परिदीयथः ॥८॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों जिस यान की सहायता से तीन दिन और तीन रात्रि (लगातार) दिव्य लोकों में भ्रमण करते हैं, उसी (यान) से हमारे इस यज्ञ स्थल पर पधारें॥८॥

उत नो गोमतीरिष उत सातीरहर्विदा ।

वि पथः सातये सितम् ॥९॥

हे अश्विनीकुमारों ! आप दोनों हमें गौओं से सम्पन्न प्रचुर अन्न तथा वितरित करने योग्य धन प्रदान करें, साथ ही यह भी निर्देश करें कि उस धन का सदुपयोग हम कैसे करें॥९॥

आ नो गोमन्तमश्विना सुवीरं सुरथं रयिम् ।
वोळ्हमश्वावतीरिषः ॥१०॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों हमें गौ, अश्व, श्रेष्ठ रथ तथा साहसी पुत्रों से युक्त महान् ऐश्वर्य प्रदान करें॥१०॥

वावृधाना शुभस्पती दस्रा हिरण्यवर्तनी ।
पिबतं सोम्यं मधु ॥११॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों श्रेष्ठ कार्य करने वाले तथा रिपुओं को नष्ट करने वाले हैं। आप अपने स्वर्णिम रथ से यज्ञस्थल की ओर बढ़ते हुए मधु मिश्रित सोमरस का पान करें॥११॥

अस्मभ्यं वाजिनीवसू मघवद्भ्यश्च सप्रथः ।
छर्दिर्यन्तमदाभ्यम् ॥१२॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों ऐश्वर्यवान् हैं। आप हम धन-सम्पन्नों को सुरक्षित विशाल आवास प्रदान करें॥१२॥

नि षु ब्रह्म जनानां याविष्टं तूयमा गतम् ।
मो ष्वन्याँ उपारतम् ॥१३॥

हे अश्विनीकुमारो ! मनुष्यों की मेधा तथा ज्ञान को आप सुरक्षित रखते हैं। आप अन्य किसी के पास न जाकर हमारे निकट आएँ॥१३॥

अस्य पिबतमश्विना युवं मदस्य चारुणः ।
मध्वो रातस्य धिष्ण्या ॥१४॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों हमारे द्वारा समर्पित किए गये मधुर तथा आनन्ददायक सोमरस का पान करें॥१४॥

अस्मे आ वहतं रयिं शतवन्तं सहस्रिणम् ।
पुरुक्षुं विश्वधायसम् ॥१५॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप, सबका पालन करने वाले तथा सबके जीवन को धारण करने वाले हैं। हमें सैकड़ों एवं हजारों प्रकार का धन-वैभव प्रदान करें॥१५॥

पुरुत्रा चिद्धि वां नरा विह्वयन्ते मनीषिणः ।
वाघद्भिरश्विना गतम् ॥१६॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों को मनीषीगण अनेकों स्थानों पर निश्चित रूप से बुलाते हैं, अतः आप अपने वाहन द्वारा यज्ञस्थल पर पधारें॥१६॥

जनासो वृक्तबर्हिषो हविष्मन्तो अरंकृतः ।
युवां हवन्ते अश्विना ॥१७॥

हे अश्विनीकुमारो ! याजकगण अलंकारयुक्त कुशा का आसन बिछाकर आप दोनों का आवाहन करते हैं॥१७॥

अस्माकमद्य वामयं स्तोमो वाहिष्ठो अन्तमः ।
युवाभ्यां भूत्वश्विना ॥१८॥

हे अश्विनीकुमारो ! इस समय हम स्तोताओं द्वारा उच्चरित ये स्तोत्र आप दोनों के अति निकट पहुँचे॥१८॥

यो ह वां मधुनो दृतिराहितो रथचर्षणे ।
ततः पिबतमश्विना ॥१९॥

हे अश्विनीकुमारो ! आपके रथ के दर्शनीय भाग पर यजमानों द्वारा स्थापित किये गये मधुपात्र से मुधर रस ग्रहण कर उसका पान करें॥१९॥

तेन नो वाजिनीवसू पश्वे तोकाय शं गवे ।
वहतं पीवरीरिषः ॥२०॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों अन्न तथा धन से सम्पन्न हैं । आप हमारी सन्तानों तथा गौ आदि पशुओं के निमित्त प्रचुर अन्न लेकर अपने रथ से यहाँ आएँ॥२०॥

उत नो दिव्या इष उत सिन्धूँरहर्विदा ।
अप द्वारेव वर्षथः ॥२१॥

नित्य प्रातःकाल दर्शनीय एवं स्तुत्य हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों कृपापूर्वक समयानुसार जल की वर्षा करते रहें, जिससे हमें प्रचुर अन्न मिलता रहे॥२१॥

कदा वां तौग्र्यो विधत्समुद्रे जहितो नरा ।
यद्वां रथो विभिष्पतात् ॥२२॥

हे अश्विनीकुमारो ! समुद्र में फेंके हुए तुम पुत्र भुज्यु ने आपकी प्रार्थना कब की थी ? जिससे आपने अपने रथ वहाँ पहुँचकर उसे बचाया था॥२२॥

युवं कण्वाय नासत्या ऋपिरिप्ताय हर्म्ये ।
शश्वदूतीर्दशस्यथः ॥२३॥

सत्य के पालक हे अश्विनीकुमारो ! पीड़ित कण्व ऋषि को आपने सदा ऊँचे आवास देकर सुरक्षा प्रदान की थी॥२३॥

ताभिरा यातमूतिभिर्नव्यसीभिः सुशस्तिभिः ।
यद्वां वृषण्वसू हुवे ॥२४॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों धन की वर्षा करने वाले हैं। हमारे द्वारा आवाहन किये जाने पर आप अपने रक्षण-साधनों से युक्त होकर यहाँ पधारें॥२४॥

यथा चित्कण्वमावतं प्रियमेधमुपस्तुतम् ।
अत्रिं शिञ्जारमश्विना ॥२५॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार आपने प्रार्थना करने वाले अत्रि, प्रियमेध, कण्व तथा उपस्तुत को सुरक्षा प्रदान की थीं, उसी प्रकार हमें भी सुरक्षा प्रदान करें॥२५॥

यथोत कृत्व्ये धनेंऽशुं गोष्वगस्त्यम् ।
यथा वाजेषु सोभरिम् ॥२६॥

हे अश्विनीकुमारो ! आपने जिस प्रकार प्राप्त करने योग्य ऐश्वर्य को पाने के लिए अंशु' की रक्षा की थीं, गौओं की प्राप्ति के निमित्त 'अगस्त्य की रक्षा की थी तथा 'सोभरि' को युद्ध में सुरक्षा प्रदान की थी, उसी प्रकार हमें भी सुरक्षा प्रदान करें॥२६॥

एतावद्वां वृषण्वसू अतो वा भूयो अश्विना ।
गृणन्तः सुम्नमीमहे ॥२७॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों ऐश्वर्य की वर्षा करने वाले हैं। प्रार्थना करने वाले हम स्तोतागण आपसे प्रचुर धन की याचना करते हैं॥२७॥

रथं हिरण्यवन्धुरं हिरण्याभीशुमश्विना ।
आ हि स्थाथो दिविस्पृशम् ॥२८॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों सोने के दण्ड वाले, सोने की लगाम वाले तथा दिव्य लोक का स्पर्श करने वाले रथ पर आरूढ़ होकर पधारें॥२८॥

हिरण्ययी वां रभिरीषा अक्षो हिरण्ययः ।
उभा चक्रा हिरण्यया ॥२९॥

हे अश्विनीकुमारो ! आपके रथ की लकड़ी स्वर्णिम आभा से युक्त हैं । धुरा तथा पहिया भी सुवर्ण निर्मित है॥२९॥

तेन नो वाजिनीवसू परावतश्चिदा गतम् ।
उपेमां सुष्टुतिं मम ॥३०॥

बल तथा धन से सम्पन्न हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों अपने रथ द्वारा हमारी प्रार्थना को सुनने के लिए दूर देश से भी हमारे पास आयें॥३०॥

आ वहेथे पराकात्पूर्वीरश्नन्तावश्विना ।
इषो दासीरमर्त्या ॥३१॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों दुष्टों की अनेकों पुरियों को विनष्ट करके अन्न लेकर यज्ञस्थल पर पधारें॥३१॥

आ नो द्युम्नैरा श्रवोभिरा राया यातमश्विना ।
पुरुश्चन्द्रा नासत्या ॥३२॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों सत्यनिष्ठ तथा अनेकों के मित्र हैं। आप धन, अन्न तथा दैवी सम्पत्ति से सम्पन्न होकर हमारे पास आयें॥३२॥

एह वां प्रुषितप्सवो वयो वहन्तु पर्णिनः ।
अच्छा स्वध्वरं जनम् ॥३३॥

हे अश्विनीकुमारो ! पक्षियों के सदृश तेजगति वाले घोड़े, आपको श्रेष्ठ यज्ञादि कर्म करने वाले याजक के पास ले जाएँ॥३३॥

रथं वामनुगायसं य इषा वर्तते सह ।
न चक्रमभि बाधते ॥३४॥

स्तोता जिसके अनुगामी हैं, आपका वह अश्व अथवा अन्नयुक्त रथ चक्र (सैन्य या प्रकृति के चक्र) को बाधा नहीं पहुँचाता॥३४॥

हिरण्ययेन रथेन द्रवत्पाणिभिरश्वैः ।
धीजवना नासत्या ॥३५॥

बुद्धि के समान सत्य भासित होने वाले (देवो ! आप) स्वर्णिम रथ एवं दौड़ने वाले अश्वों द्वारा यहाँ पधारें॥३५॥

युवं मृगं जागृवांसं स्वदथो वा वृषण्वसू ।
ता नः पृङ्क्तमिषा रयिम् ॥३६॥

वर्षणशील सम्पत्ति वाले (हे अश्विदेवो !) जाग्रत् और शोधित सोम का पान करने वाले आप दोनों हमें पोषक अन्न से युक्त करें॥३६॥

ता मे अश्विना सनीनां विद्यातं नवानाम् ।
यथा चिच्चैद्यः कशुः शतमुष्ट्रानां ददत्सहस्रा दश गोनाम् ॥३७॥

वे (दोनों) अश्विनीकुमार हमारे लिए उपयोगी ऐश्वर्यो-विभूतियों को जानें । चेदि (ज्ञानियों के) वंशज "कशु' (नामक पात्र अथवा प्रेरक बल) ने हमें जिस प्रकार सैकड़ों ऊँट, दासियाँ एवं सहस्र गौएँ प्रदान कीं, यह भी वे जानें॥३७॥

यो मे हिरण्यसंदृशो दश राज्ञो अमंहत ।
अधस्पदा इच्चैद्यस्य कृष्टयश्चर्मम्ना अभितो जनाः ॥३८॥

जिन (कशु) ने हमें दस राजाओं (इन्द्रियों) के स्वर्णाभ (चमकीले) पुरुषार्थ (हमारी सेवार्थ) प्रदान किये, ऐसे चेदिवंशीय के चरणों में सारी प्रजाएँ रहती हैं॥३८॥

माकिरेना पथा गाद्येनेमे यन्ति चेदयः ।
अन्यो नेत्सूरिरोहते भूरिदावत्तरो जनः ॥३९॥

जिस रास्ते से चेदिवंशीय (ज्ञानजन्य प्रेरक – प्रवाह) जाते हैं, उस रास्ते से दूसरे नहीं जाते । सभी याजकों को 'कशु' से अधिक धन कोई नहीं प्रदान करता॥३९॥

# सूक्त ६

ऋषि: वत्स: काण्व ।
देवता – इन्द्र:, ४६-४८ तिरिन्दिर: पार्शव्य: । छंद – गायत्री

महाँ इन्द्रो य ओजसा पर्जन्यो वृष्टिमाँ इव ।
स्तोमैर्वत्सस्य वावृधे ॥१॥

जल की वृष्टि करने वाले मेघों के सदृश महान् और तेजस्वी वे यशस्वी इन्द्रदेव अपने प्रिय पात्रों की स्तुतियों से समृद्ध होकर व्यापक रूप ग्रहण करते हैं ॥१॥

प्रजामृतस्य पिप्रतः प्र यद्भरन्त वह्नयः ।
विप्रा ऋतस्य वाहसा ॥२॥

जब आकाश मार्ग से गमन करने में सक्षम अश्व यज्ञ के लिए तत्पर इन्द्रदेव को वेगपूर्वक (यज्ञस्थल पर) ले जाते हैं, तब उद्गातागण यज्ञ में प्रयुक्त होने वाले मंत्रों से उन इन्द्रदेव की स्तुति करते हैं॥२॥

कण्वा इन्द्रं यदक्रत स्तोमैर्यज्ञस्य साधनम् ।
जामि ब्रुवत आयुधम् ॥३॥

जब कण्ववंशीय ऋषिगण स्तुतियों के माध्यम से इन्द्रदेव को यज्ञ साधक (यज्ञरक्षक) बना लेते हैं, तब (यज्ञ रक्षार्थ) शस्त्रों की आवश्यकता नहीं रह जाती, ऐसा कहा गया है॥३॥

समस्य मन्यवे विशो विश्वा नमन्त कृष्टयः ।
समुद्रायेव सिन्धवः ॥४॥

समस्त प्रजाएँ उग्र इन्द्रदेव के प्रति नमनपूर्वक उसी प्रकार आकर्षित होती है, जैसे कि सभी नदियाँ समुद्र में मिलने के लिए वेग से जाती हैं॥४॥

ओजस्तदस्य तित्विष उभे यत्समवर्तयत् ।
इन्द्रश्चर्मेव रोदसी ॥५॥

इन्द्रदेव का वह ओजस (बल) अत्यन्त तेजस्वी हैं, जिससे वे द्युलोक से पृथ्वीलोक तक आवरण के समान फैलकर सुरक्षा करते हैं॥५॥

वि चिद्वृत्रस्य दोधतो वज्रेण शतपर्वणा ।

शिरो बिभेद वृष्णिना ॥६॥

संसार को भयभीत करने वाले (कम्पित करने वाले) वृत्रासुर के शीश को शक्ति – सम्पन्न इन्द्रदेव ने अपने तीक्ष्ण प्रहार वाले वज्र से अलग कर दिया॥६॥

इमा अभि प्र णोनुमो विपामग्रेषु धीतयः ।
अग्नेः शोचिर्न दिद्युतः ॥७॥

अग्नि की ज्वालाओं के सदृश तेजयुक्त स्तोत्रों का स्तोताओं के समक्ष हम बार-बार उच्चारण करते हैं॥७॥

गुहा सतीरुप त्मना प्र यच्छोचन्त धीतयः ।
कण्वा ऋतस्य धारया ॥८॥

गुफा में रहने वाली गौएँ (अन्तःकरण में विद्यमान स्तुतियाँ) इन्द्रदेव के निकट पहुँचकर निश्चिन्त होती हैं, उनको कण्ववंश के षि सोमरस से सिंचित करते हैं॥८॥

प्र तमिन्द्र नशीमहि रयिं गोमन्तमश्विनम् ।
प्र ब्रह्म पूर्वचित्तये ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! हम गौओ और अश्वो से युक्त धन को प्राप्त करें। सबसे पहले हम अपने ज्ञान के बल पर अन्न को प्राप्त करें॥९॥

अहमिद्धि पितुष्परि मेधामृतस्य जग्रभ ।
अहं सूर्य इवाजनि ॥१०॥

हम (याजकों) ने पालनकर्ता यज्ञरूप इन्द्रदेव की बुद्धि (कृपा) को अपनी ओर आकर्षित कर लिया है। इससे हम सूर्य के सदृश तेज से युक्त हो गये हैं॥१०॥

अहं प्रत्नेन मन्मना गिरः शुम्भामि कण्ववत् ।
येनेन्द्रः शुष्ममिद्दधे ॥११॥

कण्व अधि के सदृश हमने इन्द्रदेव को उने प्राचीन स्तोत्रों से सुशोभित किया है, जिनके प्रभाव से वे शक्ति-सम्पन्न बनते हैं॥११॥

ये त्वामिन्द्र न तुष्टुवुर्ऋषयो ये च तुष्टुवुः ।
ममेद्वर्धस्व सुष्टुतः ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी स्तुति न करने वाले तथा आपके निमित्त स्तुति करने वाले अधिगणों के मध्य मेरे स्तोत्र ही प्रशंसनीय हैं । आप उन स्तोत्रों के प्रभाव से भली प्रकार परिपुष्ट हों॥१२॥

यदस्य मन्युरध्वनीद्वि वृत्रं पर्वशो रुजन् ।
अपः समुद्रमैरयत् ॥१३॥

इन्द्रदेव के क्रोध से टुकड़े-टुकड़े होकर जब वृत्र ने गर्जना की, तब इन्द्रदेव ने पानी को समुद्र की ओर भेज दिया॥१३॥

नि शुष्ण इन्द्र धर्णसिं वज्रं जघन्थ दस्यवि ।
वृषा ह्युग्र शृण्विषे ॥१४॥

हे इन्द्रदेव ! आपने अपने वज्र से शुष्ण नामक राक्षस पर प्रहार किया और उसका वध करके यशस्वी हो गये॥१४॥

न द्याव इन्द्रमोजसा नान्तरिक्षाणि वज्रिणम् ।
न विव्यचन्त भूमयः ॥१५॥

उन वज्रधारी इन्द्रदेव को द्युलोक, अन्तरिक्षलोक तथा पृथ्वीलोक अपनी शक्ति से घेर नहीं सकते॥१५॥

यस्त इन्द्र महीरपः स्तभूयमान आशयत् ।
नि तं पद्यासु शिश्नथः ॥१६॥

हे इन्द्रदेव ! बृहत् जल-प्रवाहों को रोककर बैठे हुए वृत्रासुर को आपने जल के मध्य में ही मार दिया॥१६॥

य इमे रोदसी मही समीची समजग्रभीत् ।
तमोभिरिन्द्र तं गुहः ॥१७॥

जब वृत्रासुर ने महान् द्युलोक तथा पृथ्वीलोक को ढक लिया, तब सभी जगह अंधकार छा गया॥१७॥

य इन्द्र यतयस्त्वा भृगवो ये च तुष्टुवुः ।
ममेदुग्र श्रुधी हवम् ॥१८॥

हे शूरवीर इन्द्रदेव ! आपकी प्रार्थना सभी यतया आर भृगुओं ने की । आप हमारी भी प्रार्थना को सुने॥१८॥

इमास्त इन्द्र पृश्नयो घृतं दुहत आशिरम् ।
एनामृतस्य पिप्युषीः ॥१९॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी ये यज्ञ प्रक्रिया को आगे बढ़ाने-पोषित करने वाली पृश्नियाँ (गौएँ किरणें, पृथ्वी आदि) यह (यज्ञ पोषक) आशिर (दूध या पोषक रस) एवं घृत (ऊर्जावर्धक या स्निग्ध हव्य) प्रदान करती हैं॥१९॥

या इन्द्र प्रस्वस्त्वासा गर्भमचक्रिरन् ।
परि धर्मेव सूर्यम् ॥२०॥

हे इन्द्रदेव ! ये जो (ऊपर वर्णित) प्रसवशील (वांछित उत्पादन देने वाली) हैं, वे अपने मुख से आपके द्वारा (प्रदत्त अन्न या ओज को ग्रहण कर) गर्भवती होती हैं (और) सूर्य के चारों ओर धारक किरणों की तरह रहती या घूमती हैं॥२०॥

त्वामिच्छवसस्पते कण्वा उक्थेन वावृधुः ।
त्वां सुतास इन्दवः ॥२१॥

हे बलों के स्वामी इन्द्रदेव ! कण्ववंशीय ऋषि अपने स्तवन से आपको समृद्ध करते हैं। वे सोमरस समर्पित करके आपको हर्षित करते हैं॥२१॥

तवेदिन्द्र प्रणीतिषूत प्रशस्तिरद्रिवः ।
यज्ञो वितन्तसाय्यः ॥२२॥

पर्वतों के दुर्ग में निवास करने वाले है इन्द्रदेव ! आपकी कृपा से जो यज्ञ सम्पन्न होते हैं, उनमें आपकी ही स्तुति की जाती है॥२२॥

आ न इन्द्र महीमिषं पुरं न दर्षि गोमतीम् ।
उत प्रजां सुवीर्यम् ॥२३॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें गौओं से सम्पन्न विशाल नगर, अन्न, श्रेष्ठ बल तथा उत्तम सन्ताने प्रदान करें॥२३॥

उत त्यदाश्वश्व्यं यदिन्द्र नाहुषीष्वा ।
अग्रे विक्षु प्रदीदयत् ॥२४॥

हे इन्द्रदेव ! आपने जिस प्रकार अनेक द्रुतगामी अश्व, नहुष नामक राजा को प्रदान किया, उसी प्रकार हमें भी प्रदान करें॥२४॥

अभि व्रजं न तत्निषे सूर उपाकचक्षसम् ।
यदिन्द्र मृळयासि नः ॥२५॥

हे ज्ञान-सम्पन्न इन्द्रदेव ! आप हमारी गौशाला को गौओं से समृद्ध करके हमें हर्ष प्रदान करें॥२५॥

यदङ्ग तविषीयस इन्द्र प्रराजसि क्षितीः ।
महाँ अपार ओजसा ॥२६॥

हे आत्मस्वरूप इन्द्रदेव !आप अपने महान् ओज तथा शौर्य को प्रदर्शित करके प्रजाओं पर शासन करते हैं॥२६॥

तं त्वा हविष्मतीर्विश उप ब्रुवत ऊतये ।
उरुज्रयसमिन्दुभिः ॥२७॥

हे इन्द्रदेव !आहुति प्रदान करने वाले सभी मनुष्य अपनी सुरक्षा हेतु आपको ही सोमपान के लिए बुलाते हैं॥२७॥

उपह्वरे गिरीणां संगथे च नदीनाम् ।
धिया विप्रो अजायत ॥२८॥

पर्वत की गुफाओं-घाटियों एवं नदियों के संगम (पवित्र स्थलों) पर (किये गये प्रयोगों से) विप्र (इन्द्र, श्रेष्ठतम मेधावी या ज्ञानी) उत्पन्न होते हैं॥२८॥

अतः समुद्रमुद्वतश्चिकित्वाँ अव पश्यति ।
यतो विपान एजति ॥२९॥

जहाँ से व्यापक (जीवन तत्त्व) गतिशील (प्रवाहित होता हैं, ऊपर वाले उस स्थान से प्रखर दृष्टि वाले (इन्द्र, विद्वान् या सूर्यदेव) समुद्र जल, सागर अथवा जीवन प्रवाह को देखते हैं॥२९॥

आदित्प्रत्नस्य रेतसो ज्योतिष्पश्यन्ति वासरम् ।
परो यदिध्यते दिवा ॥३०॥

द्युलोक से भी परे स्वप्रकाशित (सविता) तथा दिन में दृश्यमान सूर्य एवं इन सभी प्राचीनतम तेजस्वी स्वरूपों में इन्द्रदेव का ही तेज देखते हैं॥३०॥

कण्वास इन्द्र ते मतिं विश्वे वर्धन्ति पौंस्यम् ।
उतो शविष्ठ वृष्ण्यम् ॥३१॥

हे इन्द्रदेव ! सभी कण्ववंशीय ऋषि आपकी मेधा तथा ओज को बढ़ाते हैं एवं आपके शौर्य को भी समृद्ध करते हैं॥३१॥

इमां म इन्द्र सुष्टुतिं जुषस्व प्र सु मामव ।
उत प्र वर्धया मतिम् ॥३२॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारी प्रार्थना को स्वीकार करके हमें भली प्रकार सुरक्षित करें तथा हमारी मेधा को बढ़ायें॥३२॥

उत ब्रह्मण्या वयं तुभ्यं प्रवृद्ध वज्रिवः ।
विप्रा अतक्ष्म जीवसे ॥३३॥

हे इन्द्रदेव ! आप विशाल वज्र धारण करने वाले हैं। अपने दीर्घायुष्य के निमित्त हम स्तोतागण आपकी प्रार्थना करते हैं॥३३॥

अभि कण्वा अनूषतापो न प्रवता यतीः ।
इन्द्रं वनन्वती मतिः ॥३४॥

जिस प्रकार प्रवहमान जल नीचे की ओर बहता है, उसी प्रकार कण्ववंशीय ष द्वारा की हुई स्तुति इन्द्रदेव के पास पहुँचती है॥३४॥

इन्द्रमुक्थानि वावृधुः समुद्रमिव सिन्धवः ।
अनुत्तमन्युमजरम् ॥३५॥

जिस प्रकार नदियों का पानी समुद्र को समृद्ध करता है, उसी प्रकार हमारी स्तुतियाँ उत्साहीं तथा अविनाशी इन्द्रदेव को बढ़ाएँ॥३५॥

आ नो याहि परावतो हरिभ्यां हर्यताभ्याम् ।
इममिन्द्र सुतं पिब ॥३६॥

हे इन्द्रदेव !आप अपने बलवान् अश्वों द्वारा सुदूर स्थानों से भी पधार करे अभिपुत सोम का पान करते हैं॥३६॥

त्वामिद्वृत्रहन्तम जनासो वृक्तबर्हिषः ।
हवन्ते वाजसातये ॥३७॥

वृत्रासुर का विनाश करने वाले हे इन्द्रदेव ! अन्न तथा ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिए हम याजकगण आपका ! आवाहन करते हैं॥३७॥

अनु त्वा रोदसी उभे चक्रं न वर्त्येतशम् ।
अनु सुवानास इन्दवः ॥३८॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार रथ के पहिए घोड़ों के पीछे चलते हैं, उसी प्रकार द्युलोक, पृथ्वीलोक तथा सोम । आपका अनुगमन करते हैं॥३८॥

मन्दस्वा सु स्वर्णर उतेन्द्र शर्यणावति ।
मत्स्वा विवस्वतो मती ॥३९॥

हे इन्द्रदेव !शर्यणावत् प्रदेश में सम्पन्न होने वाले यज्ञ में आप याजकों द्वारा की गई प्रार्थनाओं से प्रसन्न हों॥३९॥

वावृधान उप द्यवि वृषा वज्र्यरोरवीत् ।
वृत्रहा सोमपातमः ॥४०॥

सर्वश्रेष्ठ, शक्ति-सम्पन्न, वज्रधारी, वृत्रहन्ता तथा अत्यधिक सोमपान करने वाले इन्द्रदेव दिव्यलोक के निकट से गर्जना करते हैं॥४०॥

ऋषिर्हि पूर्वजा अस्येक ईशान ओजसा ।
इन्द्र चोष्कूयसे वसु ॥४१॥

हे इन्द्रदेव ! आप सबसे पहले उत्पन्न होने वाले ऋषि हैं तथा अपनी ही शक्ति से सबको संचालित करते हैं। आप हमें प्रचुर धन प्रदान करें॥४१॥

अस्माकं त्वा सुताँ उप वीतपृष्ठा अभि प्रयः ।
शतं वहन्तु हरयः ॥४२॥

हे इन्द्रदेव ! मजबूत तथा श्रेष्ठ पृष्ठ भाग वाले, सैकड़ों अश्व हमारे द्वारा निचोड़े गये सोमरस का पान करने के लिए आपको यज्ञस्थल पर लायें॥४२॥

इमां सु पूर्व्यां धियं मधोर्घृतस्य पिप्युषीम् ।
कण्वा उक्थेन वावृधुः ॥४३॥

कण्व वंशीय पूर्वज मंत्रों द्वारा यज्ञ करके मधुर जल की वृष्टि करते हैं॥४३॥

इन्द्रमिद्विमहीनां मेधे वृणीत मर्त्यः ।
इन्द्रं सनिष्युरूतये ॥४४॥

अपनी सुरक्षा तथा यज्ञों के लिए सभी मनुष्य महान् देवताओं के बीच इन्द्रदेव का ही वरण करते हैं॥४४॥

अर्वाञ्चं त्वा पुरुष्टुत प्रियमेधस्तुता हरी ।
सोमपेयाय वक्षतः ॥४५॥

प्रियमेध तथा अनेकों द्वारा प्रशंसित अश्व आपको सोमपान के लिए हमारे पास लायें॥४५॥

शतमहं तिरिन्दिरे सहस्रं पर्शावा ददे ।
राधांसि याद्वानाम् ॥४६॥

यदुवंशियों में सर्वश्रेष्ठ, हमने 'परशु' के पुत्र 'तिरिन्दिर' से हजारों की संख्या में विभिन्न प्रकार का धन-वैभव ग्रहण किया॥४६॥

त्रीणि शतान्यर्वतां सहस्रा दश गोनाम् ।
ददुष्पज्राय साम्ने ॥४७॥

इस यज्ञ में 'तिरिन्दिर' ने 'पज्र' को तीन सौ अर्वा (अश्व अथवा गतिशील जीवन के वर्ष) तथा दस हजार गौएँ (अथवा वेद वाणियाँ) प्रदान कीं॥४७॥

उदानट् ककुहो दिवमुष्ट्राञ्चतुर्युजो ददत् ।
श्रवसा याद्वं जनम् ॥४८॥

तिरिन्दिर नामक राजा ने चार सोने के बोरों से युक्त ऊँटों को दान करके अपने यज्ञ के पुण्य से उन्नत होकर दिव्यलोक की प्राप्ति की॥४८॥

# सूक्त ७

ऋषिः पुनर्वत्सः काण्व।
देवता – मरुतः। छंद – गायत्री

प्र यद्वस्त्रिष्टुभमिषं मरुतो विप्रो अक्षरत् ।
वि पर्वतेषु राजथ ॥१॥

हे मरुद्गण ! जब विद्वान् याजकगण तीनों सवनों में (त्रिष्टुभ् छन्दके द्वारा)आपकी स्तुति करके अन्न (आहुतियाँ) समर्पित करते हैं, तब आप पर्वत श्रृंखलाओं (उच्च-शिखरों) परसुशोभित होते हैं॥१॥

यदङ्ग तविषीयवो यामं शुभ्रा अचिध्वम् ।
नि पर्वता अहासत ॥२॥

सौंदर्ययुक्त, प्रिय तथा बलवान् हे मरुद्गण ! जब आप जाने के लिए अपने रथ को सुसज्जित करके यात्रा करते हैं, तब पर्वत भी प्रकम्पित होने लगते हैं॥२॥

उदीरयन्त वायुभिर्वाश्रासः पृश्निमातरः ।
धुक्षन्त पिप्युषीमिषम् ॥३॥

शब्द करने वाले तथा पृथ्वी को माता सदृश मानने वाले मरुद्गण, अपने वायु के झकोरों से बादलों को विदीर्ण करके जल वृष्टि करते हैं । इस प्रकार वे प्राणिमात्र के लिए पोषक अन्न प्रदान करते हैं॥३॥

वपन्ति मरुतो मिहं प्र वेपयन्ति पर्वतान् ।
यद्यामं यान्ति वायुभिः ॥४॥

वीर मरुद्गण जब वायु प्रवाहों के साथ चलते हैं, तब वर्षा करते हुए पर्वतों को कम्पायमान कर देते हैं॥४॥

नि यद्यामाय वो गिरिर्नि सिन्धवो विधर्मणे ।
महे शुष्माय येमिरे ॥५॥

हे मरुद्गण ! आपके वेग तथा महान् बल से पर्वत डर जाते हैं तथा नदियाँ भयभीत होकर मन्दगति से प्रवाहित होने लगती हैं॥५॥

युष्माँ उ नक्तमूतये युष्मान्दिवा हवामहे ।
युष्मान्प्रयत्यध्वरे ॥६॥

हे मरुतो ! अपनी सुरक्षा के निमित्त हम आपको रात्रि के समय, दिन के समय तथा यज्ञ करते समय आरम्भ में ही बुलाते हैं॥६॥

उदु त्ये अरुणप्सवश्चित्रा यामेभिरीरते ।
वाश्रा अधि ष्णुना दिवः ॥७॥

लाल रंगे तथा अद्‌भुत गर्जना करने वाले मरुद्गण अपने रथ पर बैठकर दिव्यलोक से आगमन करते हैं॥७॥

सृजन्ति रश्मिमोजसा पन्थां सूर्याय यातवे ।
ते भानुभिर्वि तस्थिरे ॥८॥

वे मरुद्गण सूर्यदेव की किरणों के लिए भी आगे बढ़ने का पथ – प्रशस्त करते हैं तथा उनकी तेजस्वी किरणो को सर्वत्र बिखेरते हैं॥८॥

इमां मे मरुतो गिरमिमं स्तोममृभुक्षणः ।
इमं मे वनता हवम् ॥९॥

अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित हे वीर मरुतो ! हमारे द्वारा उच्चरित स्तोत्रों को तथा स्तुतियों को आप ग्रहण करें॥९॥

त्रीणि सरांसि पृश्नयो दुदुह्रे वज्रिणे मधु ।
उत्सं कवन्धमुद्रिणम् ॥१०॥

पृश्नियों (मरुद्गणों की माताओं अथवा वर्षणशील किरणों) ने इन्द्रदेव के निमित्त तीनों सवनों में पीने योग्य मधु-दुग्ध तथा जल मिश्रित सोमरस के तीन बड़े पात्र (पृथ्वी, अन्तरिक्ष एवं आकाश ) भरकर तैयार कर दिए हैं॥१०॥

मरुतो यद्ध वो दिवः सुम्नायन्तो हवामहे ।
आ तू न उप गन्तन ॥११॥

हे वीर मरुतो ! सुख की कामना करने वाले हम याजकगण जब आपका आवाहन करें, तब आप दिव्यलोक से शीघ्र ही अवतरित हों॥११॥

यूयं हि ष्ठा सुदानवो रुद्रा ऋभुक्षणो दमे ।
उत प्रचेतसो मदे ॥१२॥

श्रेष्ठ, दानशील, रिपुओं को रुलाने वाले तथा अस्त्र-शस्त्र धारण करने वाले हे तेजस्वी मरुतो ! जब आप यज्ञ मण्डप में रहकर हर्ष प्रदान करने वाले सोमरस को पीते हैं, तब आपकी मेधा निश्चित रूप से चेतना – सम्पन्न हो जाती है॥१२॥

आ नो रयिं मदच्युतं पुरुक्षुं विश्वधायसम् ।
इयर्ता मरुतो दिवः ॥१३॥

हे मरुद्गण ! आप रिपुओं के मद को चूर करने वाली तथा पोषक सम्पत्ति प्रचुर मात्रा में दिव्य लोक से हमारे लिए लाएँ॥१३॥

अधीव यद्गिरीणां यामं शुभ्रा अचिध्वम् ।
सुवानैर्मन्दध्व इन्दुभिः ॥१४॥

हे तेजस्वी मरुतो ! जब आप पहाड़ों पर चढ़ने के लिए अपने रथ को सुसज्जित करके अभिषुत सोमरस को पीते हैं, तब आप आनन्दित होते हैं॥१४॥

एतावतश्चिदेषां सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः ।
अदाभ्यस्य मन्मभिः ॥१५॥

स्तवन करने वाले यजमान अपने स्तोत्रों के द्वारा शक्ति-सम्पन्न मरुतों से श्रेष्ठ सुख की याचना करते हैं॥१५॥

ये द्रप्सा इव रोदसी धमन्त्यनु वृष्टिभिः ।
उत्सं दुहन्तो अक्षितम् ॥१६॥

वे मरुद्गण अनवरत स्रोतों का दोहन करते हैं। समस्त भू-भाग तथा अंतरिक्ष को वर्षा द्वारा जल की बूंदों से ढक देते हैं ॥१६॥

उदु स्वानेभिरीरत उद्रथैरुदु वायुभिः ।
उत्स्तोमैः पृश्निमातरः ॥१७॥

पृश्नि (धरती अथवा किरणें ) जिनकी माता हैं, वे मरुद्गण ध्वनि करते हुए अपने रथ द्वारा मन्त्रशक्ति तथा वायु द्वारा ऊर्ध्वगति प्राप्त करते हैं॥१७॥

येनाव तुर्वशं यदुं येन कण्वं धनस्पृतम् ।
राये सु तस्य धीमहि ॥१८॥

हे वीर मरुतो ! जिस शक्ति के माध्यम से आपने यदु नरेश तुर्वश को सुरक्षित किया तथा ऐश्वर्य की कामना करने वाले कण्व को सुरक्षित

किया। ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिए हम उसी बल को पाने के लिए आपसे प्रार्थना करते हैं॥१८॥

इमा उ वः सुदानवो घृतं न पिप्युषीरिषः ।
वर्धान्काण्वस्य मन्मभिः ॥१९॥

हे श्रेष्ठ दानी मरुतो ! घृत के सदृश पौष्टिक अन्न (सोमरूप हव्य) तथा कण्वपुत्रों के मननीय स्तोत्रों द्वारा आप समृद्ध हों॥१९॥

क्व नूनं सुदानवो मदथा वृक्तबर्हिषः ।
ब्रह्मा को वः सपर्यति ॥२०॥

कुश-आसन पर आरूढ़ होने वाले श्रेष्ठ दानी हे मरुतो ! आप कहाँ आनन्दित हो रहे थे? वह कौन ब्राह्मण हैं, जो आपकी सराहना करता है?॥२०॥

नहि ष्म यद्ध वः पुरा स्तोमेभिर्वृक्तबर्हिषः ।
शर्धाँ ऋतस्य जिन्वथ ॥२१॥

हे मरुतो ! पूर्व में अन्य स्तोताओं द्वारा किये गये स्तोत्रगान द्वारा आप अपने यज्ञ (सत्य) सम्बन्धी बल में वृद्धि करें, यह सम्भव नहीं। हमारे द्वारा किये गये स्तुतिगान से आप समृद्ध हों॥२१॥

समु त्ये महतीरपः सं क्षोणी समु सूर्यम् ।
सं वज्रं पर्वशो दधुः ॥२२॥

उन मरुद्गणों ने वृष्टि रूप जल को ओपधियों में स्थापित किया, दिव्यलोक, पृथ्वीलोक तथा सूर्यलोक को उचित स्थान पर स्थापित किया । वृत्र का समूल नाश करने के लिए उन्होंने अपने कठोर वज्र को धारण किया॥२२॥

वि वृत्रं पर्वशो ययुर्वि पर्वताँ अराजिनः ।
चक्राणा वृष्णि पौंस्यम् ॥२३॥

शक्तिशाली तथा पुरुषार्थ की वृद्धि करने वाले शासक मरुतों ने पर्वत के सदृश वृत्र को छिन्न-भिन्न कर दिया॥२३॥

अनु त्रितस्य युध्यतः शुष्ममावन्नुत क्रतुम् ।
अन्विन्द्रं वृत्रतूर्ये ॥२४॥

उन मरुद्गणों ने संघर्षरत वीरों की तथा त्रित की कार्यशक्ति को सुरक्षा प्रदान की। उन्होंने वृत्र के मारने में इन्द्रदेव की सहायता की थी॥२४॥

विद्युद्धस्ता अभिद्यवः शिप्राः शीर्षन्हिरण्ययीः ।
शुभ्रा व्यञ्जत श्रिये ॥२५॥

सुन्दरवर्ण से सुशोभित मरुद्गणों ने सौदर्य बढ़ाने के लिए अपने सिर पर सोने के बने शिप (शिरस्त्राण)को धारण किया। वे विद्युत् के समान तेजस्वी हथियारों को अपने हाथ में धारण करते हैं॥२५॥

उशना यत्परावत उक्ष्णो रन्ध्रमयातन ।
द्यौर्न चक्रदद्भिया ॥२६॥

हे मरुद्गण ! आप दूसरों के कल्याण की कामना करते हैं। जब आप इस देश में बादलों के साथ आते हैं, तब दिव्यलोक वासियों की तरह मृत्युलोक के प्राणी भी भय से काँपने लगते है॥२६॥

आ नो मखस्य दावनेऽश्वैर्हिरण्यपाणिभिः ।
देवास उप गन्तन ॥२७॥

हे मरुतो ! आप हम याज्ञिकों को दिव्य अनुदान प्रदान करने के निमित्त सोने के आभूषणों से युक्त अपने घोड़ों के द्वारा यज्ञस्थल पर पधारें॥२७॥

यदेषां पृषती रथे प्रष्टिर्वहति रोहितः ।

यान्ति शुभ्रा रिणन्नपः ॥२८॥

उन मरुतों के रथ को श्वेत धब्बेदार रंग वाले मृग तेजगति से खीचते हैं। गौरव के मरुद्गण जिस समय यज्ञस्थल पर पहुँचते हैं, उस समय जल की वर्षा होती हैं॥२८॥

सुषोमे शर्यणावत्यार्जीके पस्त्यावति ।
ययुर्निचक्रया नरः ॥२९॥

वीर मरुद्गण जीका प्रदेश में शर्यणावन् सरोवर के निकट यज्ञगृह में निवास करते हैं । वे वेगवान् पहिया से युक्त रथ पर आसीन होकर गमन करते हैं॥२९॥

कदा गच्छाथ मरुत इत्था विप्रं हवमानम् ।
मार्डीकेभिर्नाधमानम् ॥३०॥

हे मरुद्गण ! जो विद्वान् याजक ऐश्वर्य की कामना से आपकी स्तुत करते हैं, उनके पास ऐश्वर्य साधना सहित आप कब पहुँचेंगे ?॥३०॥

कद्ध नूनं कधप्रियो यदिन्द्रमजहातन ।
को वः सखित्व ओहते ॥३१॥

हे रस्तुति प्रिय मरुतो ! क्या कभी आपने इन्द्र का साथ छोड़ा है ? (ऐसा कभी नहीं हुआ यह जानकर भी ) आपकी मित्रता प्राप्त करने के लिए किसने याचना की ?॥३१॥

सहो षु णो वज्रहस्तैः कण्वासो अग्निं मरुद्भिः ।
स्तुषे हिरण्यवाशीभिः ॥३२॥

है कण्ववंशियो ! स्वर्णिम कुल्हाड़ियों का प्रयोग करने वाले तथा हाथों में वज्र धारण करने वाले मरुता के साथ आप अग्निदेव की विधिवत् प्रार्थना करे॥३२॥

ओ षु वृष्णः प्रयज्यूना नव्यसे सुविताय ।
ववृत्यां चित्रवाजान् ॥३३॥

अत्यन्त प्रार्थनीय तथा अद्भुत शक्ति -सम्मन्न मरुद्गणों को नवीन ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए हम अपने पास बुलाते हैं॥३३॥

गिरयश्चिन्नि जिहते पर्शानासो मन्यमानाः ।
पर्वताश्चिन्नि येमिरे ॥३४॥

उन वीर मरुतों के आवागमन से उच्च चोटियों वाले पर्वत अपनी जगह से हिल जाते हैं। विशाल पर्वत सदृश मेघ भी अपनी मर्यादा में (एक स्थान पर) स्थिर नहीं रह पाते हैं॥३४॥

आक्षणयावानो वहन्त्यन्तरिक्षेण पततः ।
धातारः स्तुवते वयः ॥३५॥

आँखों की पलकों के समान वेग वाले घोड़े अपने भक्तों को अन्न प्रदान करने वाले मरुद्गणों को आकाश मार्ग से ले जाते हैं॥३५॥

अग्निर्हि जानि पूर्व्यश्छन्दो न सूरो अर्चिषा ।
ते भानुभिर्वि तस्थिरे ॥३६॥

अग्निदेव अपने तेजोबल से सूर्य के सदृश सर्वश्रेष्ठ होकर उत्पन्न हुए। इसी प्रकार वे मरुद्गण भी अपने तेजोबल से सर्वव्यापी होकर निवास करते हैं॥३६॥

# सूक्त ८

ऋषि: सध्वंस: काण्व:।
देवता – आश्विनौ:। छंद – अनुष्टुप

आ नो विश्वाभिरूतिभिरश्विना गच्छतं युवम् ।
दस्रा हिरण्यवर्तनी पिबतं सोम्यं मधु ॥१॥

हे शत्रुहन्ता अश्विनीकुमारो ! आप अपने रक्षण- साधनों के साथ स्वर्णिम रथ पर आसीन होकर हमारे निकट पधारे और मधुर सोमरस का पान करें॥१॥

आ नूनं यातमश्विना रथेन सूर्यत्वचा ।
भुजी हिरण्यपेशसा कवी गम्भीरचेतसा ॥२॥

स्वर्णिम शरीर से सुशोभित होने वाले हे अश्विनीकुमारो ! आप श्रेष्ठ कर्मशील तथा महान् क्रांतदर्शी हैं । आप सूर्य के समान कान्तिवाले रथ पर आरूढ़ होकर हमारे निकट पधारें॥२॥

आ यातं नहुषस्पर्यान्तरिक्षात्सुवृक्तिभिः ।
पिबाथो अश्विना मधु कण्वानां सवने सुतम् ॥३॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप हमारी प्रार्थना से प्रसन्न होकर अन्तरिक्ष से पधारें । कण्ववंशीय षियों द्वारा आयोजित यज्ञ में पहुँचकर आप निचोड़कर तैयार किये गये मधुर सोमरस का पान करें॥३॥

आ नो यातं दिवस्पर्यान्तरिक्षादधप्रिया ।
पुत्रः कण्वस्य वामिह सुषाव सोम्यं मधु ॥४॥

भूलोक वासियों द्वारा निष्पन्न सोमरस को पसन्द करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! आष दिव्यलोक तथा अन्तरिक्ष लोक से हमारे निकट पधारें । आपके निमित्त शहद मिश्रित सोमरस को कण्ववंशियों ने तैयार किया है॥४॥

आ नो यातमुपश्रुत्यश्विना सोमपीतये ।
स्वाहा स्तोमस्य वर्धना प्र कवी धीतिभिर्नरा ॥५॥

हे ज्ञानी अश्विनीकुमारो ! आप हमारे द्वारा प्रार्थना किये जाने पर हमें समृद्धशाली बनाते हैं । अत: इस में सोमपान करने के निमित्त अवश्य पधारें॥५५॥

यच्चिद्धि वां पुर ऋषयो जुहूरेऽवसे नरा ।
आ यातमश्विना गतमुपेमां सुष्टुतिं मम ॥६॥

हे अश्विनीकुमारो ! प्राचीन काल में अपनी सुरक्षा के लिए जब ऋषियों ने आपका आवाहन !ि था, आप उपस्थित हुए, अत: हमारे द्वारा भावनापूर्वक प्रार्थना करने पर आप पुन: पधारें॥६॥

दिवश्चिद्रोचनादध्या नो गन्तं स्वर्विदा ।
धीभिर्वत्सप्रचेतसा स्तोमेभिर्हवनश्रुता ॥७॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप आत्मज्ञानी हैं तथा अपने भक्तों की पुकार को सुनने वाले और पुत् प्रेम करून वाले हैं। आप हमारी स्तुतियों को सुनकर दिव्यान्तरिक्ष लोक से अवश्य पधारें॥७॥

किमन्ये पर्यासतेऽस्मत्स्तोमेभिरश्विना ।
पुत्रः कण्वस्य वामृषिर्गीर्भिर्वत्सो अवीवृधत् ॥८॥

हमारे अतिरिक्त अन्य कौन उपासक भली प्रकार से आपकी प्रार्थना करते हैं ? हे अश्विनीकुमार ! हो । ऋषि के पुत्र 'वत्सग्रेषि' अपने स्तोत्रों से आपको समृद्ध करते हैं॥८॥

आ वां विप्र इहावसेऽह्वत्स्तोमेभिरश्विना ।
अरिप्रा वृत्रहन्तमा ता नो भूतं मयोभुवा ॥९॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप पापरहित तथा वृत्रासुर को मारने वाले हैं। अपनी रक्षा के निमित्त याजकग3 आवाहन करते हैं । हे अश्विनीकुमारो ! आप हमारे लिए कल्याणप्रद सिद्ध हों॥९॥

आ यद्वां योषणा रथमतिष्ठद्वाजिनीवसू ।
विश्वान्यश्विना युवं प्र धीतान्यगच्छतम् ॥१०॥

शक्तिशाली तथा धनवान् हे अश्विनीकुमारो ! जब आपके रथ पर (आकाश मंडल में) देवी उषा पूर्णम् । सुशोभित होती हैं, तब आप दोनों ध्यान की पराकाष्ठा में पहुँच जाते हैं॥१०॥

अतः सहस्रनिर्णिजा रथेना यातमश्विना ।
वत्सो वां मधुमद्वचोऽशंसीत्काव्यः कविः ॥११॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों के निमित्त विद्वान् क्रान्तदर्शी ब्रष वत्स ने मधुर वाणी में स्तोत्रमान पि; अत: आप हजारों प्रकार से सुशोभित रथ पर आरूढ़ होकर पधारें॥११॥

पुरुमन्द्रा पुरूवसू मनोतरा रयीणाम् ।

स्तोमं मे अश्विनाविममभि वह्नी अनूषाताम् ॥१२॥

हे धनवान् अश्विनीकुमारो ! आप दोनों मनोवांछित ऐश्वर्य तथा प्रसन्नता प्रदान करने वाले हैं। आर३ गत् के वहनकर्ता है, अत: हमारे स्तवन को सुनकर हर्षित हों॥१२॥

आ नो विश्वान्यश्विना धत्तं राधांस्यह्रया ।
कृतं न ऋत्वियावतो मा नो रीरधतं निदे ॥१३॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों हमें पवित्र ऐश्वर्य प्रदान करें तथा सृजनात्मक कार्य करने में समर्थ बनाएँ। आप हमें निन्दक लोगों के अधीन न करें॥१३॥

यन्नासत्या परावति यद्वा स्थो अध्यम्बरे ।
अतः सहस्रनिर्णिजा रथेना यातमश्विना ॥१४॥

सहस्रों प्रकार के ऐश्वर्य से सम्पन्न तथा सत्य के पालक हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों चाहे दिव्यलोक में हों अथवा किसी अन्य लोक में अपने रथ के द्वारा यहाँ अवश्य पधारे॥१४॥

यो वां नासत्यावृषिर्गीर्भिर्वत्सो अवीवृधत् ।
तस्मै सहस्रनिर्णिजमिषं धत्तं घृतश्चुतम् ॥१५॥

सत्य के पालक हे अश्विनीकुमारो ! अपनी प्रार्थनाओं के द्वारा जिन वत्स ऋषि ने आपको समृद्ध किया था, उनको सहघा रूपों में ऐश्वर्यवान् बनाएँ॥१५॥

प्रास्मा ऊर्जं घृतश्चुतमश्विना यच्छतं युवम् ।
यो वां सुम्नाय तुष्टवद्वसूयाद्दानुनस्पती ॥१६॥

हे दानदाता अश्विनीकुमारो ! सुख की कामना करने वाले साधक आपकी प्रार्थना करते हैं । ऐश्वर्य की कामना करने वाले तथा यज्ञ के निमित्त घृत की धार समर्पित करने वाले याजकों को शक्तिदायक अन्न प्रदान करें॥१६॥

आ नो गन्तं रिशादसेमं स्तोमं पुरुभुजा ।
कृतं नः सुश्रियो नरेमा दातमभिष्टये ॥१७॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों, रिषुओं के विनाशक तथा सज्जनों का पालन करने वाले हैं। आप हमारी प्रार्थनाओं को ग्रहण करके श्रेष्ठ सौंदर्य युक्त सुखकारक पदार्थों को प्रदान करने के लिए पधारें॥१७॥

आ वां विश्वाभिरूतिभिः प्रियमेधा अहूषत ।

राजन्तावध्वराणामश्विना यामहूतिषु ॥१८॥

हे अश्विनीकुमारो ! प्रियमेध ऋषि ने देवताओं का आवाहन करते समय आप दोनों को भी रक्षा – साधनों के साथ बुलाया है। आप इस श्रेष्ठ यज्ञ में पधारकर विराजमान हों॥१८॥

आ नो गन्तं मयोभुवाश्विना शम्भुवा युवम् ।
यो वां विपन्यू धीतिभिर्गीर्भिर्वत्सो अवीवृधत् ॥१९॥

प्रशंसा के योग्य हे अश्विनीकुमारो ! उन वत्स ऋषि के आनन्दवर्धक तथा शान्तिप्रदायक यज्ञादि कार्यों तथा वचनों से प्रसन्न होकर आप दोनों हमारे निकट पधारें॥१९॥

याभिः कण्वं मेधातिथिं याभिर्वशं दशव्रजम् ।
याभिर्गोशर्यमावतं ताभिर्नोऽवतं नरा ॥२०॥

हे अश्विनीकुमारों ! जिन रक्षण-साधनों से आपने 'कण्व' मेधातिथि, वश, दशवज, गोश (शयु) की रक्षा की थी, उन्हीं साधनों से हमारी भी रक्षा करें॥२०॥

याभिर्नरा त्रसदस्युमावतं कृत्व्ये धने ।
ताभिः ष्वस्माँ अश्विना प्रावतं वाजसातये ॥२१॥

हे अश्विनीकुमारो ! प्राप्त करने योग्य ऐश्वर्य के सम्बन्ध में जिन रक्षण-साधनों से अपने प्रेसदस्य को रक्षित किया था, उन्हीं साधनों से ऐश्वर्य वितरण करने के निमित्त हमारी भी रक्षा करें॥२१॥

प्र वां स्तोमाः सुवृक्तयो गिरो वर्धन्त्वश्विना ।
पुरुत्रा वृत्रहन्तमा ता नो भूतं पुरुस्पृहा ॥२२॥

अनेकों के रक्षक तथा वृत्रहन्ता हे अश्विनीकुमारो ! भली-भाँति उच्चरित स्तोत्र आप दोनों को समृद्ध करें । आप हमारे लिए वांछनीय धन प्रदान करने वाले हो॥२२॥

त्रीणि पदान्यश्विनोराविः सान्ति गुहा परः ।
कवी ऋतस्य पत्मभिरर्वाग्जीवेभ्यस्परि ॥२३॥

अश्विनीकुमारों के तीन चक्र गुह्य क्षेत्र से परे (दृश्य जगत् से अलग ) रहते हैं। वे दोनों प्रत्यक्ष यज्ञरूप रथ से प्राणियों के सामने प्रकट होते हैं॥२३॥

# सूक्त ९

ऋषि: शशकर्ण काण्व:।
देवता – आश्विनौ:। छंद – अनुष्टुप, १, ४, ६, १४, १५ बृहती, २,३, २०, २१ गायत्री, ५ ककुप्, १० त्रिष्टुप, ११ विराट, १२ जगती

आ नूनमश्विना युवं वत्सस्य गन्तमवसे ।
प्रास्मै यच्छतमवृकं पृथु च्छर्दिर्युयुतं या अरातयः ॥१॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों वत्स ऋषि की सुरक्षा के निमित्त निश्चित रूप से पधारें । उन्हें क्रोधी मनुष्यों से सुरक्षित विशाल आवास प्रदान करें । तत्पश्चात् आप दोनों उनके रिपुओं को दूर भगाएँ॥१॥

यदन्तरिक्षे यद्दिवि यत्पञ्च मानुषाँ अनु ।
नृम्णं तद्धत्तमश्विना ॥२॥

हे अश्विनीकुमारो ! जो ऐश्वर्य अन्तरिक्ष, दिव्यलोक तथा (पृथ्वी पर) पाँच प्रकार के मनुष्यों के पास उपलब्ध रहता है, वहीं ऐश्वर्य हमें भी प्रदान करें॥२॥

ये वां दंसांस्यश्विना विप्रासः परिमामृशुः ।
एवेत्काण्वस्य बोधतम् ॥३॥

हे अश्विनीकुमारो ! कण्व पुत्रों ने तथा जिन विद्वान् पुरुषों ने अपनी प्रार्थनाओं के द्वारा आपके कर्मों को ज्ञात कर लिया है, आप उनकी जानकारी रखें अर्थात् उनकी रक्षा करें॥३॥

अयं वां घर्मो अश्विना स्तोमेन परि षिच्यते ।
अयं सोमो मधुमान्वाजिनीवसू येन वृत्रं चिकेतथः ॥४॥

हे अश्विनीकुमारो ! आपके निमित्त यह घर्म (गमी या ऊर्जा उत्पादक-यज्ञ अथवा सोम) स्तोत्रों (मंत्रशक्ति) द्वारा सिंचित (परिपुष्ट) किया जा रहा है । हे बल – सम्पन्न देवो ! यही वह मधुर सोम हैं, जिससे आप वृत्र को देख (पहचान लेते हैं॥४॥

यदप्सु यद्वनस्पतौ यदोषधीषु पुरुदंससा कृतम् ।
तेन माविष्टमश्विना ॥५॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिस शक्ति से आप दोनों ने ओषधियों, विशाल वृक्षों तथा जल को रक्षित किया, उसी बल से हमारी भी रक्षा करें॥५॥

यन्नासत्या भुरण्यथो यद्वा देव भिषज्यथः ।
अयं वां वत्सो मतिभिर्न विन्धते हविष्मन्तं हि गच्छथः ॥६॥

श्रेष्ठ दान दाता हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों जगत् के पालन करने वाले तथा सभी को स्वस्थ रखने वाले हैं । केवल ज्ञान के द्वारा ये स्तोतागण आपको नहीं प्राप्त कर सकते; क्योंकि आप तो हवि प्रदान करने वाले याजकों के निकट जाते हैं॥६॥

आ नूनमश्विनोर्ऋषिः स्तोमं चिकेत वामया ।
आ सोमं मधुमत्तमं घर्मं सिञ्चादथर्वणि ॥७॥

अश्विनीकुमारों की स्तुतियों को स्तोताओं ने अपनी श्रेष्ठ बुद्धि से सम्पन्न किया। मधुर सोमरस तथा घृत सिंचित हवि को उन्होंने समर्पित किया॥७॥

आ नूनं रघुवर्तनिं रथं तिष्ठाथो अश्विना ।
आ वां स्तोमा इमे मम नभो न चुच्यवीरत ॥८॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों तेज चलने वाले रथ पर आरूढ़ होते हैं । नभ की तरह विस्तृत हमारी स्तुतियाँ आपको प्राप्त हों॥८॥

यदद्य वां नासत्योक्थैराचुच्युवीमहि ।

यद्वा वाणीभिरश्विनेवेत्काण्वस्य बोधतम् ॥९॥

हे सत्यनिष्ठ अश्विनीकुमारो ! आज जिस प्रकार शास्त्र वचनों के द्वारा आपको बुलाया गया है, जिस प्रकार स्तुतियों द्वारा आपको बुलाया गया है, उसी प्रकार मुझ कण्व ऋष द्वारा स्तोत्रों के माध्यम से आपका आवाहन किया जाता है॥९॥

यद्वां कक्षीवाँ उत यद्व्यश्व ऋषिर्यद्वां दीर्घतमा जुहाव ।
पृथी यद्वां वैन्यः सादनेष्वेवेदतो अश्विना चेतयेथाम् ॥१०॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार आप दोनों का कक्षीवान्, व्यश्व, दीर्घतमा ने आवाहन किया। जिस प्रकार यज्ञ स्थल पर बेनपुत्र पृथी ने आवाहित किया था, उसी प्रकार हम आपको इस समय आवाहन करते हैं, आप इसे (हदगत भाव को ) जानें॥१०॥

यातं छर्दिष्पा उत नः परस्पा भूतं जगत्पा उत नस्तनूपा ।
वर्तिस्तोकाय तनयाय यातम् ॥११॥

सबके घरों की रक्षा करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! आप हमारे तथा हमारे घर और समस्त संसार के पालक बनें । आप हमारे पुत्र-पौत्रों के कल्याण के लिए घर पर पधारें॥११॥

यदिन्द्रेण सरथं याथो अश्विना यद्वा वायुना भवथः समोकसा ।
यदादित्येभिर्ऋभुभिः सजोषसा यद्वा विष्णोर्विक्रमणेषु तिष्ठथः ॥१२॥

हे अश्विनीकुमारो ! यदि आप इन्द्रदेव के साथ उनके रथ पर आसीन होकर गमन करते हैं, वायुदेव के साथ एक जगह निवास करते हैं, अदिति पुत्रों अथवा ऋभु संज्ञक देवों के साथ प्रेमपूर्वक रहते हैं तथा विष्णु के विशिष्ट पदक्षेप के साथ तीनों लोकों में विराजते हैं, तो हमारे निकट भी पधारें॥१२॥

यदद्याश्विनावहं हुवेय वाजसातये ।
यत्पृत्सु तुर्वणे सहस्तच्छ्रेष्ठमश्विनोरवः ॥१३॥

अश्विनीकुमारों का संरक्षण उच्च कोटि का है। संग्राम में रिपुओं का विनाश करने में वे पूर्ण सक्षम हैं, अत: अपनी रक्षा के लिए यदि उन्हें हम पुकारें तो वे निश्चित रूप से पधारेंगे॥१३॥

आ नूनं यातमश्विनेमा हव्यानि वां हिता ।
इमे सोमासो अधि तुर्वशे यदाविमे कण्वेषु वामथ ॥१४॥

यह सोमरस 'तुर्वश' और 'यदु' के घर पर विद्यमान हैं, यह कण्व पुत्र को प्रदान किया गया था। हे अश्विनी कुमारो ! यह सोमरस हव्य

आपके लिए प्रस्तुत है, अत: आप (इसका पान करने के लिए) पधारें॥१४॥

यन्नासत्या पराके अर्वाके अस्ति भेषजम् ।
तेन नूनं विमदाय प्रचेतसा छर्दिर्वत्साय यच्छतम् ॥१५॥

सत्यनिष्ठ हे अश्विनीकुमारो ! जो ओषधियाँ निकट तथा दूर प्रदेश में उपलब्ध है, उनसे संयुक्त रहने हेतु श्रेष्ठ आवास, अहंकाररहित वत्स अर्घष के लिए प्रदान करें॥१५॥

अभुत्स्यु प्र देव्या साकं वाचाहमश्विनोः ।
व्यावर्देव्या मतिं वि रातिं मर्त्येभ्यः ॥१६॥

दोनों अश्विनीकुमारों की दिव्य वाणियों से हम चैतन्य हो गये हैं। हे प्रकाशमान उषा देवि ! आप अंधकार को दूर करके सभी मनुष्यों को सद्‌बुद्धि तथा उपयुक्त ऐश्वर्य प्रदान करें॥१६॥

प्र बोधयोषो अश्विना प्र देवि सूनृते महि ।
प्र यज्ञहोतरानुषक्प्र मदाय श्रवो बृहत् ॥१७॥

हे प्रकाशमान तथा महान् उषा देवि ! आप अश्विनीकुमारों को प्रेरित करें । हे याजको ! आप अश्विनीकुमारों को आनन्द प्रदायक प्रचुर हव्य प्रदान करें॥१७॥

यदुषो यासि भानुना सं सूर्येण रोचसे ।
आ हायमश्विनो रथो वर्तिर्याति नृपाय्यम् ॥१८॥

हे उषादेवि ! जब आप स्वर्णिम किरणों से सम्पन्न होकर चलती हैं, सूर्य के तेज़ से प्रकाशित हो जाती हैं, उस समय अश्विनीकुमारों का रथ मनुष्यों को स्वास्थ्य लाभ प्रदान करने के लिए यज्ञ मण्डप में प्रवेश करता है॥१८॥

यदापीतासो अंशवो गावो न दुह्र ऊधभिः ।
यद्वा वाणीरनूषत प्र देवयन्तो अश्विना ॥१९॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिस समय पीतवर्ण की सोमलताएँ गाय के थन के दूध निकालने के समान निचोड़ी जाती हैं तथा जिस समय देवत्व की कामना करने वाले अपने स्तुति वचनों से आपकी प्रार्थना करते हैं, उस समय आप हमारे संरक्षक हों॥१९॥

प्र दयुम्नाय प्र शवसे प्र नृषाह्याय शर्मणे ।
प्र दक्षाय प्रचेतसा ॥२०॥

श्रेष्ठ ज्ञान से सम्पन्न हे अश्विनीकुमारो ! आप हमें ऐसी प्रेरणा प्रदान करें, जिससे हम शक्ति, ऐश्वर्य, सहनशीलता तथा श्रेष्ठ कार्य करने का कौशल प्राप्त कर सकें॥२०॥

यन्नूनं धीभिरश्विना पितुर्योना निषीदथः ।
यद्वा सुम्नेभिरुक्थ्या ॥२१॥

प्रशंसा के योग्य हे अश्विनीकुमारो ! आप हमारे पिता तुल्य हैं । अत: जिस प्रकार पिता अपने पुत्रों के लिए प्रत्येक सुख-साधन उपलब्ध कराता हैं, उसी प्रकार आप हमें हर्ष प्रदान करें॥२१॥

# सूक्त १०

ऋषि: प्रगाथो काण्व:।
देवता – आश्विनौ:। छंद – १ बृहती, २ मध्येज्योति, ३ अनुष्टुप, ४ आस्तार पंक्ति, ५-६ प्रगाथ

यत्स्थो दीर्घप्रसद्मनि यद्वादो रोचने दिवः ।
यद्वा समुद्रे अध्याकृते गृहेऽत आ यातमश्विना ॥१॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों चाहे पृथ्वी रूप विशाल यज्ञमण्डप में रहते हों या प्रकाशमान दिव्यलोक में अथवा अन्तरिक्ष-लोक में निवास करते हों, आप उस स्थान से हमारे निकट अवश्य पधारें॥१॥

यद्वा यज्ञं मनवे सम्मिमिक्षथुरेवेत्काण्वस्य बोधतम् ।
बृहस्पतिं विश्वान्देवाँ अहं हुव इन्द्राविष्णू अश्विनावाशुहेषसा ॥२॥

हे अश्विनीकुमारो ! आपने जिस प्रकार मनु के यज्ञ को भली प्रकार से सिंचित किया था, उसी प्रकार कण्वपुत्रों के यज्ञ को भी समझें ।

बृहस्पति, इन्द्र, विष्णु एवं सभी देवगणों सहित हम आपका आवाहन करते हैं॥२॥

त्या न्वश्विना हुवे सुदंससा गृभे कृता ।
ययोरस्ति प्र णः सख्यं देवेष्वध्याप्यम् ॥३॥

जिनसे हमारी मित्रता है, वे दोनों अश्विनीकुमार श्रेष्ठ कर्म करने वाले हैं। वे हमारी आहुतियों को प्राप्त करने के लिए ही प्रकटे हुए हैं । देवगणों से उनकी मित्रता उच्चकोटि की हैं । इसीलिए हम उनकी आवाहन करते हैं॥३॥

ययोरधि प्र यज्ञा असूरे सन्ति सूरयः ।
ता यज्ञस्याध्वरस्य प्रचेतसा स्वधाभिर्या पिबतः सोम्यं मधु ॥४॥

वे दोनों अश्विनीकुमार अज्ञानियों के बीच में जाकर ज्ञान का प्रचार करके उन्हें सन्मार्गगामी बनाते हैं । वे दोनों ऐसे यज्ञ का सञ्चालन बहुत ही बुद्धिमत्तापूर्वक करते हैं, जिसमें हिंसा नहीं होती। वे मधुर रस मिश्रित सोमरस का पान करें॥४॥

यदद्याश्विनावपाग्यत्प्राक्स्थो वाजिनीवसू ।
यद्द्रुह्यव्यनवि तुर्वशे यदौ हुवे वामथ मा गतम् ॥५॥

शक्ति सम्पन्न हे अश्विनीकुमार ! जब हम आपका आवाहन करें, तब आप चाहें पूर्व दिशा में विद्यमान हों या पश्चिम दिशा में अथवा द्रुह्य, अनु तथा यदु के समीप हों, वहाँ से हमारे पास अवश्य पधारें॥५॥

यदन्तरिक्षे पतथः पुरुभुजा यद्वेमे रोदसी अनु ।
यद्वा स्वधाभिरधितिष्ठथो रथमत आ यातमश्विना ॥६॥

विशाल भुजाओं वाले हे अश्विनीकुमारो ! जब आप दोनों अपने तेजोबल से रथारूढ़ होकर अन्तरिक्ष लोक, दिव्यलोक तथा पृथ्वी लोक में विचरण कर रहे हों, उस समय आप हमारे समीप भी पधारें॥६॥

# सूक्त ११

ऋषि: वत्स: काण्व:।
देवता – अग्नि: । छंद – गायत्री, १ प्रतिष्ठा, २ वर्धमाना, १० त्रिष्टुप

त्वमग्ने व्रतपा असि देव आ मर्त्येष्वा ।
त्वं यज्ञेष्वीड्यः ॥१॥

दिव्यगुण सम्पन्न हे अग्निदेव ! आप मनाया और देवताओं के बीच में श्रो संकल्प के संरक्षक हैं, इसलिए समस्त यज्ञो में आपकी उपस्थिति के लिए प्रार्थना की जाती हैं॥१॥

त्वमसि प्रशस्यो विदथेषु सहन्त्य ।
अग्ने रथीरध्वराणाम् ॥२॥

रिपुओं को परास्त करने वाले हे अग्निदेव ! आप हिसारहित श्रेष्ठ यज्ञों के नेतृत्वकर्ता हैं, इसलिए समस्न यज्ञो में आपकी स्तुति होती है॥२॥

स त्वमस्मदप द्विषो युयोधि जातवेदः ।
अदेवीरग्ने अरातीः ॥३॥

समस्त पदार्थों के ज्ञाता है अग्निदेव ! आप शत्रुओं को तथा उनकी सेनाओं को हमसे दूर भगाएं॥३॥

अन्ति चित्सन्तमह यज्ञं मर्तस्य रिपोः ।
नोप वेषि जातवेदः ॥४॥

हे ज्ञान- सम्पन्न अग्निदेव ! निकट रहने पर भी आप शत्रुओं क यज्ञ में कभी जाने की इच्छा नक नहीं करन ॥४॥

मर्ता अमर्त्यस्य ते भूरि नाम मनामहे ।
विप्रासो जातवेदसः ॥५॥

हे अग्निदेव ! आप सभी पदार्थों को जानने वाले ज्ञानी हैं। आपके विराट् अविनाशी नाम का हम चिन्नन करते हैं॥५॥

विप्रं विप्रासोऽवसे देवं मर्तास ऊतये ।
अग्निं गीर्भिर्हवामहे ॥६॥

मेधावी अग्निदेव को प्रसन्न करने के लिए हम उनकी स्तुति करते हुए आतियां समर्पित करते हैं। अपनी रक्षा के लिए हम उनका आवाहन करते हैं॥६॥

आ ते वत्सो मनो यमत्परमाच्चित्सधस्थात् ।
अग्ने त्वांकामया गिरा ॥७॥

हे सर्वव्यापी , प्रदीप्त अग्निदेवे ! हम आपके पुत्र , हृदय से आपकी स्तुति करते हुए आपको अपनी ओर आकर्षित करना चाहते हैं॥७॥

पुरुत्रा हि सदृङ्ङसि विशो विश्वा अनु प्रभुः ।
समत्सु त्वा हवामहे ॥८॥

हे अग्निदेव ! आप सर्वत्र समान दृष्टि रखने वाले सभी प्रजाओं के अधिपति हैं, अतः युद्ध में अपनी सुरक्षा के निमित्त हम आपका आवाहन करते हैं॥८॥

समत्स्वग्निमवसे वाजयन्तो हवामहे ।
वाजेषु चित्रराधसम् ॥९॥

हम संग्राम में बल प्राप्ति एवं संरक्षण के लिए अद्भुत सामर्थ्यवान् एवं धन- सम्पन्न अग्निदेव का आवाहन करते हैं॥९॥

प्रत्नो हि कमीड्यो अध्वरेषु सनाच्च होता नव्यश्च सत्सि ।
स्वां चाग्ने तन्वं पिप्रयस्वास्मभ्यं च सौभगमा यजस्व ॥१०॥

हे अग्निदेव ! प्राचीन काल से ही आप समस्त यज्ञों में प्रार्थनीय तथा आनन्द प्रदायक है । बहुत पहले से ही आप यज्ञों में होतारूप तथा प्रार्थना के योग्य होकर आसीन होते रहे हैं । आप हवियों द्वारा म्वयं प्रसन्न हों तथा हमें भी सौभाग्यवान् बनाएँ॥१०॥

# सूक्त १२

ऋषि: पर्वत: काण्व:।
देवता – इन्द्र: । छंद – उष्णिक, ३३ शंकुमती

य इन्द्र सोमपातमो मदः शविष्ठ चेतति ।
येना हंसि न्यत्रिणं तमीमहे ॥१॥

सोमपान करने वालों में श्रेष्ठ हे बलशाली इन्द्रदेव ! आप उल्लसित होकर कार्यों के प्रति जागरूक होते हैं। जिस बल से आप घातक असुरों (आसुरी वृत्तियों) को नष्ट करते हैं, हम आपसे वही सामर्थ्य माँगते हैं॥१॥

येना दशग्वमध्रिगुं वेपयन्तं स्वर्णरम् ।
येना समुद्रमाविथा तमीमहे ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! जिस शक्ति से आपने अंगिरा वंशीय अधिगु' की, अंधेरे को नष्ट करने वाले सूर्य की तथा समुद्र या अन्तरिक्ष की रक्षा की थी, उसी शक्ति की हम आपसे याचना करते हैं॥२॥

येन सिन्धुं महीरपो रथाँ इव प्रचोदयः ।
पन्थामृतस्य यातवे तमीमहे ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आपने जिस बल से विशाल जल राशियों को रथ की भाँति समुद्र की ओर प्रेरित (गतिशील) किया, उसी बल को हम यज्ञीय पथ पर गमन करने के लिए आपसे माँगते हैं॥३॥

इमं स्तोममभिष्टये घृतं न पूतमद्रिवः ।
येना नु सद्य ओजसा ववक्षिथ ॥४॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप घृत के सदृश हमारे द्वारा की गई पुनीत स्तुतियों को ग्रहण करें। आप बल-सम्पन्न होकर हमारे लिए वांछित ऐश्वर्य शीघ्र ही प्रदान करें॥४॥

इमं जुषस्व गिर्वणः समुद्र इव पिन्वते ।
इन्द्र विश्वाभिरूतिभिर्ववक्षिथ ॥५॥

है इन्द्रदेव ! जिस प्रकार नदियों के जल से समुद्र बढ़ता है, उसी प्रकार हमारी प्रार्थनाओं से समृद्ध होकर आप अपने समस्त रक्षण – साधनों से हमारी रक्षा करें॥५॥

यो नो देवः परावतः सखित्वनाय मामहे ।
दिवो न वृष्टिं प्रथयन्ववक्षिथ ॥६॥

दिव्यगुणों से सम्पन्न इन्द्रदेव ने सुदूर स्थान से आगमन कर हमारी मित्रता की वृद्धि के लिए ऐश्वर्य प्रदान झिया । हे इन्द्रदेव ! अन्तरिक्ष से वर्षा होने के सदृश आप हमें प्रचुर धन प्रदान करें॥६॥

ववक्षुरस्य केतव उत वज्रो गभस्त्योः ।
यत्सूर्यो न रोदसी अवर्धयत् ॥७॥

सूर्य के सदृश वे इन्द्रदेव जब वृष्टि आदि श्रेष्ठ कार्यों से द्युलोक तथा पृथ्वीलोक को समृद्ध करते हैं, तब उनको विजय पताकाएँ तथा हाथ में वज्र अत्यन्त सुशोभित होते हैं॥७॥

यदि प्रवृद्ध सत्पते सहस्रं महिषाँ अघः ।
आदित्त इन्द्रियं महि प्र वावृधे ॥८॥

सत्पात्रों के पालक हे महान् इन्द्रदेव ! जब आपने सहस्रों राक्षसों का वध किया, तब आपकी शक्ति और बढ़ गयीं॥८॥

इन्द्रः सूर्यस्य रश्मिभिर्न्यर्शसानमोषति ।
अग्निर्वनेव सासहिः प्र वावृधे ॥९॥

जिस प्रकार अग्निदेव जंगलों को जलाकर राख कर देते हैं, उसी प्रकार इन्द्रदेव सूर्य की किरणों के द्वारा, दुःख देने वाले शत्रुओं को जला डालते हैं। रिपुओं का विनाश करके वे समृद्ध होते हैं॥९॥

इयं त ऋत्वियावती धीतिरेति नवीयसी ।
सपर्यन्ती पुरुप्रिया मिमीत इत् ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! सबका सम्मान करने वाली, यज्ञ में प्रयुक्त होने वाली, नूतन तथा बहुप्रिय स्तुतियाँ आपका गुणगान करती हुई आपके पास पहुँचती हैं॥१०॥

गर्भो यज्ञस्य देवयुः क्रतुं पुनीत आनुषक् ।
स्तोमैरिन्द्रस्य वावृधे मिमीत इत् ॥११॥

यज्ञ को सम्पन्न करने वाले, देवताओं को प्राप्त करने की कामना करने वाले याजकगण अपने कार्यों को भली-भाँति सम्पन्न करते रहते हैं । वे अपनी प्रार्थनाओं से इन्द्रदेव का गुणगान करके उन्हें समृद्ध करते हैं॥११॥

सनिर्मित्रस्य पप्रथ इन्द्रः सोमस्य पीतये ।

प्राची वाशीव सुन्वते मिमीत इत् ॥१२॥

अपने मित्रों को ऐश्वर्य प्रदान करने वाले इन्द्रदेव याजकों द्वारा स्तुतिगान करते हुए समर्पित किये गये सोमरस का पान करते हैं। इससे उनके यश की वृद्धि होती हैं॥१२॥

यं विप्रा उक्थवाहसोऽभिप्रमन्दुरायवः ।
घृतं न पिप्य आसन्यृतस्य यत् ॥१३॥

ज्ञानी तथा प्रार्थना करने वाले याजकगण यज्ञाग्नि में स्थापित की जाने वाली घृत आहुतियों के सदृश सोमरूप वियों को इन्द्रदेव के मुख में समर्पित कर उन्हें प्रसन्न करते हैं॥१३॥

उत स्वराजे अदितिः स्तोममिन्द्राय जीजनत् ।
पुरुप्रशस्तमूतय ऋतस्य यत् ॥१४॥

यज्ञरूप सत्य की रक्षा के लिए अदिति ने स्वप्रकाशित इन्द्रदेव की प्रशंसा कराने वाले अनेकों उत्तम स्तोत्रों की रचना की॥१४॥

अभि वह्नय ऊतयेऽनूषत प्रशस्तये ।
न देव विव्रता हरी ऋतस्य यत् ॥१५॥

अपनी प्रशंसा तथा सुरक्षा के लिए याजकगण उन इन्द्रदेव की प्रार्थना करते हैं। हे इन्द्रदेव ! विभिन्न श्रेष्ठ कर्म करने वाले अश्व आपको यज्ञस्थल पर ले आएँ॥१५॥

यत्सोममिन्द्र विष्णवि यद्वा घ त्रित आप्त्ये ।
यद्वा मरुत्सु मन्दसे समिन्दुभिः ॥१६॥

हे इन्द्रदेव ! यज्ञों में विष्णु के उपस्थित होने के बाद आपने सोमपान किया था । त्रितआप्त्य एवं मरुद्गणों के साथ सोमरस के सेवन से आनन्दित होने वाले आप हमारे यज्ञ में भी सोमपान करके आनन्दित हों॥१६॥

यद्वा शक्र परावति समुद्रे अधि मन्दसे ।
अस्माकमित्सुते रणा समिन्दुभिः ॥१७॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार सुदूर क्षेत्र में सोमरस पान करके आप हर्षित होते हैं, उसी प्रकार हमारे यज्ञ में भी सोमपान करके हर्षित हों॥१७॥

यद्वासि सुन्वतो वृधो यजमानस्य सत्पते ।
उक्थे वा यस्य रण्यसि समिन्दुभिः ॥१८॥

हे सत्य के पालक इन्द्रदेव ! आप जिस याजक के यज्ञ में विधिवत् सोमपान करके आनन्दित होते हैं । उस याजक को आप बढ़ाते हैं॥१८॥

देवंदेवं वोऽवस इन्द्रमिन्द्रं गृणीषणि ।
अधा यज्ञाय तुर्वणे व्यानशुः ॥१९॥

सबकी रक्षा के लिए देवाधिदेव इन्द्रदेव की हम प्रार्थना करते हैं। हमारी प्रार्थना को सुनकर वे रिपुओं का हनन करने तथा यज्ञ में भाग लेने के लिए पधारें॥१९॥

यज्ञेभिर्यज्ञवाहसं सोमेभिः सोमपातमम् ।
होत्राभिरिन्द्रं वावृधुर्व्यानशुः ॥२०॥

यज्ञों में आहूत करने योग्य तथा सर्वाधिक सोमपान करने वाले इन्द्रदेव को याजकगण अपने यज्ञों, सोमों तथा प्रार्थनाओं से समृद्ध करते हैं और उनके अनुग्रह को प्राप्त करते हैं॥२०॥

महीरस्य प्रणीतयः पूर्वीरुत प्रशस्तयः ।
विश्वा वसूनि दाशुषे व्यानशुः ॥२१॥

इन इन्द्रदेव की अनेकों नीतियाँ हैं। वे प्राचीन काल से ही यशस्वी रहे हैं। दान दाता को वे प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करते हैं॥२१॥

इन्द्रं वृत्राय हन्तवे देवासो दधिरे पुरः ।
इन्द्रं वाणीरनूषता समोजसे ॥२२॥

देवताओं ने वृत्र का वध करने के लिए इन्द्रदेव को अग्रणी किया। अत: शक्ति के निमित्त हमारी वाणियाँ उन्हीं की प्रार्थना करती हैं॥२२॥

महान्तं महिना वयं स्तोमेभिर्हवनश्रुतम् ।
अर्कैरभि प्र णोनुमः समोजसे ॥२३॥

अपनी सामर्थ्य से ही महान् बने तथा याजकों की पुकार को सुनने वाले इन्द्रदेव की प्रार्थना में करते हैं । हम बल प्राप्ति के निमित्त यज्ञों तथा स्तवनों के द्वारा उनका सम्मान करते हैं॥२३॥

न यं विविक्तो रोदसी नान्तरिक्षाणि वज्रिणम् ।
अमादिदस्य तित्विषे समोजसः ॥२४॥

वज्र धारण करने वाले जिन इन्द्रदेव को द्युलोक, पृथ्वी लोक तथा अन्तरिक्ष लोक भी अपने से अलग नहीं कर सकते, ऐसे शक्तिशाली इन्द्रदेव के तेज से ही सम्पूर्ण जगत् आलोकित हो रहा है॥२४॥

यदिन्द्र पृतनाज्ये देवास्त्वा दधिरे पुरः ।
आदित्ते हर्यता हरी ववक्षतुः ॥२५॥

हे इन्द्रदेव ! संग्राम में जब देवताओं ने आपको सबसे अग्रणी किया, तब दो बलशाली अश्वों ने आपको वहाँ पहुँचाया॥२५॥

यदा वृत्रं नदीवृतं शवसा वज्रिन्नवधीः ।
आदित्ते हर्यता हरी ववक्षतुः ॥२६॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! नदियों के जल को अवरुद्ध करने वाले वृत्र का वध करने के लिये दो बलवान् अश्वों ने आपको वहाँ पहुँचाया, तब आपने अपने बाहुबल से उसका वध किया॥२६॥

यदा ते विष्णुरोजसा त्रीणि पदा विचक्रमे ।
आदित्ते हर्यता हरी ववक्षतुः ॥२७॥

हे इन्द्रदेव ! जब विष्णुदेव ने अपनी शक्ति से तीन कदमों के द्वारा तीनों लोकों को नापा था, तब दो बलवान् अश्वों को वाहन बनाकर आप वहाँ पहुँचे थे॥२७॥

यदा ते हर्यता हरी वावृधाते दिवेदिवे ।
आदित्ते विश्वा भुवनानि येमिरे ॥२८॥

हे इन्द्रदेव ! जब आपके बलशाली अश्व दिनों-दिन समृद्ध हुए, तब आपने समस्त जगत् को अपने नियंत्रण में किया॥२८॥

यदा ते मारुतीर्विशस्तुभ्यमिन्द्र नियेमिरे ।
आदित्ते विश्वा भुवनानि येमिरे ॥२९॥

हे इन्द्रदेव ! जब मरुद्गण आपके निमित्त समस्त प्राणियों को नियंत्रित करते हैं, तब आप सम्पूर्ण लोकों को नियमित करते हैं॥२९॥

यदा सूर्यममुं दिवि शुक्रं ज्योतिरधारयः ।
आदित्ते विश्वा भुवनानि येमिरे ॥३०॥

हे इन्द्रदेव ! जब तेजोयुक्त तथा आलोकवान् सूर्य को आपने दिव्यलोक में स्थापित किया, तत्पश्चात् ही अपने समस्त लोकों को नियंत्रित किया॥३०॥

इमां त इन्द्र सुष्टुतिं विप्र इयर्ति धीतिभिः ।
जामिं पदेव पिप्रतीं प्राध्वरे ॥३१॥

जिस प्रकार कोई व्यक्ति अपने भाई को श्रेष्ठ दिशा की ओर अग्रसर करता है, उसी प्रकार ये ज्ञानी पुरुष हर्ष बढ़ाने वाली प्रार्थनाओं से इन्द्रदेव को यज्ञीय कर्मों की ओर ले जाते हैं॥३१॥

यदस्य धामनि प्रिये समीचीनासो अस्वरन् ।
नाभा यज्ञस्य दोहना प्राध्वरे ॥३२॥

स्तोतागण यज्ञ के बीच में सोमरस को अभिषुत करते समय, इन्द्रदेव के प्रिय स्थान यज्ञ मण्डप में एकत्रित होकर उनकी प्रार्थना करते हैं॥३२॥

सुवीर्यं स्वश्व्यं सुगव्यमिन्द्र दद्धि नः ।
होतेव पूर्वचित्तये प्राध्वरे ॥३३॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें श्रेष्ठ शक्ति, श्रेष्ठ अश्व तथा श्रेष्ठ गौओं से युक्त ऐश्वर्य प्रदान करें । हम यज्ञ में होता के सदृश ज्ञान सम्पन्न बनने के लिए आपकी प्रार्थना करते हैं॥३३॥

# सूक्त १३

ऋषि: नारद: काण्व:।
देवता – इन्द्र: । छंद – उष्णिक्

इन्द्रः सुतेषु सोमेषु क्रतुं पुनीत उक्थ्यम् ।
विदे वृधस्य दक्षसो महान्हि षः ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! तैयार किये गये सोमरस का पान करके आप यजमान और स्तोता को उन्नति की ओर बढ़ाने वाली शक्ति प्रदान करते हैं। आप दोनों को पवित्र कर देते हैं, क्योंकि आप महान् हैं॥१॥

स प्रथमे व्योमनि देवानां सदने वृधः ।
सुपारः सुश्रवस्तमः समप्सुजित् ॥२॥

दु:खों से छुड़ाने वाले, श्रेष्ठ कीर्ति वाले तथा आकाश में स्थित शत्रुओं को जीतने वाले इन्द्रदेव, विशाल अन्तरिक्ष में विद्यमान देवताओं के सान्निध्य में रहकर सबको समृद्ध करते हैं॥२॥

तमह्वे वाजसातय इन्द्रं भराय शुष्मिणम् ।
भवा नः सुम्ने अन्तमः सखा वृधे ॥३॥

हम उन बलवान् इन्द्रदेव को अन्न की वृद्धि के लिए यज्ञों में बुलाते हैं। हे इन्द्रदेव ! सुख एवं उन्नति के समय मार्गदर्शक के रूप में आप हमारे पास रहें॥३॥

इयं त इन्द्र गिर्वणो रातिः क्षरति सुन्वतः ।
मन्दानो अस्य बर्हिषो वि राजसि ॥४॥

स्तुतियोग्य हे इन्द्रदेव ! इस यज्ञ में प्रदान की हुई सोमरस की आहुतियाँ आपके लिए प्रवाहित हो रही हैं। आप प्रसन्नचित्त से इस आसन पर विराजमान हों॥४॥

नूनं तदिन्द्र दद्धि नो यत्त्वा सुन्वन्त ईमहे ।
रयिं नश्चित्रमा भरा स्वर्विदम् ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! सोमयज्ञ करते हुए हम आपसे याचना करते हैं कि आप हमें इच्छित ऐश्वर्य प्रदान करें तथा आत्मिक सुख प्रदान कराने वाली सम्पत्ति भी प्रदान करें॥५॥

स्तोता यत्ते विचर्षणिरतिप्रशर्धयद्गिरः ।
वया इवानु रोहते जुषन्त यत् ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! जब विद्वान् स्तोता आपके निमित्त रिपुओं को परास्त करने वाली स्तुतियाँ करते हैं । उन स्तुतियों से हर्षित होकर आपका बल, वृक्ष की शाखाओं की तरह बढ़ता है॥६॥

प्रत्नवज्जनया गिरः शृणुधी जरितुर्हवम् ।
मदेमदे ववक्षिथा सुकृत्वने ॥७॥

है इन्द्रदेव ! पहले की तरह आप स्तोत्र प्रकट करें तथा स्तोताओं की प्रार्थना को सुनकर हर्षित हों। जो यज्ञादि श्रेष्ठ कर्म करते हैं, उन्हें आप ऐश्वर्य प्रदान करें॥७॥

क्रीळन्त्यस्य सूनृता आपो न प्रवता यतीः ।
अया धिया य उच्यते पतिर्दिवः ॥८॥

इन इन्द्रदेव के निमित्त की गई प्रार्थनाएँ उनके पास उसी तरह पहुँचती हैं, जिस प्रकार नदियों का जल नीचे की ओर बहता है । दिव्यलोक के स्वामी इन्द्रदेव इन प्रार्थनाओं से प्रसन्न होते हैं॥८॥

उतो पतिर्य उच्यते कृष्टीनामेक इद्वशी ।

नमोवृधैरवस्युभिः सुते रण ॥९॥

स्तुति (गुणगान) कर्ता साधकों को समृद्ध करने वाले तथा सुरक्षा की कामना करने वालों को अपने वश में करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप सभी मनुष्यों के एक मात्र पालक कहलाते हैं। आप सोमयज्ञ में हर्षित हों॥९॥

स्तुहि श्रुतं विपश्चितं हरी यस्य प्रसक्षिणा ।
गन्तारा दाशुषो गृहं नमस्विनः ॥१०॥

हे याजको ! आप सब, ज्ञानी तथा यशस्वी इन्द्रदेव की प्रार्थना करें । रिपुओं को परास्त करने वाले इन्द्रदेव को उनके अश्व, स्तुतिकर्ता तथा दानी याजकों के घर ले जाते हैं॥१०॥

तूतुजानो महेमतेऽश्वेभिः प्रुषितप्सुभिः ।
आ याहि यज्ञमाशुभिः शमिद्धि ते ॥११॥

महान् बुद्धिमान हे इन्द्रदेव ! ओजस्वी रूप वाले तथा द्रुतगामी अश्वों वाले आप हमारे यज्ञ में शीघ्र पधारें । आपका आगमन सबके लिए हितकारक हैं॥११॥

इन्द्र शविष्ठ सत्पते रयिं गृणत्सु धारय ।
श्रवः सूरिभ्यो अमृतं वसुत्वनम् ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! आप शक्तिशाली तथा सत्य के पालक हैं । आप प्रार्थना करने वालों को ऐश्वर्य तथा ज्ञानियों को अक्षय धन प्रदान करें॥१२॥

हवे त्वा सूर उदिते हवे मध्यंदिने दिवः ।
जुषाण इन्द्र सप्तिभिर्न आ गहि ॥१३॥

हे इन्द्रदेव ! सूर्योदय तथा मध्याह्न के समय हम आपका आवाहन करते हैं। आप हमारी स्तुतियों को सुनकर अपने अश्वों के द्वारा हमारे निकट पधारें॥१३॥

आ तू गहि प्र तु द्रव मत्स्वा सुतस्य गोमतः ।
तन्तुं तनुष्व पूर्व्यं यथा विदे ॥१४॥

हे इन्द्रदेव ! आप यथा शीघ्र पधारें और गौ दुग्ध मिलाये हुए सोमरस को पीकर हर्षित हों । आप पहले की तरह ऐश्वर्य को प्रदान करने के लिए यज्ञ को विस्तृत करें॥१४॥

यच्छक्रासि परावति यदर्वावति वृत्रहन् ।
यद्वा समुद्रे अन्धसोऽवितेदसि ॥१५॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! आप वृत्र का वध करने वाले हैं। आप चाहे दूर हों या पास में हों अथवा आकाश में हों, (यहाँ आकर) सोमरस का पान करके आप हमारे संरक्षक बनें॥१५॥

इन्द्रं वर्धन्तु नो गिर इन्द्रं सुतास इन्दवः ।
इन्द्रे हविष्मतीर्विशो अराणिषुः ॥१६॥

हमारी प्रार्थनाएँ उन इन्द्रदेव का गुणगान करती हैं तथा निचोड़कर तैयार किया गया सोमरस उनको समृद्ध करता है। यज्ञ करने वाले साधक इन्द्रदेव के प्रति साधनारत होते हैं॥१६॥

तमिद्विप्रा अवस्यवः प्रवत्वतीभिरूतिभिः ।
इन्द्रं क्षोणीरवर्धयन्वया इव ॥१७॥

सुरक्षा की कामना वाले मेधावीजन शीघ्रकर्मी, संरक्षक इन्द्रदेव का स्तवन करते हैं । पृथ्वी पर आश्रित सभी जीव इन्द्रदेव को शाखाओं की तरह समृद्ध करते हैं॥१७॥

त्रिकद्रुकेषु चेतनं देवासो यज्ञमत्नत ।
तमिद्वर्धन्तु नो गिरः सदावृधम् ॥१८॥

देवताओं ने त्रिकद्रुक नामक (अथवा तीनों लोकों में सम्पन्न होने वाले) यज्ञ से महान् तथा चैतन्यता सम्पन्न इन्द्रदेव का गुणगान किया था। हमारी प्रार्थनाएँ भी उन्हें समृद्ध करें॥१८॥

स्तोता यत्ते अनुव्रत उक्थान्यृतुथा दधे ।
शुचिः पावक उच्यते सो अद्‌भुतः ॥१९॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी प्रार्थना करने वाले याजकगण जब विभिन्न ऋतुओं के अनुसार स्तोत्रों के द्वारा आपका स्तवन करते हैं, तब वे पुनीत तथा पवित्र होते हैं॥१९॥

तदिद्रुद्रस्य चेतति यह्वं प्रत्नेषु धामसु ।
मनो यत्रा वि तद्दधुर्विचेतसः ॥२०॥

विद्वान् पुरुष जिनके प्रति अपने मन को एकाग्र करते हैं, वे रुद्रपुत्र मरुत अपनी पुरातन स्थली में ही स्थित हैं॥२०॥

यदि मे सख्यमावर इमस्य पाह्यन्धसः ।
येन विश्वा अति द्विषो अतारिम ॥२१॥

हे इन्द्रदेव ! यदि आप हमें अपना सखा मानते हैं, तो इसे सोमरस का पान करें। आपके अनुग्रह से हम समस्त शत्रुओं को परास्त कर सकें॥२१॥

कदा त इन्द्र गिर्वणः स्तोता भवाति शंतमः ।
कदा नो गव्ये अश्व्ये वसौ दधः ॥२२॥

हे प्रार्थनीय इन्द्रदेव ! आप स्तुति करने वाले स्तोताओं को कब प्रसन्न करेंगे? आप हमें गौओं, अश्वों आदि से युक्त ऐश्वर्य कब प्रदान करेंगे?॥२२॥

उत ते सुष्टुता हरी वृषणा वहतो रथम् ।
अजुर्यस्य मदिन्तमं यमीमहे ॥२३॥

हे इन्द्रदेव ! आप जरा रहित हैं । आप अत्यधिक हर्ष प्रदान करने वाले हैं। प्रशंसनीय अश्व तथा रथ आपको भली-भाँति हमारे समीप ले आएँ॥२३॥

तमीमहे पुरुष्टुतं यह्वं प्रत्नाभिरूतिभिः ।
नि बर्हिषि प्रिये सदद्ध द्विता ॥२४॥

अनेकों द्वारा स्तुत्य तथा महान् इन्द्रदेव की हम पुरातन स्तोत्रों से वन्दना करते हैं। वे हमारे यज्ञ में पुनः-पुनः पधार कर आसन ग्रहण करें॥२४॥

वर्धस्वा सु पुरुष्टुत ऋषिष्टुताभिरूतिभिः ।
धुक्षस्व पिप्युषीमिषमवा च नः ॥२५॥

हे बहुप्रशंसित इन्द्रदेव ! आपकी अनेक ऋषियों द्वारा स्तुति की जाती हैं । आप अपने रक्षण साधनों से हमें समृद्ध करें तथा पोषक अन्न प्रदान करें॥२५॥

इन्द्र त्वमवितेदसीत्था स्तुवतो अद्रिवः ।
ऋतादियर्मि ते धियं मनोयुजम् ॥२६॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप प्रार्थना करने वालों के संरक्षक हैं। हम आपके मानस को पुलकित करने वाली प्रार्थनाएँ करते हैं॥२६॥

इह त्या सधमाद्या युजानः सोमपीतये ।
हरी इन्द्र प्रतद्वसू अभि स्वर ॥२७॥

हर्षित होने वाले तथा ऐश्वर्यवान् हे इन्द्रदेव ! अपने दोनों अश्वों को रथ में जोड़कर आप हमारे यज्ञ में सोमरस पीने के लिए पधारें॥२७॥

अभि स्वरन्तु ये तव रुद्रासः सक्षत श्रियम् ।
उतो मरुत्वतीर्विशो अभि प्रयः ॥२८॥

हे इन्द्रदेव ! आप मरुद्गणों के साथ यज्ञ में पधार कर हव्य को ग्रहण करें । मरुद्गणों की प्रजाएँ भी पधारें॥२८॥

इमा अस्य प्रतूर्तयः पदं जुषन्त यद्दिवि ।
नाभा यज्ञस्य सं दधुर्यथा विदे ॥२९॥

इन्द्रदेव की शत्रुनाशके मरुतादि प्रजाएँ दिव्यलोक में निवास करती हैं, वे (मरुद्गण) यज्ञ के नाभि स्थल पर हमें ऐश्वर्य प्रदान कराने हेतु एकत्रित होकर रहते हैं॥२९॥

अयं दीर्घाय चक्षसे प्राचि प्रयत्यध्वरे ।
मिमीते यज्ञमानुषग्विचक्ष्य ॥३०॥

पूर्व दिशा में सूर्यदेव के निकलने पर याजकगण यज्ञ का शुभारम्भ करते हैं। वे यज्ञों की देखभाल करते हुए दूर दृष्टि प्राप्त करने के निमित्त इन्द्रदेव की स्तुति करते हैं॥३०॥

वृषायमिन्द्र ते रथ उतो ते वृषणा हरी ।

वृषा त्वं शतक्रतो वृषा हवः ॥३१॥

हे इन्द्रदेव ! आपके अश्व एवं रथ दोनों ही शक्तिशाली हैं। आप स्वयं भी सामर्थ्यवान् हैं । हे शतक्रतो ! आपके निमित्त की जाने वाली स्तुतियाँ कामनाओं की पूर्ति करने वाली हैं॥३१॥

वृषा ग्रावा वृषा मदो वृषा सोमो अयं सुतः ।
वृषा यज्ञो यमिन्वसि वृषा हवः ॥३२॥

सोम को पीसने वाला पाषाण, निचोड़कर अभिषुत किया हुआ सोमरस तथा उसको पान करने से मिलने वाला आनन्द ये सभी शक्ति प्रदायक हैं। हे इन्द्रदेव ! आप जिस यज्ञ में पधारते हैं, वह यज्ञ तथा आपके निमित्त कहे गये स्तोत्र कामनाओं को पूर्ण करने वाले होते हैं॥३२॥

वृषा त्वा वृषणं हुवे वज्रिञ्चित्राभिरूतिभिः ।
वावन्थ हि प्रतिष्टुतिं वृषा हवः ॥३३॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप इच्छाओं को पूर्ण करने वाले तथा विभिन्न प्रकार के रक्षा-साधनों से सम्पन्न हैं। स्तोताओं द्वारा की गई प्रार्थनाओं को आप स्वीकार करते हैं, इसलिए आपके स्तोत्र फलित होने वाले हैं॥३३॥

# सूक्त १४

ऋषिः गोषूक्त्यश्वसूक्तिनौ काण्वायनौ।
देवता – इन्द्रः । छंद – गायत्री

यदिन्द्राहं यथा त्वमीशीय वस्व एक इत् ।
स्तोता मे गोषखा स्यात् ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार आप समस्त ऐश्वर्यों के स्वामी हैं, वैसा ही यदि मैं बन जाऊँ, तो मेरे भी स्तोता(वाणी का धनी अथवा इन्द्रियों का मित्र) हो जाएँ॥१॥

शिक्षेयमस्मै दित्सेयं शचीपते मनीषिणे ।
यदहं गोपतिः स्याम् ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! यदि मैं वाणी या इन्द्रियों का स्वामी बन जाऊँ, तो मनीषियों को दान देने वाला एवं उन्हें शिक्षा, सहायता देने वाला बनूं॥२॥

धेनुष्ट इन्द्र सूनृता यजमानाय सुन्वते ।
गामश्वं पिप्युषी दुहे ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी स्तुतियाँ गौ-रूप धारण करती हैं। वे सोमयज्ञ करने वाले यजमानों को पोषित करती हुई, उनके लिए इच्छित पदार्थों को उपलब्ध कराती हैं॥३॥

न ते वर्तास्ति राधस इन्द्र देवो न मर्त्यः ।
यद्दित्ससि स्तुतो मघम् ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! जब आप स्तुत्य होकर याजक को धन प्रदान करना चाहते हैं, तब आपको धन देने से देवता या मानव कोई रोक नहीं सकता॥४॥

यज्ञ इन्द्रमवर्धयद्यद्भूमिं व्यवर्तयत् ।
चक्राण ओपशं दिवि ॥५॥

जब यज्ञ ने इन्द्रदेव (की शक्ति को बढ़ाया (तो) इन्द्रदेव ने द्युलोक में आवास बनाकर भूमि का विस्तार किया॥५॥

वावृधानस्य ते वयं विश्वा धनानि जिग्युषः ।
ऊतिमिन्द्रा वृणीमहे ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपके उस दिव्य संरक्षण को प्राप्त करना चाहते हैं, जिससे हम समृद्ध हों तथा शत्रुओं के समस्त ऐश्वर्यों को जीत सकें॥६॥

व्यन्तरिक्षमतिरन्मदे सोमस्य रोचना ।
इन्द्रो यदभिनद्वलम् ॥७॥

सोमपान से उत्पन्न उमंग में जब इन्द्रदेव ने बलवान् मेघों को विदीर्ण किया, तो (प्रकारान्तर से) उन्होंने प्रकाशवान् आकाश का भी विस्तार किया॥७॥

उद्गा आजदङ्गिरोभ्य आविष्कृण्वन्गुहा सतीः ।
अर्वाञ्चं नुनुदे वलम् ॥८॥

सूर्यरूप हे इन्द्रदेव !आप गुफा में स्थित (अप्रकट) किरणों (गौओं) को प्रकट कर उन्हें देहधारियों (अंगिराओं) तक पहुँचाया। उन्हें रोके रखने वाला असुर (बल) नीचा मुँह करके पलायन कर गया॥८॥

इन्द्रेण रोचना दिवो दृळ्हानि दृंहितानि च ।
स्थिराणि न पराणुदे ॥९॥

अन्तरिक्ष में स्थित सभी प्रकाशवान् नक्षत्रों को इन्द्रदेव ने सुदृढ़ तथा समृद्ध किया। उन नक्षत्रों को कोई भी उनके स्थान से च्युत नहीं कर सकता॥९॥

अपामूर्मिर्मदन्निव स्तोम इन्द्राजिरायते ।
वि ते मदा अराजिषुः ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार समुद्र की लहरें उछलती चलती हैं, उसी प्रकार आपके लिए की गई प्रार्थनाएँ शीघ्रता से पहुँचकर आपके उत्साह को बढ़ाती हैं॥१०॥

त्वं हि स्तोमवर्धन इन्द्रास्युक्थवर्धनः ।
स्तोतृणामुत भद्रकृत् ॥११॥

हे इन्द्रदेव ! आप स्तोत्रों तथा स्तुतियों से सन्तुष्ट, समृद्ध होते हैं । आप स्तुतिकर्ताओं के लिए हितकारी हैं॥११॥

इन्द्रमित्केशिना हरी सोमपेयाय वक्षतः ।
उप यज्ञं सुराधसम् ॥१२॥

बालों से युक्त दोनों अश्व, श्रेष्ठ ऐश्वर्य सम्पन्न इन्द्रदेव को सोम पीने के लिए यज्ञ मण्डप के समीप ले जाते हैं॥१२॥

अपां फेनेन नमुचेः शिर इन्द्रोदवर्तयः ।
विश्वा यदजयः स्पृधः ॥१३॥

सभी स्पर्धा करने वाले असुरों को पराजित करने के बाद इन्द्रदेव ने नमुचि (मुक्त न करने वाले असुर या आसुरी प्रवृत्ति) के सिर को अप (जल या प्राण प्रवाह) के फेन (उफान-शक्ति) से नष्ट कर दिया॥१३॥

मायाभिरुत्सिसृप्सत इन्द्र द्यामारुरुक्षतः ।
अव दस्यूँरधूनुथाः ॥१४॥

हे इन्द्रदेव ! आप अपनी माया के द्वारा सर्वत्र विद्यमान हैं । आपने द्‌युलोक में बढ़ने वाले दस्युओं (वृत्र, अहि आदि) को नीचे धकेल दिया॥४॥

असुन्वामिन्द्र संसदं विषूचीं व्यनाशयः ।
सोमपा उत्तरो भवन् ॥१५॥

हे इन्द्रदेव ! आप सोमपान करने वाले तथा महान् हैं । सोमयज्ञ न करने वाले (स्वार्थी) मनुष्यों के संगठन को आपस में लड़ाकर, आपने विनष्ट कर दिया॥१५॥

# सूक्त १५

ऋषि: गोषूक्त्यश्वसूक्तिनौ काण्वायनौ।
देवता – इन्द्रः । छंद – उष्णिक्

तम्वभि प्र गायत पुरुहूतं पुरुष्टुतम् ।
इन्द्रं गीर्भिस्तविषमा विवासत ॥१॥

हे स्तोताओ ! अनेक यजमानों द्वारा स्तुतिपूर्वक आवाहन किये जाने वाले, प्रशंसा के योग्य उन महान् इन्द्रदेव की विभिन्न स्तोत्रों से स्तुति करो॥१॥

यस्य द्विबर्हसो बृहत्सहो दाधार रोदसी ।
गिरीँरज्राँ अपः स्वर्वृषत्वना ॥२॥

वे इन्द्रदेव अपनी शक्ति से शीघ्रगामी बादलों तथा गतिमान जल को धारण करते हैं । उनके महान् बल को द्युलोक और पृथ्वीलोक ग्रहण करते हैं॥२॥

स राजसि पुरुष्टुतँ एको वृत्राणि जिघ्नसे ।
इन्द्र जैत्रा श्रवस्या च यन्तवे ॥३॥

बहुप्रशंसित हे इन्द्रदेव ! आप अपनी दिव्य कान्ति से आलोकित होते हैं। ऐश्वर्य तथा कीर्ति को प्राप्त करने के निमित्त आप अकेले ही वृत्रासुर का वध करते हैं॥३॥

तं ते मदं गृणीमसि वृषणं पृत्सु सासहिम् ।
उ लोककृत्नुमद्रिवो हरिश्रियम् ॥४॥

हे वज्रपाणि इन्द्रदेव ! शक्तिशाली, संग्राम में शत्रु को पराजित करने वाले, कल्याणकारक तथा अश्वों के लिए सेवनीय आपके उत्साह को हम प्रशंसा करते हैं॥४॥

येन ज्योतींष्यायवे मनवे च विवेदिथ ।
मन्दानो अस्य बर्हिषो वि राजसि ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आपने दीर्घजीवी मनुष्य के हित के लिए ज्योतिर्मान् (सूर्यादि नक्षत्र) प्रकाशित किये हैं। आप इस यज्ञ वेदिका पर विराजमान होते हैं॥५॥

तदद्या चित्त उक्थिनोऽनु ष्टुवन्ति पूर्वथा ।

वृषपत्नीरपो जया दिवेदिवे ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! सनातन स्तुतिकर्ता आज भी आपके बल की स्तुति करते हैं । पर्जन्य की वर्षा करने वाले जलों को आप प्रतिदिन मुक्त करें अर्थात् समयानुसार वर्षा करते रहें॥६॥

तव त्यदिन्द्रियं बृहत्तव शुष्ममुत क्रतुम् ।
वज्रं शिशाति धिषणा वरेण्यम् ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! हमारी प्रार्थनाएँ आपके शौर्य, सामर्थ्य, कुशलता, पराक्रम और श्रेष्ठ वज्र को तेजस्वी बनाती हैं॥७॥

तव द्यौरिन्द्र पौंस्यं पृथिवी वर्धति श्रवः ।
त्वामापः पर्वतासश्च हिन्विरे ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! अन्तरिक्ष से आपकी शक्ति-सामर्थ्य का और पृथ्वी से आपके यशस्वी स्वरूप का विस्तार होता हैं । जल प्रवाह और पर्वत (मेघ)आपको अपना अधिपति मानकर आपके पास पहुँचते हैं॥८॥

त्वां विष्णुर्बृहन्क्षयो मित्रो गृणाति वरुणः ।
त्वां शर्धो मदत्यनु मारुतम् ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! महान् आश्रयदाता मान करके विष्णु, मित्र और वरुणादि देवता आपका स्तुति गान करते हैं। मरुद्गणों के बल से आप हर्षित होते हैं॥९॥

त्वं वृषा जनानां मंहिष्ठ इन्द्र जज्ञिषे ।
सत्रा विश्वा स्वपत्यानि दधिषे ॥१०॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! आप देव समुदाय के मध्य सबसे महान् माने जाते हैं। आप श्रेष्ठ संतति सहित समस्त ऐश्वर्यों को धारण करते हैं॥१०॥

सत्रा त्वं पुरुष्टुतँ एको वृत्राणि तोशसे ।
नान्य इन्द्रात्करणं भूय इन्वति ॥११॥

हे बहु प्रशंसित इन्द्रदेव ! आप अकेले ही रिपुओं का वध कर देते हैं । आपके अतिरिक्त कोई दूसरा व्यक्ति ऐसे महान् कार्य को नहीं कर सकता॥११॥

यदिन्द्र मन्मशस्त्वा नाना हवन्त ऊतये ।
अस्माकेभिर्नृभिरत्रा स्वर्जय ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! जिस समय अपनी सुरक्षा के निमित्त मनुष्य स्तुतियों द्वारा आपका आवाहन करते हैं, उस समय युद्धक्षेत्र में राजाओं के साथ रहकर हमारे निमित्त शत्रुओं को परास्त करें॥१२॥

अरं क्षयाय नो महे विश्वा रूपाण्याविशन् ।
इन्द्रं जैत्राय हर्षया शचीपतिम् ॥१३॥

हे याजको ! हमारी विजय के लिए तथा विशाल आवास के लिए आप समस्त रूपों (प्रकारों) से शक्तिशाली इन्द्रदेव को हर्षित करें॥१३॥

## सूक्त १६

ऋषि: इरिम्बिठि काण्व:
देवता – इन्द्र: । छंद – गायत्री

प्र सम्राजं चर्षणीनामिन्द्रं स्तोता नव्यं गीर्भिः ।
नरं नृषाहं मंहिष्ठम् ॥१॥

हे स्तोताओ ! आप, मनुष्यों में भली प्रकार प्रतिष्ठा प्राप्त, स्तुति किये जाने योग्य, शत्रुजयी नेतृत्व क्षमता सम्पन्न, इन महान् इन्द्रदेव की स्तुति करें॥१॥

यस्मिन्नुक्थानि रण्यन्ति विश्वानि च श्रवस्या ।
अपामवो न समुद्रे ॥२॥

जिस प्रकार समुद्र के अन्दर जल तरंगों की शोभा दिखाई पड़ती है, उसी प्रकार समस्त स्तुतियों तथा कीर्तियों से इन्द्रदेव सुशोभित होते हैं॥२॥

तं सुष्टुत्या विवासे ज्येष्ठराजं भरे कृत्नुम् ।
महो वाजिनं सनिभ्यः ॥३॥

हम महान् धनों की प्राप्ति के लिए, रणक्षेत्र में महान् पुरुषार्थ करने वाले, शक्तिशाली, महान् शासक उन इन्द्रदेव की श्रेष्ठ वचनों द्वारा स्तुति करते हैं॥३॥

यस्यानूना गभीरा मदा उरवस्तरुत्राः ।
हर्षुमन्तः शूरसातौ ॥४॥

हे इन्द्रदेव । आपके पराक्रम को हम प्रशंसा करते हैं। आप अत्यन्त विशाल तथा श्रेष्ठ । रणक्षेत्र में अत्यधिक उत्साहित होकर , आप रिपुओं का हनन करते हैं॥४॥

तमिद्धनेषु हितेष्वधिवाकाय हवन्ते ।
येषामिन्द्रस्ते जयन्ति ॥५॥

युद्ध प्रारम्भ हो जाने पर अपने पक्ष में लड़ने के लिए याजकगण इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं, क्योंकि जिस पक्ष में इन्द्रदेव रहते हैं, विजयश्री उन्हीं को मिलती हैं॥५॥

तमिच्च्यौत्नैरार्यन्ति तं कृतेभिश्चर्षणयः ।
एष इन्द्रो वरिवस्कृत् ॥६॥

अपने महान् स्तोत्रों तथा कार्यों द्वारा मनुष्य उन इन्द्रदेव के अनुग्रह को प्राप्त कर सकते हैं । वे इन्द्रदेव ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं॥६॥

इन्द्रो ब्रह्मेन्द्र ऋषिरिन्द्रः पुरू पुरुहूतः ।
महान्महीभिः शचीभिः ॥७॥

आत्मज्ञानी, ऋषि तुल्य तथा महान् इन्द्रदेव अपनी बृहत् शक्तियों के कारण अनेकों साधकों के द्वारा सः। यता प्राप्ति के निमित्त आवाहित किये जाते हैं॥७॥

स स्तोम्यः स हव्यः सत्यः सत्वा तुविकूर्मिः ।
एकश्चित्सन्नभिभूतिः ॥८॥

प्रार्थनीय, आवाहनीय, अविनाशी तथा शक्तिशाली इन्द्रदेव अतिशीघ्र कार्य करते हैं, वे अकेले होने पर भी शत्रुओं को परास्त कर देते हैं॥८॥

तमर्केभिस्तं सामभिस्तं गायत्रैश्चर्षणयः ।
इन्द्रं वर्धन्ति क्षितयः ॥९॥

ऋचाओं, गाने योग्य स्तोत्रों तथा गायत्री छन्दआदि मंत्रों के द्वारा विद्वान् पुरुष उन इन्द्रदेव को समृद्ध करते हैं॥९॥

प्रणेतारं वस्यो अच्छा कर्तारं ज्योतिः समत्सु ।
सासह्वांसं युधामित्रान् ॥१०॥

धनवानों से ऐश्वर्य का दान कराने वाले, संग्राम में शौर्य दिखाने वाले तथा अपने अस्त्र-शस्त्रों द्वारा रिपुओं को परास्त करने वाले इन्द्रदेव की सभी मनुष्यों द्वारा प्रशंसा की जाती है॥१०॥

स नः पप्रिः पारयाति स्वस्ति नावा पुरुहूतः ।
इन्द्रो विश्वा अति द्विषः ॥११॥

मनुष्यों की इच्छाओं को पूर्ण करने वाले इन्द्रदेव सबके द्वारा आवाहित किये जाते हैं। वे रक्षण-साधनों रूपों अपनी नाव के द्वारा समस्त रिपुओं से हमें पार लगा दें॥११॥

स त्वं न इन्द्र वाजेभिर्दशस्या च गातुया च ।
अच्छा च नः सुम्नं नेषि ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें शक्ति और धन-धान्य से परिपूर्ण ऐश्वर्य प्रदान करें । श्रेष्ठ मार्ग प्रदर्शित करते हुए हमें पूर्ण सुखी बनाएँ॥१२॥

# सूक्त १७

ऋषिः इरिम्बिठि काण्वः
देवता – इन्द्रः, १४ वास्तोष्पतिर्वा। छंद – गायत्री, प्रगाथ

आ याहि सुषुमा हि त इन्द्र सोमं पिबा इमम् ।
एदं बर्हिः सदो मम ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे इस यज्ञ में पधारें । तैयार किया गया सोमरस आपके लिए समर्पित हैं, उसका पान करके आप श्रेष्ठ आसन पर विराजमान हों॥१॥

आ त्वा ब्रह्मयुजा हरी वहतामिन्द्र केशिना ।
उप ब्रह्माणि नः शृणु ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! मंत्र सुनते ही (संकेत मात्र से रथ में जुड़ जाने वाले श्रेष्ठ अश्वों के माध्यम से, आप निकट आकर हमारी प्रार्थनाओं पर ध्यान दें॥२॥

ब्रह्माणस्त्वा वयं युजा सोमपामिन्द्र सोमिनः ।
सुतावन्तो हवामहे ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! हम ब्रह्मनिष्ठ सोमयज्ञकर्ता साधक, सोमपान के लिए आपका आवाहन करते हैं॥३॥

आ नो याहि सुतावतोऽस्माकं सुष्टुतीरुप ।
पिबा सु शिप्रिन्नन्धसः ॥४॥

श्रेष्ठ मुकुट धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! सोमयज्ञ करने वाले हम याजकगण, अपनी श्रेष्ठ प्रार्थनाओं के द्वारा आपको अपने निकट बुलाते हैं। अत: आप यहाँ आकर सोमरस का पान करें॥४॥

आ ते सिञ्चामि कुक्ष्योरनु गात्रा वि धावतु ।
गृभाय जिह्वया मधु ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपके उदर को सोमरस से पूर्ण करते हैं। वह आपके सम्पूर्ण शरीर में संचरित हो और आप इस मीठे सोमरस को जीभ के द्वारा स्वादपूर्वक सेवन करें॥५॥

स्वादुष्टे अस्तु संसुदे मधुमान्तन्वे तव ।

सोमः शमस्तु ते हृदे ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! आप श्रेष्ठ ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं, इसलिए मधु मिला हुआ सोमरस आपको सुस्वादिष्ट लगे । आपके शरीर और हृदय के लिये यह आनन्द उत्पन्न करने वाला हो॥६॥

अयमु त्वा विचर्षणे जनीरिवाभि संवृतः ।
प्र सोम इन्द्र सर्पतु ॥७॥

हे दूरदर्शी इन्द्रदेव ! जिस प्रकार श्वेत वस्त्र धारण करने वाली स्त्री सात्विकता की अभिव्यक्ति करती है, उसी प्रकार गौ दुग्ध में मिला हुआ सोमरस तेजयुक्त होकर आपको प्राप्त हो॥७॥

तुविग्रीवो वपोदरः सुबाहुरन्धसो मदे ।
इन्द्रो वृत्राणि जिघ्नते ॥८॥

सुन्दर ग्रीवा वाले, विशाल उदर वाले तथा सुदृढ़ भुजाओं वाले इन्द्रदेव, सोमरस पान से प्राप्त उत्साह द्वारा शत्रुओं का वध करते हैं॥८॥

इन्द्र प्रेहि पुरस्त्वं विश्वस्येशान ओजसा ।
वृत्राणि वृत्रहञ्जहि ॥९॥

हे जगत् पर शासन करने वाले ओजस्वी इन्द्रदेव ! आप अग्रणी होकर गमन करें । हे वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ! आप शत्रुओं का संहार करने वाले हैं॥९॥

दीर्घस्ते अस्त्वङ्कुशो येना वसु प्रयच्छसि ।
यजमानाय सुन्वते ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! आप जिसके द्वारा सोमयाग करने वाले याजकों को ऐश्वर्य अथवा आवास प्रदान करते हैं, आपका वह अंकुश (आयुधअत्यधिक विशाल है॥१०॥

अयं त इन्द्र सोमो निपूतो अधि बर्हिषि ।
एहीमस्य द्रवा पिब ॥११॥

हे इन्द्रदेव ! वेदिका पर सुशोभित, आसन पर स्थापित, शोधित सोमरस आपके लिए प्रस्तुत है । आप शीघ्र ही आकर पान करें॥११॥

शाचिगो शाचिपूजनायं रणाय ते सुतः ।
आखण्डल प्र हूयसे ॥१२॥

शक्तिसम्पन्न, शत्रुनाशक, सामर्थ्यवान् , तेजस्वी हे पूज्य इन्द्रदेव ! आपके आनन्दवर्धन हेतु सोमरस तैयार किया गया है, (उसके पान हेतु) हम आपका आवाहन करते हैं॥१२॥

यस्ते शृङ्गवृषो नपात्प्रणपात्कुण्डपाय्यः ।
न्यस्मिन्दध्र आ मनः ॥१३॥

हे तेजस्वी इन्द्रदेव !आप सरलता से पान करने योग्य सोम के लिए इस कुण्डपायी यज्ञ की ओर उन्मुख हों॥१३॥

वास्तोष्पते ध्रुवा स्थूणांसत्रं सोम्यानाम् ।
द्रप्सो भेत्ता पुरां शश्वतीनामिन्द्रो मुनीनां सखा ॥१४॥

हे गृहस्वामी ! घर के स्तम्भ मजबूत हों, सोमयज्ञ करने वाले याजकों को देहरक्षक शक्ति की प्राप्ति हो। राक्षसों की अनेक नगरियों को उजाड़ने वाले सोमपायी इन्द्रदेव मुनियों के सखा हों॥१४॥

पृदाकुसानुर्यजतो गवेषण एकः सन्नभि भूयसः ।
भूर्णिमश्वं नयत्तुजा पुरो गृभेन्द्रं सोमस्य पीतये ॥१५॥

विशाल सिर वाले, गौओं (किरणों की खोज करने वाले पूजनीय इन्द्रदेव अकेले ही समस्त शत्रुओं को परास्त करते हैं। सर्वव्यापी तथा

पालन-पोषण करने वाले इन्द्रदेव का सोमरस पान के लिए हम आवाहन करते हैं॥१५॥

# सूक्त १८

ऋषि: इरिम्बिठि काण्व:
देवता – आदित्या, ४, ६, ७, अदिति, ८ आश्विनौ, ९ अग्निसूर्यागिला:।
छंद – उष्णिक

इदं ह नूनमेषां सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः ।
आदित्यानामपूर्व्यं सवीमनि ॥१॥

आदित्यों के नियंत्रण में चलने वाले मनुष्य निश्चित रूप से ऐसे समस्त सुखों को प्राप्त करते हैं, जिनकी प्राप्ति पहले नहीं हो सकी थीं॥१॥

अनर्वाणो ह्येषां पन्था आदित्यानाम् ।
अदब्धाः सन्ति पायवः सुगेवृधः ॥२॥

इन आदित्यों का मार्ग हिंसा और छल-छद्म से रहित है । उनका अनुसरण करने से सभी प्राणियों का भरण-पोषण होता है । वे जीवन में हर्षोल्लास की वृद्धि करने वाले हैं॥२॥

तत्सु नः सविता भगो वरुणो मित्रो अर्यमा ।
शर्म यच्छन्तु सप्रथो यदीमहे ॥३॥

हम जिस सुख की कामना करते हैं, उस ऐश्वर्य को सविता, वरुण, मित्र,भग तथा अर्यमादेव हमें प्रदान करें॥३॥

देवेभिर्देव्यदितेऽरिष्टभर्मन्ना गहि ।
स्मत्सूरिभिः पुरुप्रिये सुशर्मभिः ॥४॥

श्रेष्ठ गुणों से सम्पन्न अहिंसा को पोषण प्रदान करने वाली, अनेकों की प्रिय हे अदिति देवि ! आप ज्ञानियों देवताओं तथा श्रेष्ठ सुखों सहित हमारे निकट पधारें॥४॥

ते हि पुत्रासो अदितेर्विदुर्द्वेषांसि योतवे ।
अंहोश्चिदुरुचक्रयोऽनेहसः ॥५॥

महान् कार्य करने वाले तथा बुराइयों से दूर रहने वाले अदिति माँ के बेटे, द्वेष करने वाले रिपुओं तथा अत्याचारियों को निश्चितरूप से भगाना जानते हैं। वे हमें पापाचारों से मुक्त करना भी जानते हैं॥५॥

अदितिर्नो दिवा पशुमदितिर्नक्तमद्वयाः ।

अदितिः पात्वंहसः सदावृधा ॥६॥

माता अदिति हमारे पशुओं की सुरक्षा निरन्तर करें तथा अपने समस्त रक्षण-साधनों द्वारा हमें सम्पूर्ण बुराइयों से भी बचाएँ॥६॥

उत स्या नो दिवा मतिरदितिरूत्या गमत् ।
सा शंताति मयस्करदप स्रिधः ॥७॥

हे देवों की माता अदिति ! पूर्ण रक्षा-साधनों सहित आप हमारे निकट पधारें । शत्रुओं का हनन करें और हमें सुख-शान्ति प्रदान करें॥७॥

उत त्या दैव्या भिषजा शं नः करतो अश्विना ।
युयुयातामितो रपो अप स्रिधः ॥८॥

देवताओं के चिकित्सक दोनों अश्विनीकुमार हमारे पापों और शत्रुओं को हमसे दूर करके हर्ष प्रदान करें॥८॥

शमग्निरग्निभिः करच्छं नस्तपतु सूर्यः ।
शं वातो वात्वरपा अप स्रिधः ॥९॥

अग्निदेव अपनी लपटों की उष्णता से, सूर्य अपने प्रखर प्रकाश से तथा वायु अपने दोषमुक्त प्रवाहों से हमारे शारीरिक शत्रुओं को विनष्ट करके हमें हर्ष प्रदान करें॥९॥

अपामीवामप स्रिधमप सेधत दुर्मतिम् ।
आदित्यासो युयोतना नो अंहसः ॥१०॥

हे आदित्यो ! (आप हमें) रोगों, शत्रुओं, पापों एवं दुर्बुद्धि के दुष्प्रभाव से दूर रखें॥१०॥

युयोता शरुमस्मदाँ आदित्यास उतामतिम् ।
ऋधग्द्वेषः कृणुत विश्ववेदसः ॥११॥

हे आदित्यो ! आप हमारी दुर्बुद्धि तथा हमारे शत्रुओं को हमसे दूर भगाएँ । हे समस्त पदार्थों के ज्ञाता देवताओ ! आप द्वेष करने वाले लोगों को भी हमसे दूर भगाएँ॥११॥

तत्सु नः शर्म यच्छतादित्या यन्मुमोचति ।
एनस्वन्तं चिदेनसः सुदानवः ॥१२॥

हे श्रेष्ठ दानी आदित्यो ! आप हमें ऐसा ज्ञान प्रदान करें, जो पापियों को भी दुष्कर्म करने से बचा देता है॥१२॥

यो नः कश्चिद्रिरिक्षति रक्षस्त्वेन मर्त्यः ।
स्वैः ष एवै रिरिषीष्ट युर्जनः ॥१३॥

जो मनुष्य राक्षसी प्रवृत्ति धारण करके हमारी हत्या करने का प्रयत्न करें, वे हमसे दूर जाकर अपने दुष्कर्मों द्वारा स्वयं ही नष्ट हो जाएँ॥१३॥

समित्तमघमश्नवद्दुःशंसं मर्त्यं रिपुम् ।
यो अस्मत्रा दुर्हणावाँ उप द्वयुः ॥१४॥

जो व्यक्ति हमसे कुटिलतापूर्ण व्यवहार करें, हमारी हत्या करने का प्रयत्न करें, वे पापी और शत्रु अपने पाप से ही नष्ट हो जाएँ॥१४॥

पाकत्रा स्थन देवा हृत्सु जानीथ मर्त्यम् ।
उप द्वयुं चाद्वयुं च वसवः ॥१५॥

सबका पालन करने वाले हे आदित्यगण ! छल करने वाले तथा छल रहित व्यक्तियों को आप अपने अन्त:करण से पहचान लें तथा पवित्रता प्रिय व्यक्तियों के समीप ही विद्यमान रहें॥१५॥

आ शर्म पर्वतानामोतापां वृणीमहे ।

द्यावाक्षामारे अस्मद्रपस्कृतम् ॥१६॥

पर्वतों (मेघों) तथा जल के बीच विद्यमान सुख को प्राप्त करने की हम कामना करते हैं । हे द्यावा-पृथिवि ! आप हमारे पापों को हमसे दूर भगाएँ॥१६॥

ते नो भद्रेण शर्मणा युष्माकं नावा वसवः ।
अति विश्वानि दुरिता पिपर्तन ॥१७॥

सबको आवास प्रदान करने वाले हे आदित्यगण ! आप अपनी हितकारी तथा सुखप्रदायक (सत्कर्म रूपी) नौकाओं के द्वारा हमें समस्त बुराइयों से पार लगा दें॥१७॥

तुचे तनाय तत्सु नो द्राघीय आयुर्जीवसे ।
आदित्यासः सुमहसः कृणोतन ॥१८॥

हे महान् आदित्यो ! हमारे पुत्र और पौत्रों को दीर्घायुष्य प्रदान करने की कृपा करें॥१८॥

यज्ञो हीळो वो अन्तर आदित्या अस्ति मृळत ।
युष्मे इद्वो अपि ष्मसि सजात्ये ॥१९॥

हे आदित्यो ! आप जिस यज्ञ में पधारने की इच्छा कर रहे हैं, वह आपके निकट ही सम्पन्न हो रहा हैं । आपकी मैत्री प्राप्त करके हम सदैव आपके होकर ही रहेंगे॥१९॥

बृहद्वरूथं मरुतां देवं त्रातारमश्विना ।
मित्रमीमहे वरुणं स्वस्तये ॥२०॥

हम शीत, आतप आदि से मुक्त, कल्याणकारी आवास की कामना से मरुद्गणों के संरक्षक इन्द्रदेव, अश्विनी कुमारों, मित्र, वरुण तथा गृहपति वास्तोष्पतिदेव का आवाहन करते हैं॥२०॥

अनेहो मित्रार्यमन्नृवद्वरुण शंस्यम् ।
त्रिवरूथं मरुतो यन्त नश्छर्दिः ॥२१॥

हे मित्र, अर्यमा, वरुण तथा महान् मरुद्गणो ! आप हमें शीत, आतप और वर्षा रहित तीन खण्डों वाला श्रेष्ठ आवास प्रदान करें॥२१॥

ये चिद्धि मृत्युबन्धव आदित्या मनवः स्मसि ।
प्र सू न आयुर्जीवसे तिरेतन ॥२२॥

हे आदित्यो ! जो मनुष्य मौत के मुख में जाने वाले हैं अर्थात् अल्पायु हैं, उनके लिए आप लम्बी आयु प्रदान करें॥२२॥

# सूक्त १९

ऋषि: सोभरि काण्व:
देवता – अग्नि:, ३४-३५ आदित्या, ३६-३७ त्रसदस्यु पौरुकुस्य:। छंद – १-२६ प्रगाथ, २७ द्विपदा विराट, २८-३३ प्रगाथ, ३४ उष्णिक, ३५ सतोवृहती, ३६ ककुप्, ३७ पंक्ति

तं गूर्धया स्वर्णरं देवासो देवमरतिं दधन्विरे ।
देवत्रा हव्यमोहिरे ॥१॥

हे स्तोताओ ! स्वर्गस्थ देवों के लिए हवि पहुँचाने वाले अग्निदेव की स्तुति करो । याजकगण स्तुति करते हैं और देवताओं को हव्य प्रदान करते हैं॥१॥

विभूतरातिं विप्र चित्रशोचिषमग्निमीळिष्व यन्तुरम् ।
अस्य मेधस्य सोम्यस्य सोभरे प्रेमध्वराय पूर्व्यम् ॥२॥

हे ऋषियो ! यज्ञ की सफलता के लिए हम, प्रचुर वैभव प्रदान करने वाले, अतितेजस्वी, इस श्रेष्ठ सोमयज्ञ के नियामक, चिरन्तन अग्निदेव की वन्दना करते हैं॥२॥

यजिष्ठं त्वा ववृमहे देवं देवत्रा होतारममर्त्यम् ।
अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम् ॥३॥

हे अग्निदेव ! आप श्रेष्ठ याज्ञिक है। इस यज्ञ को भली प्रकार सम्पन्न करने वाले हैं। हम आपकी स्तुति करते हैं॥३॥

ऊर्जो नपातं सुभगं सुदीदितिमग्निं श्रेष्ठशोचिषम् ।
स नो मित्रस्य वरुणस्य सो अपामा सुम्नं यक्षते दिवि ॥४॥

ऊर्जा का पतन न होने देने वाले, श्रेष्ठ ऐश्वर्य सम्पन्न, श्रेष्ठ दीप्ति एवं कान्तियुक्त अग्निदेव की हम स्तुति करते हैं। वे इस देवयज्ञ में मित्र, वरुण एवं जल देवता की तुष्टि के लिए यजन कार्य सम्पन्न करें॥४॥

यः समिधा य आहुती यो वेदेन ददाश मर्तो अग्नये ।
यो नमसा स्वध्वरः ॥५॥

हिंसा न करने वाले जो मानव अन्न, समिधा, हविष्य तथा ज्ञान के द्वारा अग्निदेव के निमित्त वि प्रदान करते हैं, वे मनुष्य श्रेष्ठ सुखों से सम्पन्न हो जाते हैं॥५॥

तस्येदर्वन्तो रंहयन्त आशवस्तस्य दयुम्नितमं यशः ।
न तमंहो देवकृतं कुतश्चन न मर्त्यकृतं नशत् ॥६॥

अग्निदेव के निमित्त यज्ञ करने वाले साधक द्रुतगामी अश्वों के मालिक एवं उज्ज्वल कीर्ति वाले बन जाते हैं। प्रमोदवश देवताओं तथा मनुष्यों के प्रति हुए (भूलों) पापों के कारण वे विनष्ट नहीं होते॥६॥

स्वग्नयो वो अग्निभिः स्याम सूनो सहस ऊर्जां पते ।
सुवीरस्त्वमस्मयुः ॥७॥

शौर्य के पुत्र और बल के स्वामी हे अग्निदेव ! आपके गार्हपत्यादि स्वरूप के द्वारा हम श्रेष्ठ अग्नियों से सम्पन्न हों । आप हम मानवों को श्रेष्ठ पराक्रमी पुत्र प्रदान करें॥७॥

प्रशंसमानो अतिथिर्न मित्रियोऽग्नी रथो न वेद्यः ।
त्वे क्षेमासो अपि सन्ति साधवस्त्वं राजा रयीणाम् ॥८॥

हे अग्निदेव ! आप अतिथि के सदृश प्रशंसनीय, रथ के सदृश गमनीय तथा अपने सखाओं का कल्याण करने वाले हैं। आपके आश्रित रहने वाले उपासकों का सम्पूर्ण रूप से हित होता है । वे समस्त ऐश्वर्यो के स्वामी बनते हैं॥८॥

सो अद्धा दाश्वध्वरोऽग्ने मर्तः सुभग स प्रशंस्यः ।
स धीभिरस्तु सनिता ॥९॥

हे अग्निदेव ! जो दानी व्यक्ति श्रेष्ठ यज्ञादि कर्म करते हैं, वे सत्य के परिणाम को भी प्राप्त करें । श्रेष्ठ सम्पत्ति वाले हे अग्निदेव ! आप स्तुति के योग्य हैं । आप अपने श्रेष्ठ ज्ञान द्वारा हमारी सुरक्षा करें॥९॥

यस्य त्वमूर्ध्वो अध्वराय तिष्ठसि क्षयद्वीरः स साधते ।
सो अर्वद्भिः सनिता स विपन्युभिः स शूरैः सनिता कृतम् ॥१०॥

हे अग्निदेव ! आप जिस याजक के यज्ञ में पधारने के लिए राजी होते हैं, वह पुरुष पराक्रमी सन्तानों, अश्वों तथा ज्ञान से सम्पन्न होकर अपने कार्यों को पूर्ण करता है । वह पराक्रमी जनों द्वारा पूजनीय होता है॥१०॥

यस्याग्निर्वपुर्गृहे स्तोमं चनो दधीत विश्ववार्यः ।
हव्या वा वेविषद्विषः ॥११॥

समस्त मनुष्यों के वरणीय अग्निदेव जिस याजक के घर में स्तोत्र और हव्य ग्रहण करते हैं, वे हवियाँ देवों को प्राप्त होती हैं॥११॥

विप्रस्य वा स्तुवतः सहसो यहो मक्षूतमस्य रातिषु ।
अवोदेवमुपरिमर्त्यं कृधि वसो विविदुषो वचः ॥१२॥

पराक्रम के पुत्र तथा सभी का पालन करने वाले हे अग्निदेव ! हव्य प्रदान करने में फुतले, कुशल तथा प्रार्थना करने वाले ज्ञानी मनुष्यों की प्रार्थनाओं को देवताओं के नीचे तथा मनुष्यों से ऊपर स्थापित करें (मनुष्यों के प्रयास देवोन्मुख बने)॥१२॥

यो अग्निं हव्यदातिभिर्नमोभिर्वा सुदक्षमाविवासति ।
गिरा वाजिरशोचिषम् ॥१३॥

जो हवियों और स्तुतियों के द्वारा श्रेष्ठ अग्निदेव की उपासना करते हैं तथा जो अपने स्तुति वचनों के द्वारा उनकी सेवा करते हैं, वे याजक ऐश्वर्य आदि से सम्पन्न हो जाते हैं॥१३॥

समिधा यो निशिती दाशददितिं धामभिरस्य मर्त्यः ।
विश्वेत्स धीभिः सुभगो जनाँ अति द्युम्नैरुद्र इव तारिषत् ॥१४॥

जो साधक एकाग्रचित्त होकर भक्तिपूर्वक अखण्ड अग्निदेव की आराधना करते हैं, वे जल की भाँति ओज, बल तथा श्रेष्ठ कर्मों द्वारा सम्मर्ण मनुष्यों से ऊँचे उठ जाते हैं॥१४॥

तदग्ने द्युम्नमा भर यत्सासहत्सदने कं चिदत्रिणम् ।
मन्युं जनस्य दूढ्यः ॥१५॥

हे अग्निदेव ! आप हमें प्रखर तेज प्रदान करें, जिससे यज्ञ में आने वाले दुष्टों (व्यक्तियों या प्रवृत्तियो ) को नियन्त्रित किया जा सके और दुर्बुद्धिजन्य क्रोध को भी दूर किया जा सके॥१५॥

येन चष्टे वरुणो मित्रो अर्यमा येन नासत्या भगः ।
वयं तत्ते शवसा गातुवित्तमा इन्द्रत्वोता विधेमहि ॥१६॥

हे अग्निदेव ! आप अपने जिस प्रकाश से वरुण, मित्र और अर्यमा देव को आलोकित करते हैं, जिससे दोनों अश्विनीकुमारों और स्तुति करने योग्य इन्द्रदेव सहित अन्य देवगणों को आलोकित करते हैं, उसी प्रकाश से हमें भी सम्पन्न करके, शक्तिशाली बनाएँ॥१६॥

ते घेदग्ने स्वाध्यो ये त्वा विप्र निदधिरे नृचक्षसम् ।
विप्रासो देव सुक्रतुम् ॥१७॥

ज्ञानी तथा तेजस्वी हे अग्निदेव ! जो विद्वान् विप्र अपने समस्त कार्यों को सम्पादित करने वाले हैं तथा जो अपने हृदय स्थल में आपका ध्यान करते हैं, वे ही सबसे महान् होते हैं॥१७॥

त इद्वेदिं सुभग त आहुतिं ते सोतुं चक्रिरे दिवि ।
त इद्वाजेभिर्जिग्युर्महद्धनं ये त्वे कामं न्येरिरे ॥१८॥

श्रेष्ठ सम्पत्तिवान् हे अग्निदेव ! जो मनुष्य आपसे अपनी मनोकामनाएँ पूर्ण करवाना चाहते हैं, वे ही आपके निमित्त यज्ञ वैदिका तैयार करते हैं, हवि प्रदान करते हैं तथा दिव्य सोमरस निचोड़ते हैं। ऐसे श्रेष्ठ कर्म करने वाले वे याजक अपने शौर्य से प्रचुर ऐश्वर्य को प्राप्त करते हैं॥१८॥

भद्रो नो अग्निराहुतो भद्रा रातिः सुभग भद्रो अध्वरः ।
भद्रा उत प्रशस्तयः ॥१९॥

वियों से सन्तुष्ट हुए हे अग्निदेव ! आप हमारे लिए मंगलकारी हों । हे ऐश्वर्यशाली ! हमें कल्याणकारी धन प्राप्त हो और आपकी स्तुतियाँ हमारे लिए मंगलकारी हों॥१९॥

भद्रं मनः कृणुष्व वृत्रतूर्ये येना समत्सु सासहः ।
अव स्थिरा तनुहि भूरि शर्धतां वनेमा ते अभिष्टिभिः ॥२०॥

हे अग्ने युद्ध में जिस मनोबल से आप रिपुओं को परास्त करते हैं, उसी मंगलकारी मनोबल को हमें भी प्रदान करें । हम रिपुओं की सेनाओं को परास्त करके इच्छित सुखों से सम्पन्न होकर आपकी उपासना कर सकें॥२०॥

ईळे गिरा मनुर्हितं यं देवा दूतमरतिं न्येरिरे ।
यजिष्ठं हव्यवाहनम् ॥२१॥

सम्माननीय, हवियों के वाहक, देवताओं के सन्देशवाहक तथा सम्पत्तिवान् अग्निदेव को ज्ञानी पुरुष अपनी प्रार्थनाओं द्वारा प्रदीप्त करते हैं। मनुष्यों के हित साधक ऐसे अग्निदेव की हम वन्दना करते हैं॥२१॥

तिग्मजम्भाय तरुणाय राजते प्रयो गायस्यग्नये ।
यः पिंशते सूनृताभिः सुवीर्यमग्निर्घृतेभिराहुतः ॥२२॥

हे मनुष्यो ! जब आप तीव्र ज्वालाओं वाले आलोकवान् अग्निदेव की , हर्षित होकर स्तुति करते हैं, तब वे श्रेष्ठ प्रार्थनाओं तथा घी की हवियों को प्राप्त करके आपको उत्तम पराक्रम प्रदान करते हैं॥२२॥

यदी घृतेभिराहुतो वाशीमग्निर्भरत उच्चाव च ।
असुर इव निर्णिजम् ॥२३॥

घृत की हवियों को ग्रहण करके जब अग्निदेव द्यावा-पृथिवी को अपनी ध्वनि से भर देते हैं, तब वे महाप्रतापी सूर्य के सदृश अपने ओज को प्रदर्शित करते हैं॥२३॥

यो हव्यान्यैरयता मनुर्हितो देव आसा सुगन्धिना ।
विवासते वार्याणि स्वध्वरो होता देवो अमर्त्यः ॥२४॥

मनुष्यों का हित साधने वाले, महान् गुणों वाले, अपने मुख द्वारा आहुतियों को देवताओं के समीप पहुँचाने वाले, अहिसित कार्यों को करने वाले, देवताओं का आवाहन करने वाले तथा अजर-अमर अग्निदेव हमें श्रेष्ठ सम्पत्ति प्रदान करते हैं॥२४॥

यदग्ने मर्त्यस्त्वं स्यामहं मित्रमहो अमर्त्यः ।
सहसः सूनवाहुत ॥२५॥

शौर्य के पुत्रों द्वारा आहूत तथा सखा की तरह पूजनीय हे अग्निदेव ! आपकी साधना करके हम मरेणधर्मा मनुष्य आपके सदृश अमरता प्राप्त करें॥२५॥

न त्वा रासीयाभिशस्तये वसो न पापत्वाय सन्त्य ।
न मे स्तोतामतीवा न दुर्हितः स्यादग्ने न पापया ॥२६॥

सबके पालक हे अग्निदेव ! हम किसी घातक दुष्कर्म के लिए आपकी प्रार्थना न करें । हमारे प्रशंसक तथा शत्रु दुर्बुद्धिग्रस्त न हों और अपने दुष्कर्म से हमें कष्ट न दें॥२६॥

पितुर्न पुत्रः सुभृतो दुरोण आ देवाँ एतु प्र णो हविः ॥२७॥

जैसे पिता पुत्र का पोषण करता है, उसी प्रकार मनुष्यों द्वारा अग्निदेव पोषण करने योग्य होते हैं। वे यज्ञ में प्रदान की हुई आहुतियों को ग्रहण करके देवताओं तक पहुँचाते हैं॥२७॥

तवाहमग्न ऊतिभिर्नेदिष्ठाभिः सचेय जोषमा वसो ।
सदा देवस्य मर्त्यः ॥२८॥

समस्त प्राणियों के पालक हे अग्निदेव ! आपके रक्षण-साधनों द्वारा संरक्षित होकर हम मरणधर्मा मनुष्य आपकी कृपा प्राप्त करें॥२८॥

तव क्रत्वा सनेयं तव रातिभिरग्ने तव प्रशस्तिभिः ।
त्वामिदाहुः प्रमतिं वसो ममाग्ने हर्षस्व दातवे ॥२९॥

हे अग्निदेव ! हम आपके श्रेष्ठ कर्मों, दानों तथा प्रशस्तियों से सम्पन्न बने । विद्वानों के द्वारा आप श्रेष्ठ ज्ञानी कहे जाते हैं । हे अग्निदेव ! आप हमें अपनी कृपा का अनुदान देने के निमित्त हर्षित हों॥२९॥

प्र सो अग्ने तवोतिभिः सुवीराभिस्तिरते वाजभर्मभिः ।
यस्य त्वं सख्यमावरः ॥३०॥

हे अग्निदेव ! आप जिसके मित्र बनकर सहयोग करते हैं, वे स्तोतागण श्रेष्ठ सन्तान, अन्न-बल आदि समृद्धि प्रदायक आपके संरक्षण को प्राप्त करते हैं॥३०॥

तव द्रप्सो नीलवान्वाश ऋत्विय इन्धानः सिष्णवा ददे ।
त्वं महीनामुषसामसि प्रियः क्षपो वस्तुषु राजसि ॥३१॥

हे सोम सिंचित अग्निदेव ! प्रवहमान शकट में स्थापित, कामना योग्य, प्रकाशित, तेजस्वी सोम आपके निमित्त प्राप्त किया जाता है । महान् उषाओं के प्रियरूप आप रात्रि में अधिक प्रकाशित होते हैं॥३१॥

तमागन्म सोभरयः सहस्रमुष्कं स्वभिष्टिमवसे ।
सम्राजं त्रासदस्यवम् ॥३२॥

अत्यधिक तेजस्वी, श्रेष्ठ रूप वाले तथा उत्कृष्ट इच्छाशक्ति वाले हे अग्निदेव ! आप त्रसदस्य द्वारा प्रशंसित हों । हे अग्निदेव ! अपनी सुरक्षा के लिये हम आपको ग्रहण करें॥३२॥

यस्य ते अग्ने अन्ये अग्नय उपक्षितो वया इव ।
विपो न द्युम्ना नि युवे जनानां तव क्षत्राणि वर्धयन् ॥३३॥

जिस प्रकार अन्य अग्नियाँ वृक्ष की शाखाओं के सदृश आपके द्वारा शक्ति प्राप्त करती हैं, उसी प्रकार हम भी सामर्थ्य तथा ऐश्वर्य से आपको समृद्ध करें और स्वयं भी सम्पत्ति तथा कीर्ति को प्राप्त करें॥३३॥

यमादित्यासो अद्रुहः पारं नयथ मर्त्यम् ।
मघोनां विश्वेषां सुदानवः ॥३४॥

द्रोहरहित तथा श्रेष्ठ दानी हे आदित्यो ! जिस मनुष्य पर आप प्रसन्न होते हैं, उसे समस्त विपत्तियों से पार लगा देते हैं तथा अपार धन प्रदान करते हैं॥३४॥

यूयं राजानः कं चिच्चर्षणीसहः क्षयन्तं मानुषाँ अनु ।
वयं ते वो वरुण मित्रार्यमन्त्स्यामेदृतस्य रथ्यः ॥३५॥

शत्रुओं का विनाश करने वाले हे आदित्यो ! जो मनुष्य का अहित करते हैं, आप उन्हें प्राणदण्ड दे । हे वरुण, मित्र और अर्यमा देवो ! आपके यज्ञ को हम सम्पादित करते हैं॥३५॥

अदान्मे पौरुकुत्स्यः पञ्चाशतं त्रसदस्युर्वधूनाम् ।
मंहिष्ठो अर्यः सत्पतिः ॥३६॥

पुरुकुत्स (आयुधों से युक्त) के बेटे त्रसदस्यु (दुष्टों के प्रतिरोधक) श्रेष्ठ दानी तथा प्रार्थना करने वालों की रक्षा करते हैं, उन्होंने मुझे पचास वधुएँ प्रदान कीं॥३६॥

उत मे प्रयियोर्वयियोः सुवास्त्वा अधि तुग्वनि ।
तिसृणां सप्ततीनां श्यावः प्रणेता भुवद्वसुर्दियानां पतिः ॥३७॥

इसके अलावा सुवास्ता (श्रेष्ठ आवास युक्त) नदी के तट पर, दो सौ दस गौओं तथा एक श्यामवर्ण वृषभ के स्वामी ने हमें धन एवं वस्त्रादि प्रदान किये॥३७॥

# ऋग्वेद – अष्टम मंडल

## सूक्त २०

ऋषि: सोभरि काण्व:
देवता – मरुत:। छंद: प्रगाथ, १४ सतो विराट

आ गन्ता मा रिषण्यत प्रस्थावानो माप स्थाता समन्यवः ।
स्थिरा चिन्नमयिष्णवः ॥१॥

गतिशील मरुद्गण हमें हानि न पहुँचाते हुए हमारे निकट आएँ । हे मन्युयुक्त वीरो ! आप स्थिर तथा बलशाली शत्रुओं (पर्वतों) को भी झुकाने वाले हैं, आप हमसे कभी दूर न हों॥१॥

वीळुपविभिर्मरुत ऋभुक्षण आ रुद्रासः सुदीतिभिः ।
इषा नो अद्या गता पुरुस्पृहो यज्ञमा सोभरीयवः ॥२॥

शत्रुओं को रुलाने वाले वज्रधारी हे वीर मरुतो ! आप अपने तेजोमय कठोर वज्रों सहित यहाँ पधारें । अनेकों द्वारा स्पृहणीय तथा सोभरि अनुष पर कृपा दृष्टि रखने वाले हे वीरो ! आप हमारे यज्ञ में अन्न सहित पधारें॥२॥

विद्मा हि रुद्रियाणां शुष्ममुग्रं मरुतां शिमीवताम् ।
विष्णोरेषस्य मीळ्हुषाम् ॥३॥

समस्त कामनाओं को पूर्ण करने वाले तथा उद्यमी रुद्र पुत्र मरुतों के उग्र पराक्रम का हमें ज्ञान है॥३॥

वि द्वीपानि पापतन्तिष्ठद्दुच्छुनोभे युजन्त रोदसी ।
प्र धन्वान्यैरत शुभ्रखादयो यदेजथ स्वभानवः ॥४॥

श्वेत आभूषण धारण करने वाले हे तेजस्वी मरुद्गण ! जब आप रिपुओं पर चढ़ाई करने के लिए अत्यन्त वेग से चलते हैं, तब बड़े-बड़े द्वीप धराशायी होने लगते हैं, पेड़-पौधे संकटग्रस्त हो जाते हैं, आकाश-पृथ्वी काँपने लगते हैं तथा रेगिस्तान की बालू चारों ओर उड़ने लगती है॥४॥

अच्युता चिद्वो अज्मन्ना नानदति पर्वतासो वनस्पतिः ।
भूमिर्यामेषु रेजते ॥५॥

आपके धावा बोलते समय अपने स्थान पर स्थिर रहने वाले पर्वत तथा पेड़-पौधे चीत्कार करने लगते हैं। उसी प्रकार जब आप शत्रुओं की सेना पर चढ़ाई करते हैं, तब धरती भी प्रकम्पित हो जाती है॥५॥

अमाय वो मरुतो यातवे द्यौर्जिहीत उत्तरा बृहत् ।
यत्रा नरो देदिशते तनूष्वा त्वक्षांसि बाह्वोजसः ॥६॥

हे मरुद्गण ! जब आप अपने पराक्रम से नायक के रूप में प्रतिष्ठित होकर, अपनी शक्तियों को इकट्ठा करके शत्रुदल पर प्रहार करते हैं, तब ऐसा लगता है कि आकाश भी अधिक व्यापक बनता जा रहा है॥६॥

स्वधामनु श्रियं नरो महि त्वेषा अमवन्तो वृषप्सवः ।
वहन्ते अह्रुतप्सवः ॥७॥

ये नायक मरुद्गण अत्यन्त तेजोमय, बलिष्ठ तथा सौम्य स्वभाव वाले हैं। ये अपनी कर्मठता और ग्रहण शक्ति द्वारा श्रेय-सौभाग्य को समृद्ध करते हैं॥७॥

गोभिर्वाणो अज्यते सोभरीणां रथे कोशे हिरण्यये ।
गोबन्धवः सुजातास इषे भुजे महान्तो नः स्परसे नु ॥८॥

सोभरि ऋषि के स्वर्णिम रथ के बीच गीतों के साथ मरुतों की वीणा बज रही है । सुजन्मा, गोबन्धु (गौओं के रक्षक अथवा किरणों के

सहयोगी) अत्यन्त महिमावान् ये मरुद्गण हमें अन्न तथा भोग्य-पदार्थों को प्रदान करने के लिए यत्नशील हों॥८॥

प्रति वो वृषदञ्जयो वृष्णे शर्धाय मारुताय भरध्वम् ।
हव्या वृषप्रयाव्णे ॥९॥

आदरपूर्वक सोम प्रदान करने वाले हे याजको ! शक्तिशाली मरुद्गणों के सम्वर्धन के लिए आप उन्हें हविरूप अन्न प्रदान करें, जिससे वे बलवान् तथा द्रुतगामी बन सकें॥९॥

वृषणश्वेन मरुतो वृषप्सुना रथेन वृषनाभिना ।
आ श्येनासो न पक्षिणो वृथा नरो हव्या नो वीतये गत ॥१०॥

हे नायक मरुद्गणो ! शक्तिशाली अश्वों से सम्पन्न मजबूत रथों पर आरूढ़ होकर, आप श्येन पक्षी की तरह तेजगति से हमारे हविरूप अन्न को ग्रहण करने के लिए यज्ञस्थल में पधारें॥१०॥

समानमञ्ज्येषां वि भ्राजन्ते रुक्मासो अधि बाहुषु ।
दविद्युतत्यृष्टयः ॥११॥

उन मरुद्गणों की पोशाक एक जैसी हैं । गले में स्वर्णिम हार विभूषित है तथा भुजदण्डों पर तीक्ष्ण हथियार चमक रहे हैं॥११॥

त उग्रासो वृषण उग्रबाहवो नकिष्टनूषु येतिरे ।
स्थिरा धन्वान्यायुधा रथेषु वोऽनीकेष्वधि श्रियः ॥१२॥

ये मरुद्गण अत्यन्त विकराल तथा बलिष्ठ भुजाओं वाले हैं । (युद्ध में) ये अपने शरीर की रक्षा का यत्न नहीं करते । हे मरुद्गणो ! आपके रथों में सुदृढ़ धनुष तथा अन्य अस्त्र-शस्त्र विद्यमान रहते हैं, इसीलिए आप रणक्षेत्र में सदैव विजयी होते हैं॥१२॥

येषामर्णो न सप्रथो नाम त्वेषं शश्वतामेकमिद्भुजे ।
वयो न पित्र्यं सहः ॥१३॥

ये अनेक मरुद्गण एक ही नाम वाले हैं; (किन्तु) पैतृक सम्पत्ति की तरह (सञ्ज्ञ प्राप्त तथा निर्वाह में समर्थ) हैं। ये तेजस्वी तथा जल के समान प्रवहमान हैं॥१३॥

तान्वन्दस्व मरुतस्ताँ उप स्तुहि तेषां हि धुनीनाम् ।
अराणां न चरमस्तदेषां दाना मह्ना तदेषाम् ॥१४॥

रिपुदल को प्रकम्पित करने वाले मरुद्गणों के बीच में कोई भेद-भाव नहीं है। आप उनकी वन्दना एवं स्तुति करें, क्योंकि उनके द्वारा दिया गया दान अत्यन्त महत्त्व रखता है॥१४॥

सुभगः स व ऊतिष्वास पूर्वासु मरुतो व्युष्टिषु ।
यो वा नूनमुतासति ॥१५॥

हे मरुद्गणो ! प्राचीन काल में जो उपासक आपके अनुयायी बनकर चले, वे आपके रक्षण-साधनों द्वारा संरक्षित होकर निश्चित रूप से सौभाग्यशाली बन गये॥१५॥

यस्य वा यूयं प्रति वाजिनो नर आ हव्या वीतये गथ ।
अभि ष द्युम्नैरुत वाजसातिभिः सुम्ना वो धूतयो नशत् ॥१६॥

शत्रुओं को प्रकम्पित करने वाले नायक हे मरुद्गणो ! आप जिस ऐश्वर्यशाली याजक के हविष्यान्न का सेवन करने के लिए जाते हैं, वह आपकी उज्ज्वल कीर्ति को प्राप्त करके भली-भाँति सुखोपभोग करता है॥१६॥

यथा रुद्रस्य सूनवो दिवो वशन्त्यसुरस्य वेधसः ।
युवानस्तथेदसत् ॥१७॥

दूसरों की रक्षा के लिए अपने जीवन का बलिदान करने वाले, युवक वीर मरुद्गण जिस समय दिव्यलोक, से पधारें, उस समय हमारा व्यवहार उनकी इच्छा के अनुकूल रहे॥१७॥

ये चार्हन्ति मरुतः सुदानवः स्मन्मीळ्हुषश्चरन्ति ये ।
अतश्चिदा न उप वस्यसा हृदा युवान आ ववृध्वम् ॥१८॥

जिस प्रकार अन्य याजक श्रेष्ठ्दानी मरुतों की उपासना करते हैं तथा उनके अनुरूप व्यवहार करते हैं, हम भी उन्हीं याजकों के समान अनुकूल व्यवहार करते हैं । हे वीर मरुतो ! आप हमारे समीप पधारकर, उदारतापूर्वक हमें समृद्धि प्रदान करें॥१८॥

यून ऊ षु नविष्ठया वृष्णः पावकाँ अभि सोभरे गिरा ।
गाय गा इव चर्कृषत् ॥१९॥

हे सोभरि षे ! जिस प्रकार कृषक कृषि कार्य करते समय, अपने वृषभों को रिझाने के लिए गीत गाते हैं, उसी प्रकार आप उन शक्तिशाली, पवित्र तथा नव (युवक) वीर मरुतों के लिए नवीन स्तोत्रों का पाठ करें॥१९॥

साहा ये सन्ति मुष्टिहेव हव्यो विश्वासु पृत्सु होतृषु ।
वृष्णश्चन्द्रान्न सुश्रवस्तमान्गिरा वन्दस्व मरुतो अह ॥२०॥

शत्रुओं को चुनौती देकर उन पर मुष्टि प्रहार करने वाले सैनिकों की तरह (शत्रु के आक्रमण को सहन करने वाले बलिष्ठ, यशस्वी तथा

चन्द्रमा की तरह आह्लादक वे वीर मरुद्गण ही प्रशंसा के योग्य हैं । उत्तम स्तोत्रों से उनकी वन्दना करें॥२०॥

गावश्चिद्घा समन्यवः सजात्येन मरुतः सबन्धवः ।
रिहते ककुभो मिथः ॥२१॥

समान उमंगों से युक्त हे मरुतो ! गौएँ (किरणें ) सजातीय होने के कारण विभिन्न दिशाओं में विचरण करती हुई परस्पर (एक दूसरे को) चाटती (स्नेहपूर्वक सहलाती रहती हैं॥२१॥

मर्तश्चिद्वो नृतवो रुक्मवक्षस उप भ्रातृत्वमायति ।
अधि नो गात मरुतः सदा हि व आपित्वमस्ति निध्रुवि ॥२२॥

नर्तन करने वाले तथा आभूषणों से सुशोभित हृदय-स्थल वाले हे मरुतो ! मनुष्य आपसे मित्रता की इच्छा करते हैं। आप भातृत्व-भाव से हमारे साथ रहते हुए प्रमुदित हों॥२२॥

मरुतो मारुतस्य न आ भेषजस्य वहता सुदानवः ।
यूयं सखायः सप्तयः ॥२३॥

श्रेष्ठ दानों तथा मित्र रूप हे मरुतो ! आप सर्पणशील (चलने वाले हैं; अतः पंक्तिबद्ध होकर चलते हुए हवाओं के द्वारा, दिव्य ओषधियाँ लेकर हमारे पास पधारें॥२३॥

याभिः सिन्धुमवथ याभिस्तूर्वथ याभिर्दशस्यथा क्रिविम् ।
मयो नो भूतोतिभिर्मयोभुवः शिवाभिरसचद्विषः ॥२४॥

हर्ष प्रदायक हे मरुद्गणो ! जिन रक्षण शक्तियों के द्वारा आपने समुद्र को संरक्षित किया, जिनसे कूप (जल संग्रह स्थल) तैयार किये, जिनसे आपने शत्रुओं को नष्ट किया, उन्हीं शक्तियों के द्वारा हमें सुख प्रदान करें॥२४॥

यत्सिन्धौ यदसिक्न्यां यत्समुद्रेषु मरुतः सुबर्हिषः ।
यत्पर्वतेषु भेषजम् ॥२५॥

श्रेष्ठ तेजस्वी हे मरुतो ! सिन्धु नदी, असिनी, समुद्र तथा पहाड़ों पर जो ओषधियाँ विद्यमान हैं, उन सबकी जानकारी आपको है॥२५॥

विश्वं पश्यन्तो बिभृथा तनूष्वा तेना नो अधि वोचत ।
क्षमा रपो मरुत आतुरस्य न इष्कर्ता विह्रुतं पुनः ॥२६॥

हे मरुद्गणो ! आप हमारे शरीर को बलिष्ठ बनाएँ, हममें से रोगी व्यक्तियों के रोगों को दूर करें तथा टूटे हुए अङ्गों को पुनः ठीक करें॥२६॥

# सूक्त २१

ऋषि: सोभरि काण्व:
देवता – इन्द्र, १७-१८ चित्र:। छंद: प्रगाथ

वयमु त्वामपूर्व्य स्थूरं न कच्चिद्भरन्तोऽवस्यवः ।
वाजे चित्रं हवामहे ॥१॥

वज्रधारी, अनुपम हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार सांसारिक गुण-सम्पन्न, शक्तिशाली मनुष्यों को लोग बुलाते हैं; उसी प्रकार अपनी रक्षा की कामना से विशिष्ट सोमरस द्वारा तृप्त करते हुए, हम3' की स्तुति करते हैं॥१॥

उप त्वा कर्मन्नूतये स नो युवोग्रश्चक्राम यो धृषत् ।
त्वामिद्ध्यवितारं ववृमहे सखाय इन्द्र सानसिम् ॥२॥

हे शत्रु संहारक देवेन्द्र ! कर्मशील रहते हुए हम अपनी सहायता के लिए तरुण और शूरवीर रूप में विद्यमान आपका ही आश्रय लेते हैं । मित्रवत् सहायता के लिए हम आपका स्मरण करते हैं॥२॥

आ याहीम इन्दवोऽश्वपते गोपत उर्वरापते ।
सोमं सोमपते पिब ॥३॥

अश्वों एवं गौओं के स्वामी, भूमिपालक, सोमरसे का पान करने वाले हे इन्द्रदेव ! निचोड़े गये सोमरस को ग्रहण करने के लिए हम आपका आवाहन करते हैं॥३॥

वयं हि त्वा बन्धुमन्तमबन्धवो विप्रास इन्द्र येमिम ।
या ते धामानि वृषभ तेभिरा गहि विश्वेभिः सोमपीतये ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आप मनोकामनाओं की पूर्ति करने वाले हैं। हम बन्धुहीन विद्वान् ब्राह्मण आषको ही भाई के रूप में मानते हैं। आप अपने सम्पूर्ण ओज के साथ सोमरस का पान करने के लिए पधारे॥४॥

सीदन्तस्ते वयो यथा गोश्रीते मधौ मदिरे विवक्षणे ।
अभि त्वामिन्द्र नोनुमः ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! निचोड़ने के बाद गो-दुग्ध मिश्रित, स्फूर्तिवर्धक तथा वाणों को शक्ति देने वाले सोमरस के निकट हम सभी पक्षियों के समान एकत्रित होकर आपको नमस्कार करते हैं॥५॥

अच्छा च त्वैना नमसा वदामसि किं मुहुश्चिद्वि दीधयः ।
सन्ति कामासो हरिवो ददिष्ट्वं स्मो वयं सन्ति नो धियः ॥६॥

हरित अश्व वाले हे इन्द्रदेव ! हम नमनपूर्वक आपकी महिमा का गान करते हैं । आप किस सोच-विचार में हैं ? हे अश्व (पराक्रम) युक्त इन्द्रदेव ! आप दाता हैं; हमारी कामनाएँ तेथी हमारी बुद्धियाँ (नीयत या विचार) सब आपके सामने हैं॥६॥

नूत्ना इदिन्द्र ते वयमूती अभूम नहि नू ते अद्रिवः ।
विद्मा पुरा परीणसः ॥७॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आपके द्वारा संरक्षित रहकर, हम सदैव नवीन बने रहते हैं । आप सर्वव्यापी हैं, आपकी इस महानता को हम नहीं जानते थे, लेकिन अब ज्ञात हो गया है, अतः हम सब आपके द्वारा रक्षणीय हैं॥७॥

विद्मा सखित्वमुत शूर भोज्यमा ते ता वज्रिन्नीमहे ।
उतो समस्मिन्ना शिशीहि नो वसो वाजे सुशिप्र गोमति ॥८॥

हे शूरवीर तथा वज्रधारी इन्द्रदेव ! हमें आपकी मित्रता और ऐश्वर्य के बारे में ज्ञान है, इसलिए हम उसकी कामना करते हैं। सबका पालन

करने वाले तथा शोभन शिरस्त्राण धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप हमें गौ आदि धनों से परिपूर्ण करें॥८॥

यो न इदमिदं पुरा प्र वस्य आनिनाय तमु वः स्तुषे ।
सखाय इन्द्रमूतये ॥९॥

हे मित्रो ! पूर्वकाल से ही जो, धन – वैभव प्रदान करने वाले हैं, उन इन्द्रदेव की हम आपके कल्याण के लिए स्तुति करते हैं॥९॥

हर्यश्वं सत्पतिं चर्षणीसहं स हि ष्मा यो अमन्दत ।
आ तु नः स वयति गव्यमश्व्यं स्तोतृभ्यो मघवा शतम् ॥१०॥

जो साधक, हरि अश्वों वाले, भद्रजनों का पालन करने वाले तथा रिपुओं को परास्त करने वाले इन्द्रदेव की प्रार्थना करते हैं, जिससे वे प्रसन्न रहते हैं- ऐसे इन्द्रदेव हम स्तुतिकर्ताओं को सैकड़ों गौओं तथा अश्वों से भरपूर ऐश्वर्य प्रदान करें॥१०॥

त्वया ह स्विद्युजा वयं प्रति श्वसन्तं वृषभ ब्रुवीमहि ।
संस्थे जनस्य गोमतः ॥११॥

वृषभ के समान बलशाली हे इन्द्रदेव ! गौ आदि उपकारों पशुओं के पालक के प्रति क्रोध व्यक्त करने वालों (असुरों) को हम, आपकी सहायता से उचित प्रत्युत्तर देकर दूर हटा दें॥११॥

जयेम कारे पुरुहूत कारिणोऽभि तिष्ठेम दूढ्यः ।
नृभिर्वृत्रं हन्याम शूशुयाम चावेरिन्द्र प्र णो धियः ॥१२॥

बहुतों द्वारा आहूत किये जाने वाले है इन्द्रदेव ! रणक्षेत्र में हम, हिंसक तथा दुर्बुद्धिग्रस्त शत्रुओं पर विजय प्राप्त करें । हम आपके सहयोग से वृत्र (हमारे व्यक्तित्व को घेरकर विकास में बाधा पहुँचाने वाली आसुरी माया) का वध करके आपकी कीर्ति फैलाएँ । हे इन्द्रदेव ! आप हमारी बुद्धि अथवा यज्ञादि कर्मों की सुरक्षा करें॥१२॥

अभ्रातृव्यो अना त्वमनापिरिन्द्र जनुषा सनादसि ।
युधेदापित्वमिच्छसे ॥१३॥

है इन्द्रदेव ! आप जन्म से ही भ्रातृ – संघर्ष से मुक्त हैं। आप पर शासन करने वाला कोई नहीं है और न ही सहायता करने वाला कोई बन्धु । आप युद्ध (जन संरक्षण) द्वारा अपने सहयोगियों (बन्धुओं) और भक्तों को पाने की कामना करते हैं॥१३॥

नकी रेवन्तं सख्याय विन्दसे पीयन्ति ते सुराश्वः ।

यदा कृणोषि नदनुं समूहस्यादित्पितेव हूयसे ॥१४॥

हे इन्द्रदेव ! आप (यज्ञ, दान आदि से रहित) धनाभिमानी को मित्र नहीं बनाते । सुरा पीकर मदान्ध(अमर्यादित लोग) आपको दुःख देते हैं। ज्ञान एवं गुणसम्पन्नों को मित्र बनाकर आप उन्नति पथ पर चलाते हैं, जिससे आप पिता तुल्य सम्मान प्राप्त करते हैं॥१४॥

मा ते अमाजुरो यथा मूरास इन्द्र सख्ये त्वावतः ।
नि षदाम सचा सुते ॥१५॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपकी मित्रता का लाभ प्राप्त करके अपने गृह में पुत्र-पौत्रों के साथ रहते हुए समृद्धि को प्राप्त करें । सोम का अभिषन करते समय हम एकत्र होकर बैठे॥१५॥

मा ते गोदत्र निरराम राधस इन्द्र मा ते गृहामहि ।
दृव्ह्हा चिदर्यः प्र मृशाभ्या भर न ते दामान आदभे ॥१६॥

हे इन्द्रदेव ! आप गौओं का अनुदान प्रदान करने वाले हैं। हम भी आपकी सम्पत्ति से वंचित न रहें । हमें आपके सिवा और किसी से सम्पत्ति न लेनी पड़े। आप हमें ऐसे ऐश्वर्य से परिपूर्ण करें, जिसे कोई छीन न सके॥१६॥

इन्द्रो वा घेदियन्मघं सरस्वती वा सुभगा ददिर्वसु ।
त्वं वा चित्र दाशुषे ॥१७॥

हे राजन् ! आहुति प्रदान करने वाले हम याजकों को इतनी सम्पत्ति क्या इन्द्रदेव ने प्रदान की ? यी सम्पत्ति की स्वामिनी सरस्वती (वाणी या मंत्र शक्तिो ने ? अथवा आपने ही यह प्रदान की है?॥१७॥

चित्र इद्राजा राजका इदन्यके यके सरस्वतीमनु ।
पर्जन्य इव ततनद्धि वृष्ट्या सहस्रमयुता ददत् ॥१८॥

पर्जन्य जिस प्रकार सर्वत्र फैल जाता है, उसी प्रकार) सरस्वती (नदी या बुद्धि की देवी) के अनुगामी चित्र (नामक या विशिष्ट) राजा (शासक अथवा प्रकाशवान्) ने अन्य राज्याश्रितों को हजारों – लाखों प्रकार के अनुदान प्रदान किए॥१८॥

# सूक्त २२

ऋषि: सोभरि काण्व:
देवता – आश्विनौ । छंद: १-६ प्रगाथ , ७ वृहता, ८ अनुष्टुप, ११ ककुप्, १२ मध्येज्योति: प्रगाथ

ओ त्यमह्व आ रथमद्या दंसिष्ठमूतये ।
यमश्विना सुहवा रुद्रवर्तनी आ सूर्यायै तस्थथुः ॥१॥

हे अश्विनीकुमारो !आप दर्शनीय रथ पर सूर्या (सूर्य से उत्पन्न उषा अथवा ऊर्जा) का वरण करने के निमित्त आरूढ़ हुए हैं, आपका वह रथ आवाहित करने योग्य है । हम अपनी रक्षा के लिए आपका आवाहन करते हैं॥१॥

पूर्वापुषं सुहवं पुरुस्पृहं भुज्युं वाजेषु पूर्व्यम् ।
सचनावन्तं सुमतिभिः सोभरे विद्वेषसमनेहसम् ॥२॥

अश्विनीकुमारों का रथ स्तुति करने वालों का पोषक तथा सरलतापूर्वक आवाहनीय है। सबके द्वारा वांछनीय यह रथ सबको पोषण प्रदान करता है तथा समर-भूमि में सबसे आगे रहता है। जिससे शत्रु भी ईष्र्या करते हैं, ऐसे श्रेष्ठ रथ की हे ऋषि सोभरे ! आप अपनी प्रार्थनाओं द्वारा प्रशंसा करें॥२॥

इह त्या पुरुभूतमा देवा नमोभिरश्विना ।
अर्वाचीना स्ववसे करामहे गन्तारा दाशुषो गृहम् ॥३॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों हविप्रदाता याजकों के घर जाते हैं। हम अपने यज्ञ के संरक्षण के लिए आपको नमनपूर्वक आवाहन करते हैं॥३॥

युवो रथस्य परि चक्रमीयत ईर्मान्यद्वामिषण्यति ।
अस्माँ अच्छा सुमतिर्वां शुभस्पती आ धेनुरिव धावतु ॥४॥

हे अश्विनीकुमारो ! आपके रथ का एक पहिया द्युलोक में रहता है तथा दूसरा आपके पास विद्यमान रहता हैं । हे कल्याणकारी रसधाराओं के स्वामी ! आपकी बुद्धि गौओं की तरह (उपकारी प्रवृत्तियुक्त) है । वह हमारी ओर शीघ्रता से आए॥४॥

रथो यो वां त्रिवन्धुरो हिरण्याभीशुरश्विना ।

परि द्यावापृथिवी भूषति श्रुतस्तेन नासत्या गतम् ॥५॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों सत्य के पालक हैं। तीन प्रकार की गद्दी (संचालन के आसन) तथा चाबुक (प्रेरक तंत्र) से युक्त आपका सुप्रसिद्ध स्वर्णिम रथ, द्यावा-पृथिवीं को विभूषित करता हैं । आपका वह रथ हमारे समीप पधारे॥५॥

दशस्यन्ता मनवे पूर्व्यं दिवि यवं वृकेण कर्षथः ।
ता वामद्य सुमतिभिः शुभस्पती अश्विना प्र स्तुवीमहि ॥६॥

कल्याण के स्वामी हे अश्विनीकुमारो ! आपने सर्वप्रथम दिव्यलोक में स्थित सम्पत्तियाँ मनु को प्रदान की तत्पश्चात् 'हुल' के द्वारा कृषिकर्म किया- ऐसे सुप्रसिद्ध आप दोनों की श्रेष्ठ स्तुतियों द्वारा हम प्रशंसा करते हैं ॥६॥

उप नो वाजिनीवसू यातमृतस्य पथिभिः ।
येभिस्तृक्षिं वृषणा त्रासदस्यवं महे क्षत्राय जिन्वथः ॥७॥

ऐश्वर्यवान् तथा बलवान् हे अश्विनीकुमारो ! जिन यज्ञीय मार्गों द्वारा आप त्रसदस्यु-पुत्र तृक्षि को क्षत्रियों के अनुरूप महान् शौर्य प्रकट करने के लिए प्रेरणा देने जाते हैं, उन्हीं मार्गों द्वारा हमारे निकट पधारें॥७॥

अयं वामद्रिभिः सुतः सोमो नरा वृषण्वसू ।
आ यातं सोमपीतये पिबतं दाशुषो गृहे ॥८॥

ऐश्वर्य की वर्षा करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! यह सोमरस पाषाण द्वारा कूटकर आप दोनों के लिए अभिषुत किया गया है । आहुति प्रदान करने वाले हम याजकों के आवास पर पधार कर, आप सोमरस का पान करें॥८॥

आ हि रुहतमश्विना रथे कोशे हिरण्यये वृषण्वसू ।
युञ्जाथां पीवरीरिषः ॥९॥

धन की वर्षा करने वाले है अश्विनीकुमारो ! आपका स्वर्णिम रथ आयुधों और पौष्टिक अन्नों के भण्डार से युक्त है । आप उस रथ पर आसीन हों॥९॥

याभिः पक्थमवथो याभिरध्रिगुं याभिर्बभ्रुं विजोषसम् ।
ताभिर्नो मक्षू तूयमश्विना गतं भिषज्यतं यदातुरम् ॥१०॥

हे अश्विनीकुमारो ! आपने जिन (सामथ्र्यो ) से विशेषरूप से सेवा-सहायता करने वाले पक्थ (परिपक्व) अधिगु (दृढ़ता से धारण करने वाले) एवं बभु (भरण-आपूर्ति करने वाले) को रक्षित-पोषित किया,

उन्हीं सामथ्र्यो से आतुरों (पीड़ितों ) को औषधि – उपचार द्वारा संरक्षण प्रदान करें॥१०॥

यदध्रिगावो अध्रिगू इदा चिदह्नो अश्विना हवामहे ।
वयं गीर्भिर्विपन्यवः ॥११॥

शीघ्रगामी हे अश्विनीकुमारो ! काम में बाधा आने पर आपको प्रातः कालीन स्तुति वचनों द्वारा हम आहूत करते हैं। अत: आप निश्चित रूप से पधारें॥११॥

ताभिरा यातं वृषणोप मे हवं विश्वप्सुं विश्ववार्यम् ।
इषा मंहिष्ठा पुरुभूतमा नरा याभिः क्रिविं वावृधुस्ताभिरा गतम् ॥१२॥

दानीं तथा शक्तिशाली नायक हे अश्विनीकुमारो ! आप सबके द्वारा स्वीकार करने योग्य हमारी समस्त स्तुतियों को सुनें; अपने उन सामथ्र्यों तथा ऐश्वर्यों से सम्पन्न होकर हमारे समीप पधारें और जलकुण्डों को जल से परिपूर्ण करें॥१२॥

ताविदा चिदहानां तावश्विना वन्दमान उप ब्रुवे ।
ता उ नमोभिरीमहे ॥१३॥

प्रात: काल दोनों अश्विनीकुमारों की हम वन्दना करते हैं। हम उनके निकट बैठकर स्तुति करते हुए उन्हीं की कामना करते हैं॥१३॥

तादिद्दोषा ता उषसि शुभस्पती ता यामन्त्रुद्रवर्तनी ।
मा नो मर्ताय रिपवे वाजिनीवसू परो रुद्रावति ख्यतम् ॥१४॥

पालक तथा बलवान् हे अश्विनीकुमारो ! हम आपको प्रात: काल तथा रात्रि के समय बुलाते हैं। आप रणक्षेत्र में वीरों के मार्ग का अनुगमन करते हैं । बलों को पुष्ट करने वाले तथा धन-धान्य से सम्पन्न आप हमें शत्रुओं के अधीन न होने दें॥१४॥

आ सुग्म्याय सुग्म्यं प्राता रथेनाश्विना वा सक्षणी ।
हुवे पितेव सोभरी ॥१५॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार पिता अपने पुत्रों को पुकारता है, उसी प्रकार हम (सोभरि ऋषि) आपका आवाहन करते है। हम सुख प्राप्त करने के योग्य हैं। अत: आप प्रात: काल रथ पर आरूढ़ होकर हमें सुख प्रदान करने के लिए पधारें॥१५॥

मनोजवसा वृषणा मदच्युता मक्षुंगमाभिरूतिभिः ।
आरात्ताच्चिद्भूतमस्मे अवसे पूर्वीभिः पुरुभोजसा ॥१६॥

हे अश्विनीकुमारो !आप दोनों ऐश्वर्य की वर्षा करने वाले, मन के समान द्रुतगति से चलने वाले तथा रिपुओं के अहंकार को नष्ट करने वाले हैं । आप अपने शीघ्रगामी रक्षण-साधनों से सम्पन्न होकर हमारे निकट निवास करें॥१६॥

आ नो अश्वावदश्विना वर्तिर्यासिष्टं मधुपातमा नरा ।
गोमद्दस्रा हिरण्यवत् ॥१७॥

मधुर सोमरस का पान करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! आप यज्ञीय मार्गों को अश्व, गौ, स्वर्ण आदि धनों से सम्पन्न बनाते हुए हमारे आवास (यज्ञस्थल) पर पधारें॥१७॥

सुप्रावर्गं सुवीर्यं सुष्ठु वार्यमनाधृष्टं रक्षस्विना ।
अस्मिन्ना वामायाने वाजिनीवसू विश्वा वामानि धीमहि ॥१८॥

शक्तिशाली हे अश्विनीकुमारो ! आपके आने पर हम ऐसी सम्पत्ति प्राप्त करते हैं, जो श्रेष्ठ पराक्रम से सम्पन्न और सरलतापूर्वक देने योग्य हैं । बलवान् मनुष्य भी जिस पर आक्रमण नहीं कर सकते , वे भली प्रकार वरण करने योग्य हैं॥१८॥

# सूक्त २३

ऋषि:विश्वमना वैयश्व:
देवता – अग्नि । छंद: उष्णिक्

ईळिष्वा हि प्रतीव्यं यजस्व जातवेदसम् ।
चरिष्णुधूममगृभीतशोचिषम् ॥१॥

हे स्तोताओ ! आप शत्रुजयी, अदम्य तेजोयुक्त, सर्वव्यापी, धूम्र से सुशोभित, सर्वज्ञ अग्निदेव की अर्चना करो॥१॥

दामानं विश्वचर्षणेऽग्निं विश्वमनो गिरा ।
उत स्तुषे विष्पर्धसो रथानाम् ॥२॥

सम्पूर्ण जगत् को एक दृष्टि से देखने वाले हे ऋषि विश्वमना ! स्पर्धा करने वाले (प्रगति के लिए प्रयासरत) याजकों को रथादि (प्रगति के माध्यम) देने वाले अग्निदेव की, अपने स्तुति वचनों से प्रशंसा करें॥२॥

येषामाबाध ऋग्मिय इषः पृक्षश्च निग्रभे ।
उपविदा वह्निर्विन्दते वसु ॥३॥

प्रार्थनायोग्य अग्निदेव रिपुओं को दण्डित करने वाले हैं। वे जिस हविप्रदाता के हविष्यान्न और सोमरस को स्वीकार करते हैं, उसे ही ऐश्वर्य से सम्पन्न बनाते हैं॥३॥

उदस्य शोचिरस्थाद्दीदियुषो व्यजरम् ।
तपुर्जम्भस्य सुद्युतो गणश्रियः ॥४॥

आलोकवान् अग्निदेव रिपुओं को प्रताड़ित करते हैं। वे श्रेष्ठ तथा दर्शनीय तेज से सम्पन्न हैं। उनका अविनाशी प्रकाश ऊर्ध्वमुखी होकर प्रकट हो रहा है॥४॥

उदु तिष्ठ स्वध्वर स्तवानो देव्या कृपा ।
अभिख्या भासा बृहता शुशुक्वनिः ॥५॥

श्रेष्ठ यज्ञादि कर्म करने वाले हे याजको ! आप उन अग्निदेव की साधना करके यशस्वी, तेजस्वी तथा महान् हों। उनकी प्रसन्नता को प्राप्त करके आप उन्नति करें॥५॥

अग्ने याहि सुशस्तिभिर्हव्या जुह्वान आनुषक् ।

यथा दूतो बभूथ हव्यवाहनः ॥६॥

हे अग्ने ! आप देवताओं के निमित्त आहुतियों को वहन करने वाले हैं। आप श्रेष्ठ स्तुतियों तथा आहुतियों को प्राप्त करके, उन्हें देवताओं तक पहुँचाने के लिए प्रस्थान करें॥६॥

अग्निं वः पूर्व्यं हुवे होतारं चर्षणीनाम् ।
तमया वाचा गृणे तमु वः स्तुषे ॥७॥

हम याजक उन प्राचीनतम अग्निदेव की प्रार्थना करके उनको आवाहित करते हैं। आप सब लोगों को भी उनकी प्रार्थना करने के लिए प्रेरित करते हैं॥७॥

यज्ञेभिरद्भुतक्रतुं यं कृपा सूदयन्त इत् ।
मित्रं न जने सुधितमृतावनि ॥८॥

सखा तुल्य, सबके हितैषी वे अग्निदेव, अत्यंत ज्ञानी हैं । जो साधक यजन करते हुए उन्हें घृताहुतियाँ समर्पित करते हैं, वे उनकी अनुकम्पा प्राप्त करके समृद्ध बनते हैं॥८॥

ऋतावानमृतायवो यज्ञस्य साधनं गिरा ।
उपो एनं जुजुषुर्नमसस्पदे ॥९॥

यज्ञ की आकाक्षा करने वाले हे साधको ! आप उन अग्निदेव का अपने स्तुति वचनों के द्वारा पूजन करें, जो नित्यज्ञान के देने वाले तथा यज्ञ के आधार रूप हैं॥९॥

अच्छा नो अङ्गिरस्तमं यज्ञासो यन्तु संयतः ।
होता यो अस्ति विक्ष्वा यशस्तमः ॥१०॥

जो अग्निदेव यज्ञ के सम्पादनकर्ता तथा कीर्तिवान् हैं, ऐसे श्रेष्ठ आंगिरस के लिए हमारे समस्त यज्ञादि कर्म समर्पित हैं॥१०॥

अग्ने तव त्ये अजरेन्धानासो बृहद्भाः ।
अश्वा इव वृषणस्तविषीयवः ॥११॥

हे अविनाशी अग्निदेव ! जगत् को आलोकित करने वाली आपकी महान् किरणें अश्वों की भाँति अत्यन्त शक्तिशाली हैं । वे सबकी इच्छाओं की पूर्ति करने वाली हैं॥११॥

स त्वं न ऊर्जां पते रयिं रास्व सुवीर्यम् ।
प्राव नस्तोके तनये समत्स्वा ॥१२॥

बलों के स्वामी हे अग्ने ! आप हमें श्रेष्ठ बल से सम्पन्न, धन प्रदान करें । रणक्षेत्र में हमारे पुत्र-पौत्रों को भलीप्रकार से संरक्षित करें॥१२॥

यद्वा उ विश्पतिः शितः सुप्रीतो मनुषो विशि ।
विश्वेदग्निः प्रति रक्षांसि सेधति ॥१३॥

यजमानों के रक्षक, हविष्यान्न से प्रदीप्त होने वाले ये अग्निदेव प्रसन्न होकर, याजकों के यहाँ प्रतिष्ठित होते हैं। वे सभी दुष्ट-दुराचारियों का (अपने प्रभाव से) विनाश करते हैं॥१३॥

श्रुष्ट्यग्ने नवस्य मे स्तोमस्य वीर विश्पते ।
नि मायिनस्तपुषा रक्षसो दह ॥१४॥

हे प्रजापालक अग्ने ! हमारे इस नूतन स्तोत्र को सुनकर उत्साही हुए आप, छली और कपटी दुष्टों को अपने प्रखर तेज से भस्म कर दें॥१४॥

न तस्य मायया चन रिपुरीशीत मर्त्यः ।
यो अग्नये ददाश हव्यदातिभिः ॥१५॥

अग्निदेव को हविष्यान्न की आहुति प्रदान करने वाले यजमान पर किसी भी दुष्ट की माया (छल-छद्म) का प्रभाव नहीं पड़ता॥१५॥

व्यश्वस्त्वा वसुविदमुक्षण्युरप्रीणादृषिः ।
महो राये तमु त्वा समिधीमहि ॥१६॥

हे अग्निदेव ! आप अपनी सामर्थ्य से सम्पूर्ण जगत् का पालन करते हैं तथा सुख प्रदान करते हैं । व्यश्व अषि ने धन प्राप्त करने की इच्छा से आपको प्रसन्न किया था। हम भी प्रचुर धन प्राप्त करने के निमित्त आपको भली प्रकार प्रदीप्त करते हैं॥१६॥

उशना काव्यस्त्वा नि होतारमसादयत् ।
आयजिं त्वा मनवे जातवेदसम् ॥१७॥

हे अग्ने ! आप सम्पूर्ण जगत् के ज्ञाता तथा पूजन करने योग्य हैं । उशना ऋष ने आपको याजक के रूप में मनु के घर में प्रतिष्ठित किया था॥१७॥

विश्वे हि त्वा सजोषसो देवासो दूतमक्रत ।
श्रुष्टी देव प्रथमो यज्ञियो भुवः ॥१८॥

हे अग्निदेव ! परस्पर प्रेमपूर्वक निवास करने वाले देवगणों ने आपको अपना संदेशवाहक बनाया। आप अपने द्रुतगामी गुणों के कारण यज्ञ में सबसे पहले वन्दनीय हुए॥१८॥

इमं घा वीरो अमृतं दूतं कृण्वीत मर्त्यः ।
पावकं कृष्णवर्तनिं विहायसम् ॥१९॥

हे मनुष्यो !आप ऐसे अविनाशी अग्निदेव को अपना सन्देशवाहक बनायें, जो धूम्रमार्ग से गमन करते हैं॥१९॥

तं हुवेम यतस्रुचः सुभासं शुक्रशोचिषम् ।
विशामग्निमजरं प्रत्नमीड्यम् ॥२०॥

वे अग्निदेव श्रेष्ठ, तेजस्वी और दिव्य आलोक से सम्पन्न हैं। वे अविनाशी तथा मनुष्यों द्वारा प्रार्थनीय हैं। हम उनका आवाहन करते हैं॥२०॥

यो अस्मै हव्यदातिभिराहुतिं मर्तोऽविधत् ।
भूरि पोषं स धत्ते वीरवद्यशः ॥२१॥

जो याजक उन अग्निदेव को आहुतियाँ प्रदान करते हैं, वे अत्यन्त पौष्टिक अन्न तथा पराक्रमी सन्तान से सम्पन्न होकर कीर्ति प्राप्त करते हैं॥२१॥

प्रथमं जातवेदसमग्निं यज्ञेषु पूर्व्यम् ।

प्रति स्रुगेति नमसा हविष्मती ॥२२॥

वे अग्निदेव सम्पूर्ण जगत् के ज्ञाता, देवताओं में प्रमुख और सबसे प्राचीन हैं। यज्ञ में हव्य से परिपूर्ण स्रुक्-पात्र समर्पित करते हुए हम विनम्रतापूर्वक उनकी सेवा करते हैं॥२२॥

आभिर्विधेमाग्नये ज्येष्ठाभिर्व्यश्ववत् ।
मंहिष्ठाभिर्मतिभिः शुक्रशोचिषे ॥२३॥

अश्व के सदृश शक्तिशाली तथा ज्ञानयुक्त स्तोत्रों द्वारा हम उन तेजस्वी अग्निदेव की वन्दना करते हैं॥२३॥

नूनमर्च विहायसे स्तोमेभिः स्थूरयूपवत् ।
ऋषे वैयश्व दम्यायाग्नये ॥२४॥

हे विश्वमना (विश्व हित की कामना वाले) ऋषे ! आप स्थूरयूप (स्थूल, प्रत्यक्ष अथवा सुदृढ़ स्तंभयुक्त) ऋषि के सदृश ही अपनी स्तुतियों द्वारा रिपुओं के दमन कर्ता उन महान् अग्निदेव की उपासना करें॥२४॥

अतिथिं मानुषाणां सूनुं वनस्पतीनाम् ।
विप्रा अग्निमवसे प्रत्नमीळते ॥२५॥

अपनी सुरक्षा के निमित्त हम लोग ज्ञानी, याजक, मनुष्यों के अतिथि, समिधाओं से उत्पन्न तथा अत्यन्त प्राचीन अग्निदेव की प्रार्थना करते हैं॥२५॥

महो विश्वाँ अभि षतोऽभि हव्यानि मानुषा ।
अग्ने नि षत्सि नमसाधि बर्हिषि ॥२६॥

हे अग्निदेव ! आप अपनी शक्ति से सम्पूर्ण पदार्थों में विद्यमान रहते हैं । याजकों द्वारा प्रदान की हुई आहुतियों को ग्रहण करते हैं । आप, इस यज्ञ में स्तवनों द्वारा पूजे जाने के बाद विद्यमान रहते हैं॥२६॥

वंस्वा नो वार्या पुरु वंस्व रायः पुरुस्पृहः ।
सुवीर्यस्य प्रजावतो यशस्वतः ॥२७॥

हे अग्निदेव ! आप हमें ऐसी सम्पत्ति प्रदान करें, जो अनेकों द्वारा वांछित और प्राप्त करने के योग्य हो । जो सन्तान, साहस, कीर्ति तथा अन्न आदि वैभव प्रदान करने वाली हो॥२७॥

त्वं वरो सुषाम्णेऽग्ने जनाय चोदय ।
सदा वसो रातिं यविष्ठ शश्वते ॥२८॥

हे शक्तिशाली अग्ने ! आप अनेकों द्वारा वरणीय तथा निवास प्रदान करने वाले हैं। आप स्तोताओं के कल्याण के लिए सदैव सम्पत्ति प्रदान करें॥२८॥

त्वं हि सुप्रतूरसि त्वं नो गोमतीरिषः ।
महो रायः सातिमग्ने अपा वृधि ॥२९॥

हे अग्निदेव ! आप ही श्रेष्ठ ऐश्वर्य प्रदान करने वाले दाता हैं । आप हमें गौ-अन्न आदि से सम्पन्न प्रचुर धन-वैभव प्रदान करें॥२९॥

अग्ने त्वं यशा अस्या मित्रावरुणा वह ।
ऋतावाना सम्राजा पूतदक्षसा ॥३०॥

हे अग्निदेव ! देवगणों के मध्य आप अत्यन्त कीर्तिमान् हैं । आप उन मित्र तथा वरुण देव को भी हमारे इस यज्ञ में ले आयें, जो अत्यन्त तेजयुक्त, शक्तिशाली तथा सत्य के पालक हैं॥३०॥

# सूक्त २४

ऋषि:विश्वमना वैयश्व:
देवता – इन्द्र: २८-३० वरु: सौषाम्णि:। छंद: उष्णिक्, ३० अनुष्टुप

सखाय आ शिषामहि ब्रह्मेन्द्राय वज्रिणे ।
स्तुष ऊ षु वो नृतमाय धृष्णवे ॥१॥

हे मित्रो !स्तोत्रों से वज्र धारण करने वाले इन्द्रदेव की स्तुति करते हुए हम उनसे आशीर्वाद की याचना करते हैं । श्रेष्ठ वीर तथा शत्रुओं को पराजित करने वाले इन्द्रदेव की, आप सभी के कल्याण के लिए हम स्तुति करते हैं॥१॥

शवसा ह्यसि श्रुतो वृत्रहत्येन वृत्रहा ।
मघैर्मघोनो अति शूर दाशसि ॥२॥

हे मित्र याजको ! वज्र धारण करने वाले इन्द्रदेव के निमित्त म स्तुति पाठ करते हैं। आप भी उन रिपु-संहारक तथा महान् नायक इन्द्रदेव की भलीप्रकार से प्रार्थना करें॥२॥

स नः स्तवान आ भर रयिं चित्रश्रवस्तमम् ।
निरेके चिद्यो हरिवो वसुर्ददिः ॥३॥

अश्वों से सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! आप हमारे द्वारा प्रशंसित होकर हमें प्राप्त करने योग्य तथा श्रेष्ठ कीर्तिदायक धन प्रदान करें। आप सम्पत्तिवानों को ही धन प्रदान करते हैं॥३॥

आ निरेकमुत प्रियमिन्द्र दर्षि जनानाम् ।
धृषता धृष्णो स्तवमान आ भर ॥४॥

हे रिपु-संहारक इन्द्रदेव ! हमारे द्वारा स्तुति किये जाने पर आप हमें शक्ति से सम्पन्न ऐश्वर्य प्रदान करें । रिपुओं का वैभव भी हमको ही प्रदान करें॥४॥

न ते सव्यं न दक्षिणं हस्तं वरन्त आमुरः ।
न परिबाधो हरिवो गविष्टिषु ॥५॥

अश्वों से सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! रणक्षेत्र में लड़ाई करने वाले रिपु आपके दाहिने तथा बायें हाथ को नहीं रोक सकते । आपके कार्य में विघ्न पहुँचाने का प्रयास करने वाले भी आपका अनर्थ नहीं कर सकते॥५॥

आ त्वा गोभिरिव व्रजं गीर्भिर्ऋणोम्यद्रिवः ।
आ स्मा कामं जरितुरा मनः पृण ॥६॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव !जिस प्रकार गोपालक गौओं के साथ गोशाला में प्रवेश करता है, उसी प्रकार हम अपनी प्रार्थनाओं के साथ आपके समीप पहुँचते हैं । आप हमारी मनोकामनाओं को पूर्ण करके हमें शान्ति प्रदान करें॥६॥

विश्वानि विश्वमनसो धिया नो वृत्रहन्तम ।
उग्र प्रणेतरधि षू वसो गहि ॥७॥

हे वृत्र-संहारक वीर इन्द्रदेव ! आप श्रेष्ठ निवास प्रदान करने वाले हैं। आप विश्वमना ऋषि के समस्त कार्यों को विवेकपूर्वक सम्पन्न करें तथा अपनी समीपता प्रदान करें॥७॥

वयं ते अस्य वृत्रहन्विद्याम शूर नव्यसः ।
वसोः स्पार्हस्य पुरुहूत राधसः ॥८॥

हे वृत्रहन्ता पराक्रमी इन्द्रदेव ! आप अनेकों लोगों द्वारा आहूत किये जाते हैं। आप हमें, मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाला, सराहनीय तथा इच्छित ऐश्वर्य प्रदान करें॥८॥

इन्द्र यथा ह्यस्ति तेऽपरीतं नृतो शवः ।
अमृक्ता रातिः पुरुहूत दाशुषे ॥९॥

हे श्रेष्ठ नायक इन्द्रदेव ! जिस प्रकार आपका अपरिमित बल रिपुओं द्वारा विनष्ट नहीं किया जा सकता, उसीं प्रकारे बहुतों द्वारा आवाहनीय हे इन्द्रदेव ! दानी के लिए प्रदत्त आपका दान भी कभी नष्ट होने वाला नहीं हैं॥९॥

आ वृषस्व महामह महे नृतम राधसे ।
दृळ्हश्चिद्दृह्य मघवन्मघत्तये ॥१०॥

हे धनवान् तथा उत्तम नायक इन्द्रदेव ! आप अत्यन्त पूजनीय हैं। आप मधुर सोमरस पीकर तृप्त हों तथा हमें सम्पत्ति प्रदान करने के लिए रिपुओं की मजबूत पुरियों को विनष्ट करें॥१०॥

नू अन्यत्रा चिदद्रिवस्त्वन्नो जग्मुराशसः ।
मघवञ्छग्धि तव तन्न ऊतिभिः ॥११॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप सम्पत्ति से सम्पन्न हैं । आपके पहले भी हमने अन्य देवगणों से अभिलाषाएँ की थीं। अब आप अपने रक्षण-साधनों से सम्पन्न होकर हमें सम्पत्ति प्रदान करें॥११॥

नह्यङ्ग नृतो त्वदन्यं विन्दामि राधसे ।
राये द्युम्नाय शवसे च गिर्वणः ॥१२॥

आत्मीय, नायक तथा प्रार्थना के योग्य है इन्द्रदेव ! यश, सम्पत्ति तथा तेजोबल को प्राप्त करने के निमित्त हम आपके अतिरिक्त किसी अन्य देव को नहीं जानते॥१२॥

एन्दुमिन्द्राय सिञ्चत पिबाति सोम्यं मधु ।
प्र राधसा चोदयाते महित्वना ॥१३॥

हे ऋत्विजो ! इन्द्रदेव के निमित्त वह सोमरस समर्पित करो, जिस मुधर सोमरस का पान करके वे अपने प्रभाव से याजकों को विपुल धन प्रदान करते हैं॥१३॥

उपो हरीणां पतिं दक्षं पृञ्चन्तमब्रवम् ।
नूनं श्रुधि स्तुवतो अश्व्यस्य ॥१४॥

अश्वों के अधिपति, स्तोताओं के धनप्रदायक इन्द्रदेव की हम स्तुति करते हैं। हे इन्द्रदेव ! स्तुति करते हुए अभ्य (अश्व या पराक्रम युक्त ऋषि या साधक) के स्तोत्रों को आप निश्चित रूप से सुनें॥१४॥

नह्यङ्ग पुरा चन जज्ञे वीरतरस्त्वत् ।
नकी राया नैवथा न भन्दना ॥१५॥

हे इन्द्रदेव ! आपसे पहले आपके समान वीर, धनदाता, युद्ध में शत्रुओं को परास्त करने वाला तथा स्तुतियोग्य अन्य कोई देवता नहीं हुआ॥१५॥

एदु मध्वो मदिन्तरं सिञ्च वाध्वर्यो अन्धसः ।
एवा हि वीरः स्तवते सदावृधः ॥१६॥

हे ऋत्विग्गण ! मधुर सोमपान से आनन्दित होने वाले इन्द्रदेव को यह रस समर्पित करो । पराक्रमी और निरन्तर वृद्धि को प्राप्त होने वाले इन्द्रदेव ही स्तोताओं द्वारा सर्वदा प्रशंसित होते हैं॥१६॥

इन्द्र स्थातर्हरीणां नकिष्टे पूर्व्यस्तुतिम् ।
उदानंश शवसा न भन्दना ॥१७॥

हे अश्वपति इन्द्रदेव ! ऋषि प्रणीत आपकी स्तुतियों को अपनी सामर्थ्य एवं तेजस्विता से अन्य कोई भी प्राप्त नहीं कर सकते हैं अर्थात् आपके समान बलवान् एवं तेजस्वी कोई दूसरा नहीं॥१७॥

तं वो वाजानां पतिमहूमहि श्रवस्यवः ।

अप्रायुभिर्यज्ञेभिर्वावृधेन्यम् ॥१८॥

ऐश्वर्य की कामना से हम उन वैभवशाली इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं, जो प्रमादरहित होकर याजकों के यज्ञों (सत्कर्मों) से वृद्धि को (पोषण को) प्राप्त करते हैं॥१८॥

एतो न्विन्द्रं स्तवाम सखायः स्तोम्यं नरम् ।
कृष्टीर्यो विश्वा अभ्यस्त्येक इत् ॥१९॥

हे मित्रो ! शीघ्र आओ; हम उन स्तुत्य, नायक इन्द्रदेव की प्रार्थना करें, जो अकेले ही सभी शत्रुओं को परास्त करने में सक्षम हैं॥१९॥

अगोरुधाय गविषे द्युक्षाय दस्म्यं वचः ।
घृतात्स्वादीयो मधुनश्च वोचत ॥२०॥

हे याजको ! गौ (गाय, वाणी अथवा इन्द्रियों ) का वध न करके उसको संरक्षित करने वाले तेजस्-सम्पन्न इन्द्रदेव के निमित्त घृत से भी अधिक मधुर तथा सुस्वादयुक्त स्तुति वचनों का पाठ करें॥२०॥

यस्यामितानि वीर्या न राधः पर्येतवे ।
ज्योतिर्न विश्वमभ्यस्ति दक्षिणा ॥२१॥

वे इन्द्रदेव असीम शौर्य से सम्पन्न हैं। उनकी सम्पत्ति को कोई प्राप्त नहीं कर सकता। उनका दान प्रकाश के समान सबके लिए उपलब्ध है॥२१॥

स्तुहीन्द्रं व्यश्ववदनूर्मिं वाजिनं यमम् ।
अर्यो गयं मंहमानं वि दाशुषे ॥२२॥

हे स्तोताओ ! वे इन्द्रदेव अहिंसित शक्ति – सम्पन्न तथा समस्त जगत् को नियमित करने वाले हैं। आप व्यश्व ऋषि के सदृश उनकी प्रार्थना करें । वे दानियों को सराहनीय ऐश्वर्य प्रदान करते हैं॥२२॥

एवा नूनमुप स्तुहि वैयश्व दशमं नवम् ।
सुविद्वांसं चर्कृत्यं चरणीनाम् ॥२३॥

हे विश्वमना ऋषे ! वे विद्वान् इन्द्रदेव मनुष्यों के अन्दर नौ प्राणों के अतिरिक्त दसवें प्राण (मुख्य प्राण) की तरह विद्यमान रहते हैं – ऐसे पूजनीय इन्द्रदेव की आप साधना करें॥२३॥

वेत्था हि निर्ऋतीनां वज्रहस्त परिवृजम् ।
अहरहः शुन्ध्युः परिपदामिव ॥२४॥

जिस प्रकार शोधनकर्ता (सूर्य, अग्नि आदि) सब ओर गतिशील (प्राणियों-पक्षियों) को जानते (उन्हें शुद्ध बनाते हैं, उसी प्रकार है वज्रपाणि (इन्द्रदेव) !आप नितियों (राक्षसों-सभी लोकों) को नियंत्रित करना जानते हैं॥२४॥

तदिन्द्राव आ भर येना दंसिष्ठ कृत्वने ।
द्विता कुत्साय शिश्नथो नि चोदय ॥२५॥

हे इन्द्रदेव ! आप अत्यन्त कर्मशील हैं। आप जिन रक्षण-साधनों के द्वारा सत्कर्म करने वालों को रक्षित करते हैं, जिनसे कुत्स ऋषि को रक्षित करने के लिए दो रिषुओं का वध किया था, उन्ही रक्षण-साधनों से आप हमें सुरक्षा प्रदान करें॥२५॥

तमु त्वा नूनमीमहे नव्यं दंसिष्ठ सन्यसे ।
स त्वं नो विश्वा अभिमातीः सक्षणिः ॥२६॥

हे श्रेष्ठ कर्मशील इन्द्रदेव ! ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए हम आपकी स्तुति करते हैं। आप हमारे समस्त रिपुओं का संहार करें॥२६॥

य ऋक्षादंहसो मुचद्यो वार्यात्सप्त सिन्धुषु ।
वधर्दासस्य तुविनृम्ण नीनमः ॥२७॥

जिन्होंने अपने भक्तों को निशाचरों और दुष्कर्मों से मुक्त किया, जिन्होंने सातों सरिताओं में पानी प्रदान किया तथा जिन्होंने उन अत्याचारियों को नष्ट किया, जो मनुष्यों को गुलाम बनाते थे, ऐसे शक्तिशाली इन्द्रदेव को हम बारम्बार प्रणाम करते हैं॥२७॥

यथा वरो सुषाम्णे सनिभ्य आवहो रयिम् ।
व्यश्वेभ्यः सुभगे वाजिनीवति ॥२८॥

हे वरो (श्रेष्ठ पुरुषों अथवा राज वरु)! जिस प्रकार आपने प्राचीन काल में 'सुषाम' नामक शासक की (पितृ लोक से) मुक्ति के लिए याचकों को धन प्रदान किया था, उसी प्रकार व्यश्व ऋषि को भी ऐश्वर्य प्रदान करें । हे उषा देवि ! आप अत्यन्त सौभाग्यवती तथा सम्पत्ति से सम्पन्न हैं। आप भी हमें यथोचित ऐश्वर्य प्रदान करें॥२८॥

आ नार्यस्य दक्षिणा व्यश्वाँ एतु सोमिनः ।
स्थूरं च राधः शतवत्सहस्रवत् ॥२९॥

मनुष्यों के हितैषी, सोम युक्त (व्यक्तियों अथवा) वरु राजा द्वारा प्रदान किया हुआ दान, हम व्यश्व (विशेष अश्व-पराक्रम सम्पन्नों की) सन्तानों को मिले, सैकड़ों-हजारों संख्या वाले ऐश्वर्य भी हमारे समीप आएँ॥२९॥

यत्त्वा पृच्छादीजानः कुहया कुहयाकृते ।
एषो अपश्रितो वलो गोमतीमव तिष्ठति ॥३०॥

माया को विनष्ट करने वाली हे उषा देवि ! यदि कोई आपसे पूछे कि 'वरु' राजा कहाँ निवास करते हैं ? तो आप उनके स्थान तथा रिपु-संहारक 'वरु' के विषय में कहना कि वे गोमती (नदी अथवा वाणी एवं इन्द्रियों से युक्त चेतना) के निकट निवास करते हैं॥३०॥

# सूक्त २५

ऋषि: विश्वमना वैयश्व:
देवता –मित्रवरुणौ, १०-२० विश्वे देवा। छंद: उष्णिक्,

ता वां विश्वस्य गोपा देवा देवेषु यज्ञिया ।
ऋतावाना यजसे पूतदक्षसा ॥१॥

हे मित्र और वरुणदेव ! आप समस्त जगत् के पालक और समस्त देवताओं के उपास्य हैं । आप यज्ञ के संरक्षक तथा पाचन शक्ति से सम्पन्न हैं । हे याजको ! आप उन दोनों देवों की उपासना करें॥१॥

मित्रा तना न रथ्या वरुणो यश्च सुक्रतुः ।
सनात्सुजाता तनया धृतव्रता ॥२॥

सत्कर्म करने वाले मित्र और वरुणदेव अदिति माता के पुत्र हैं तथा व्रतों को धारण करने वाले हैं। वे अपने रथ के द्वारा सब जगह गमन करते हैं॥२॥

ता माता विश्ववेदसासुर्याय प्रमहसा ।

महीजजानादितिर्ऋतावरी ॥३॥

सत्यपालक तथा महान् अदिति माता ने राक्षसों का संहार करने के लिए मित्रावरुण को उत्पन्न किया। वे दोनों समस्त विश्व के ज्ञाता तथा महान् तेज से सम्पन्न हैं ॥३॥

महान्ता मित्रावरुणा सम्राजा देवावसुरा ।
ऋतावानावृतमा घोषतो बृहत् ॥४॥

महान् मित्र और वरुणदेव अत्यन्त तेज तथा दिव्यगुणों से सम्पन्न हैं । वे जीवनीशक्ति प्रदान करने वाले और यज्ञ की रक्षा करने वाले हैं । वे यज्ञ को शोभा प्रदान करते हैं॥४॥

नपाता शवसो महः सूनू दक्षस्य सुक्रतू ।
सृप्रदानू इषो वास्त्वधि क्षितः ॥५॥

मित्र और वरुण देव श्रेष्ठ सामर्थ्य को पैदा करके उसकी रक्षा करते हैं। वे सत्कर्म करते हुए श्रेष्ठ दान करने वाले हैं। वे अन्न से सम्पन्न प्रदेश में निवास करने वाले हैं॥५॥

सं या दानूनि येमथुर्दिव्याः पार्थिवीरिषः ।
नभस्वतीरा वां चरन्तु वृष्टयः ॥६॥

हे मित्रावरुण ! आप दिव्यलोक तथा पृथ्वीलोक को धन-धान्य से परिपूर्ण कर देते हैं । अन्तरिक्ष से प्रवाहित होने वाली वर्षा आपके अधीन है॥६॥

अधि या बृहतो दिवोऽभि यूथेव पश्यतः ।
ऋतावाना सम्राजा नमसे हिता ॥७॥

हे मित्रावरुणदेव !आप यज्ञ-पथ पर चलने वाले हैं । आप तेज-सम्पन्न होकर द्युलोक से हमारा उसी प्रकार पालन करते हैं, जिस प्रकार गोपाल अपनी गौओं को भलीप्रकार देखता है । आप विनम्र मनुष्यों के हितैषी हैं॥७॥

ऋतावाना नि षेदतुः साम्राज्याय सुक्रतू ।
धृतव्रता क्षत्रिया क्षत्रमाशतुः ॥८॥

वे मित्र और वरुणदेव सत्य का पालन तथा सत्कर्म करते हुए, कुशलता से शासन करके स्वयमेव सर्वोच्च स्थान पर विराजते हैं। वे अपने संकल्प का पालन करते हुए, विपत्ति से मनुष्यों को बचाकर उन्हें सामर्थ्य प्रदान करते हैं॥८॥

अक्षणश्चिद्गातुवित्तरानुल्बणेन चक्षसा ।
नि चिन्मिषन्ता निचिरा नि चिक्यतुः ॥९॥

नेत्रों की परिधि में आने से पूर्व ही स्पष्ट रूप से समस्त प्राणियों को जानने वाले, मित्रावरुण सबको प्रेरित करते हैं। वे अपने असहनीय तेज के कारण प्राचीन काल से ही सबके द्वारा पूजे जाते हैं॥९॥

उत नो देव्यदितिरुरुष्यतां नासत्या ।
उरुष्यन्तु मरुतो वृद्धशवसः ॥१०॥

सत्य के पालक दोनों अश्विनीकुमार, माता अदिति तथा शक्ति से समृद्ध मरुद्गण हमारा संरक्षण करें॥१०॥

ते नो नावमुरुष्यत दिवा नक्तं सुदानवः ।
अरिष्यन्तो नि पायुभिः सचेमहि ॥११॥

हे श्रेष्ठ दानी मरुतो ! आप नौका के सदृश रात-दिन हमारा संरक्षण करें । हम अहसत रहकर ... ग-साधनों से सम्पन्न हों॥११॥

अघ्नते विष्णवे वयमरिष्यन्तः सुदानवे ।
श्रुधि स्वयावन्त्सिन्धो पूर्वचित्तये ॥१२॥

हिंसा न करते हुए हम श्रेष्ठदानी विष्णुदेव को आहुति प्रदान करते हैं । हे स्वप्रवाहित सिन्धो ! हमारी कामनाओं को समझने के लिए आप हमारी विनती को सुनें॥१२॥

तद्वार्यं वृणीमहे वरिष्ठं गोपयत्यम् ।
मित्रो यत्पान्ति वरुणो यदर्यमा ॥१३॥

जिस ऐश्वर्य का संरक्षण मित्र, वरुण और अर्यमादेव करते हैं, उस सर्वश्रेष्ठ तथा वणीय ऐश्वर्य की हम आपसे याचना करते हैं॥१३॥

उत नः सिन्धुरपां तन्मरुतस्तदश्विना ।
इन्द्रो विष्णुर्मीढ्वांसः सजोषसः ॥१४॥

हमारी सम्पत्ति का संरक्षण जलयुक्त सरिताएँ, मरुद्गण तथा दोनों अश्विनीकुमार करें। इसके अतिरिक्त कामनाओं को पूर्ण करने वाले तथा एक साथ निवास करने वाले देवगण भी हमारे ऐश्वर्य को संरक्षित करें॥१४॥

ते हि ष्मा वनुषो नरोऽभिमातिं कयस्य चित् ।
तिग्मं न क्षोदः प्रतिघ्नन्ति भूर्णयः ॥१५॥

जिस प्रकार पानी की तेज धार पेड़ों को नष्ट कर देती है, उसी प्रकार सम्मानीय तथा द्रुतगामी नायक (मित्रावरुण) रिपुओं के अहंकार को नष्ट कर देते हैं॥१५॥

अयमेक इत्था पुरूरु चष्टे वि विश्पतिः ।
तस्य व्रतान्यनु वश्चरामसि ॥१६॥

मित्र और वरुण दोनों में से एक देव, मित्र समस्त जगत् का पोषण तथा देखभाल करते हैं । हे याजको । अपने हित के लिए हम उनके नियमों पर चलते हैं॥१६॥

अनु पूर्वाण्योक्या साम्राज्यस्य सश्चिम ।
मित्रस्य व्रता वरुणस्य दीर्घश्रुत् ॥१७॥

हम सम्पूर्ण जगत् का कल्याण करने वाले सम्राट् वरुणदेव के व्रतों का पालन करते हैं तथा मित्र देवता के भी व्रतों का पालन करते हैं॥१७॥

परि यो रश्मिना दिवोऽन्तान्ममे पृथिव्याः ।
उभे आ पप्रौ रोदसी महित्वा ॥१८॥

मित्र देवता ने अपनी किरणों से दिव्यलोक तथा पृथिवीलोक को व्याप्त किया। वे और वरुणदेव ने दोनों लोकों को अपनी महिमा के द्वारा पूर्ण किया॥१८॥

उदु ष्य शरणे दिवो ज्योतिरयंस्त सूर्यः ।
अग्निर्न शुक्रः समिधान आहुतः ॥१९॥

जब मित्र और वरुणदेव सूर्यदेव के स्थान पर अपना दिव्य प्रकाश प्रकट करते हैं, तब वे अग्निदेव के सदृश तेज-सम्पन्न होकर सभी लोगों द्वारा आहूत किये जाते हैं॥१९॥

वचो दीर्घप्रसद्मनीशे वाजस्य गोमतः ।
ईशे हि पित्वोऽविषस्य दावने ॥२०॥

हे याजको ! आप इस विशाल यज्ञ में स्तोत्रों का पाठ करें । वे मित्र देवता, गौ से सम्पन्न अन्न के अधिष्ठाता हैं। वे ही दोषरहित अन्न को हमें प्रदान करने में समर्थ हैं॥२०॥

तत्सूर्यं रोदसी उभे दोषा वस्तोरुप ब्रुवे ।
भोजेष्वस्माँ अभ्युच्चरा सदा ॥२१॥

हम उन सूर्यदेव तथा दोनों (द्यु और पृथिवी) लोकों की प्रार्थना करते हैं । हे वरुणदेव ! आप हमें भोज्य पदार्थ प्रदान करने के लिए सदैव हमारे निकट पधारें॥२१॥

ऋज्रमुक्षण्यायने रजतं हरयाणे ।
रथं युक्तमसनाम सुषामणि ॥२२॥

'उक्ष' वंशीय शासक 'सुषाम' के पुत्र 'वरु' नामक राजा ने हमें द्रुतगामी अश्व तथा सोने-चाँदी से विभूषित रथ प्रदान किया। वह रथ रिपुओं की आयु हरने में सक्षम है॥२२॥

ता मे अश्व्यानां हरीणां नितोशना ।
उतो नु कृत्व्यानां नृवाहसा ॥२३॥

हमें अश्वों से, रिपुओं का संहार करने वाले तथा नायकों का वहन करने वाले दो द्रुतगामी घोड़े प्राप्त हुए॥२३॥

स्मदभीशू कशावन्ता विप्रा नविष्ठया मती ।
महो वाजिनावर्वन्ता सचासनम् ॥२४॥

श्रेष्ठ लगाम तथा चाबुक वाले, ज्ञान – सम्पन्न दो द्रुतगामी अश्वों पराक्रमों) को हमने अभिनव प्रार्थनाओं के द्वारा एक साथ प्राप्त किया॥२४॥

# सूक्त २६

ऋषि: विश्वमना वैयश्व: व्यश्वो वांगिरस:
देवता –आश्विनौ, २०-२५ वायु। छंद: उष्णिक्, १६-१९, २१, २५
गायत्री, २० अनुष्टुप

युवोरु षू रथं हुवे सधस्तुत्याय सूरिषु ।
अतूर्तदक्षा वृषणा वृषण्वसू ॥१॥

बलशाली, सुख या धन वर्षक, अनश्वर बलों के धारक हे अश्विनीकुमारो ! ज्ञानियों के बीच संयुक्त रूप से स्तुति के लिए हम आपके रथ (संचार के साधनों का आवाहन करते हैं॥१॥

युवं वरो सुषाम्णे महे तने नासत्या ।
अवोभिर्याथो वृषणा वृषण्वसू ॥२॥

सत्य के पालक, शक्तिशाली हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों ऐश्वर्य की वर्षा करने वाले हैं। जिस प्रकार आप 'सुषाम' (नरेश या निष्पक्ष दानी) को ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए पधारते थे, उसी प्रकार हमारे लिए भी

रक्षण-साधनों सहित आगमन करें । हे वरु (नरेश या श्रेष्ठ साधक) ! आप ऐसी स्तुति करें॥२॥

ता वामद्य हवामहे हव्येभिर्वाजिनीवसू ।
पूर्वीरिष इषयन्तावति क्षपः ॥३॥

शक्ति- सम्पन्न, ऐश्वर्यवान् हे अश्विनीकुमारो ! प्रातः काल, प्रचुर धन-धान्य की प्राप्ति के लिए हम आपको आवाहन करते हुए, आपको आहुतियाँ समर्पित करते हैं॥३॥

आ वां वाहिष्ठो अश्विना रथो यातु श्रुतो नरा ।
उप स्तोमान्तुरस्य दर्शथः श्रिये ॥४॥

हे अश्विनीकुमारो ! सर्वत्र अमण करने वाला आपका प्रसिद्ध रथ इधर भी पधारे । आप स्तुति करने वालों को ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए उनकी प्रार्थना को सुनें॥४॥

जुहुराणा चिदश्विना मन्येथां वृषण्वसू ।
युवं हि रुद्रा पर्षथो अति द्विषः ॥५॥

हे धनवर्षक अश्विनीकुमारो ! आप दोनों शत्रुओं को पीड़ित करने वाले हैं। आप दोनों ईर्ष्या करने वाले शत्रुओं को नष्ट करके आगे बढ़ जाते हैं॥५॥

दस्रा हि विश्वमानुषङ्क्षूभिः परिदीयथः ।
धियंजिन्वा मधुवर्णा शुभस्पती ॥६॥

दर्शनीय तथा कान्तिमान् हे अश्विनीकुमारो ! आप अपने कार्यों को कुशलतापूर्वक सम्पन्न करते हैं तथा द्रुतगामी अश्वों द्वारा समस्त स्थानों पर पहुँचते हैं॥६॥

उप नो यातमश्विना राया विश्वपुषा सह ।
मघवाना सुवीरावनपच्युता ॥७॥

धन-सम्पन्न तथा गतिशील रहने वाले हे अश्विनीकुमारो ! समस्त प्राणियों का पालन करने हेतु धन- सम्पन्न होकर आप हमारे निकट पधारें॥७॥

आ मे अस्य प्रतीव्यमिन्द्रनासत्या गतम् ।
देवा देवेभिरद्य सचनस्तमा ॥८॥

हे इन्द्र-हे सत्यपालक दानदाता (अश्विनी कुमारो) !आप देवताओं के साथ प्रचुर धन – सम्पन्न होकर हमारे इस यज्ञ में पधारें॥८॥

वयं हि वां हवामह उक्षण्यन्तो व्यश्ववत् ।
सुमतिभिरुप विप्राविहा गतम् ॥९॥

हे विद्वान् अश्विनीकुमारो ! व्यश्व ऋषि के सदृश, हम भी ऐश्वर्य प्राप्ति की आकांक्षा से आपका आवाहन करते हैं। अत: आप श्रेष्ठ ज्ञान-सम्पन्न होकर हमारे निकट पधारें॥९॥

अश्विना स्वृषे स्तुहि कुवित्ते श्रवतो हवम् ।
नेदीयसः कूळयातः पणीँरुत ॥१०॥

हे व्यश्व ऋषे ! आप उन अश्विनीकुमारों की स्तुति करें, वे आपकी प्रार्थना को अवश्य सुनेंगे। वे दोनों पास में निवास करने वाले शत्रुओं तथा लालची वणिकों (व्यापारियों को नष्ट कर देते हैं॥१०॥

वैयश्वस्य श्रुतं नरोतो मे अस्य वेदथः ।
सजोषसा वरुणो मित्रो अर्यमा ॥११॥

सबके नायक हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों व्यश्व अषि की प्रार्थना का श्रवण करें और हमारे भी स्तुति-वचनों पर ध्यान दें । आप दोनों,

मि-वरुण तथा अर्यमादेव आदि सभी के साथ यहाँ यज्ञस्थल पर पधारें॥११॥

युवादत्तस्य धिष्ण्या युवानीतस्य सूरिभिः ।
अहरहर्वृषण मह्यं शिक्षतम् ॥१२॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों स्तुति के योग्य तथा कामनाओं को पूर्ण करने वाले हैं। जो ऐश्वर्य आप ज्ञानियों को प्रदान कर चुके हैं, वही ऐश्वर्य हमें भी प्रतिदिन प्रदान करें॥१२॥

यो वां यज्ञेभिरावृतोऽधिवस्त्रा वधूरिव ।
सपर्यन्ता शुभे चक्राते अश्विना ॥१३॥

जिस प्रकार कोई नववधू सुन्दर आवरण में लिपटी रहती है, उसी प्रकार जो मनुष्य यज्ञों (श्रेष्ठकर्मों) से आवृते रहते हैं, उनकी निगरानी करने वाले दोनों अश्विनीकुमार सदैव उन्हें प्रसन्न रखते हैं॥१३॥

यो वामुरुव्यचस्तमं चिकेतति नृपाय्यम् ।
वर्तिरश्विना परि यातमस्मयू ॥१४॥

हे अश्विनीकुमारो ! जो मनुष्य आप दोनों को अत्यन्त विशाल तथा श्रेष्ठ सुरक्षित आसन (आवास) प्रदान कर रहा है, आप उस याजक के घर सदैव जाने की आकांक्षा रखते हैं॥१४॥

अस्मभ्यं सु वृषण्वसू यातं वर्तिर्नृपाय्यम् ।
विषुद्रुहेव यज्ञमूहथुर्गिरा ॥१५॥

वसु (सुख या धन) वर्षक हे अश्विनीकुमारो ! आप नेतृत्व प्रदान करने वालों (हितपालकों) द्वारा बरतने योग्य (गुण या सुविधाएँ) हमारे लिए लाएँ । व्याधि के बाण के समान (पशु या रोगनाशक) वाणी (मंत्रयुक्त) यज्ञ को ऊर्ध्वगति प्रदान करे॥१५॥

वाहिष्ठो वां हवानां स्तोमो दूतो हुवन्नरा ।
युवाभ्यां भूत्वश्विना ॥१६॥

हे नायक (अश्विदेवो) ! आपके आवाहन के लिए बड़ी मात्रा में भेजे गये स्तोत्रों में यह स्तोत्र आपको दूत की तरह बुलाए और वे आपको प्रिय लगे॥१६॥

यददो दिवो अर्णव इषो वा मदथो गृहे ।
श्रुतमिन्मे अमर्त्या ॥१७॥

हे अविनाशी अश्विनीकुमारो ! आप दोनों चाहे दिव्यलोक में हों या समुद्र में अथवा अपने उपासक के गृह में विद्यमान होकर आनन्दित हो रहे हों, हमारी पुकार पर निश्चित रूप से ध्यान देकर शीघ्र ही पधारें॥१७॥

उत स्या श्वेतयावरी वाहिष्ठा वां नदीनाम् ।
सिन्धुर्हिरण्यवर्तनिः ॥१८॥

हे अश्विनीकुमारो ! स्वर्ण के समान कान्तिमान् , पवित्र जल वाली 'श्वेतयावरी' (शुभ प्रवाह वाले) प्रवाहों, प्रार्थनाओं के द्वारा हम आपका आवाहन करते हैं॥१८॥

स्मदेतया सुकीर्त्याश्विना श्वेतया धिया ।
वहेथे शुभ्रयावाना ॥१९॥

हे अश्विनीकुमारो ! शुभ्रवर्ण वाली (उत्तम भावनायुक्त), श्रेष्ठ कीर्तिवाली, कल्याण प्रदायिनी श्वेतयावरी नामक धारा को आप प्रवमान बनाएँ॥१९॥

युक्ष्वा हि त्वं रथासहा युवस्व पोष्या वसो ।
आन्नो वायो मधु पिबास्माकं सवना गहि ॥२०॥

सबका पालन करने वाले हे वायो ! रथ को खींचने वाले दो बलिष्ठ अश्वों को नियोजित करके आप हमारे इस यज्ञ में पधारें तथा मधुर सोमरस का पान करें॥२०॥

तव वायवृतस्पते त्वष्टुर्जामातरद्भुत ।
अवांस्या वृणीमहे ॥२१॥

सत्कर्मों के पालक हे वायो !आप त्वष्टा के जामाता हैं । हम आपके रक्षण-साधनों की कामना करते हैं॥२१॥

त्वष्टुर्जामातरं वयमीशानं राय ईमहे ।
सुतावन्तो वायुं द्युम्ना जनासः ॥२२॥

त्वष्टा देवता के जामाती, धन से सम्पन्न वायु देवता की, हम धन प्राप्ति के निमित्त स्तुति करते हैं। उनकी कृपा से हम धन-धान्य सम्पन्न बनें॥२२॥

वायो याहि शिवा दिवो वहस्वा सु स्वश्व्यम् ।
वहस्व महः पृथुपक्षसा रथे ॥२३॥

हे वायुदेवता ! आप विशाल अश्व समूह में से (चुनकर) दो बलिष्ठ अश्वों को अपने रथ में नियोजित करें। हे महान् वायो ! आप हितकारी साधनों के साथ हमारे निकट पधारें॥२३॥

त्वां हि सुप्सरस्तमं नृषदनेषु हूमहे ।
ग्रावाणं नाश्वपृष्ठं मंहना ॥२४॥

सौन्दर्य से सम्पन्न हे वायुदेव ! आप अपनी महानता से सब जगह विद्यमान रहते हैं। हम अपने यज्ञ में आपको ग्रावा (सोमरस निचोड़ने में प्रयुक्त पत्थर) के समान आवाहित करते हैं॥२४॥

स त्वं नो देव मनसा वायो मन्दानो अग्रियः ।
कृधि वाजाँ अपो धियः ॥२५॥

देवताओं में अग्रगामी हे वायो ! आप अन्त:करण से प्रसन्न होकर हमें अन्न, जल तथा सद्बुद्धि प्रदान करें॥२५॥

## ऋग्वेद – अष्टम मंडल

## *सूक्त २७*

ऋषि: मनुर्वैवस्वत:
देवता –विश्वे देवा ।   छंद:  प्रगाथ,

अग्निरुक्थे पुरोहितो ग्रावाणो बर्हिरध्वरे ।
ऋचा यामि मरुतो ब्रह्मणस्पतिं देवाँ अवो वरेण्यम् ॥१॥

उक्थ (स्तुतिपरक) यज्ञ में पुरोहित अग्नि, मावा (सोम निष्पादक पत्थर) तथा कुश (आसन) आदि स्थापित हैं । हे मरुतो ! हे ब्रह्मणस्पते ! हे देव ! वेदमंत्रों के द्वारा हम आपसे श्रेष्ठ रक्षण की कामना करते हैं॥१॥

आ पशुं गासि पृथिवीं वनस्पतीनुषासा नक्तमोषधीः ।
विश्वे च नो वसवो विश्ववेदसो धीनां भूत प्रावितारः ॥२॥

हे अग्निदेव ! आप हमें उषा एवं रात्रि के समय पशु, जमीन, पेड़-पौधे तथा श्रेष्ठ ओषधियाँ प्रदान करें। समस्त जगत् के ज्ञाता हे वसुओ ! आप हमारी (हितकारिणी) बुद्धियों के संरक्षक हों॥२॥

प्र सू न एत्वध्वरोऽग्ना देवेषु पूर्व्यः ।
आदित्येषु प्र वरुणे धृतव्रते मरुत्सु विश्वभानुषु ॥३॥

हमारा यह प्राचीन यज्ञ अग्निदेव, व्रतशील वरुणदेव, सर्वव्यापी प्रकाशवान् मरुद्गण तथा अन्य देवताओं के समीप कुशलतापूर्वक पहुँचे॥३॥

विश्वे हि ष्मा मनवे विश्ववेदसो भुवन्वृधे रिशादसः ।
अरिष्टेभिः पायुभिर्विश्ववेदसो यन्ता नोऽवृकं छर्दिः ॥४॥

समस्त विश्व को जानने वाले तथा रिपुओं का विनाश करने वाले सभी देवगण मानव मात्र को समृद्ध करें । चिरस्थायी रक्षण-साधनों से हमारा संरक्षण करें तथा हमें सुरक्षित आवास प्रदान करें॥४॥

आ नो अद्य समनसो गन्ता विश्वे सजोषसः ।
ऋचा गिरा मरुतो देव्यदिते सदने पस्त्ये महि ॥५॥

समान विचारवाले हे विश्वेदेवो ! हमारी वाणी से प्रकट ऋचाओं से प्रसन्न होकर आप संगठित रूप से हमारे समीप पधारें । हे महान् अदिति देवी तथा मरुद्गण ! आप हमारे यज्ञ में पधार कर आसीन हों॥५॥

अभि प्रिया मरुतो या वो अश्व्या हव्या मित्र प्रयाथन ।
आ बर्हिरिन्द्रो वरुणस्तुरा नर आदित्यासः सदन्तु नः ॥६॥

शत्रुओं का वध करने में शीघ्रता बरतने वाले हे ऋभुगण, मरुत्, इन्द्र, वरुण, आदित्यादि देवो ! आप सभी अपने प्रिय अश्वों के द्वारा आहुति ग्रहण करने के निमित्त हमारे इस यज्ञ- मण्डप में पधारें॥६॥

वयं वो वृक्तबर्हिषो हितप्रयस आनुषक् ।
सुतसोमासो वरुण हवामहे मनुष्वदिद्धाग्नयः ॥७॥

हे वरुणदेव ! हम मनु की तरह सोमरस अभिषुत करके यज्ञाग्नि को प्रज्वलित कर आहुतियाँ प्रदान करते हैं । आपके निमित्त आसन बिछाकर बारम्बार आपका आवाहन करते हैं॥७॥

आ प्र यात मरुतो विष्णो अश्विना पूषन्माकीनया धिया ।
इन्द्र आ यातु प्रथमः सनिष्युभिर्वृषा यो वृत्रहा गृणे ॥८॥

हे मरुद्गण, विष्णु, पूषा तथा दोनों अश्विनीकुमारो ! आप हमारी प्रार्थनाओं से प्रभावित होकर हमारे समीप पधारें । शक्तिशाली, वृत्रहन्ता हे इन्द्रदेव ! आप भी अपने सहचरों सहित हमारे यज्ञ में सर्वप्रथम पधारें॥८॥

वि नो देवासो अद्रुहोऽच्छिद्रं शर्म यच्छत ।
न यद्दूराद्वसवो नू चिदन्तितो वरूथमादधर्षति ॥९॥

किसी से भी शत्रुता न करने वाले हे देवताओ ! आप सभी मनुष्यों को बसाने वाले हैं। अतः आप हमें त्रुटिरहित, नष्ट न होने वाला आवास प्रदान करें॥९॥

अस्ति हि वः सजात्यं रिशादसो देवासो अस्त्याप्यम् ।
प्र णः पूर्वस्मै सुविताय वोचत मक्षू सुम्नाय नव्यसे ॥१०॥

हे देवताओ ! आप हिंसक प्रवृत्ति वालों के लिए शत्रु के समान हैं । आपके बीच छोटे-बड़े का कोई भेद-भाव नहीं हैं। आप हमारी उन्नति तथा अभिनव सुख के लिए यथाशीघ्र हमें उपदिष्ट करें॥१०॥

इदा हि व उपस्तुतिमिदा वामस्य भक्तये ।
उप वो विश्ववेदसो नमस्युराँ असृक्ष्यन्यामिव ॥११॥

समस्त पदार्थों के ज्ञाता हे देवताओ ! हम अन्नादि श्रेष्ठ ऐश्वर्यों की कामना करते हुए आपसे भावपूर्ण प्रार्थना करते हैं॥११॥

उदु ष्य वः सविता सुप्रणीतयोऽस्थादूर्ध्वो वरेण्यः ।
नि द्विपादश्चतुष्पादो अर्थिनोऽविश्रन्पतयिष्णवः ॥१२॥

हे देवताओ ! वरण करने योग्य, महान् सूर्यदेव जब आपके मध्य उदित होते हैं, तब सभी मनुष्य और पशु-पक्षी अपने कर्मों में निरत होकर अपनी कामनाओं की पूर्ति करते हैं॥१२॥

देवंदेवं वोऽवसे देवंदेवमभिष्टये ।
देवंदेवं हुवेम वाजसातये गृणन्तो देव्या धिया ॥१३॥

हम दिव्य स्तोत्रों (बुद्धियों) के माध्यम से अपनी सुरक्षा के लिए, अभीष्ट प्राप्ति के लिए तथा अन्न या बल की प्राप्ति के लिए दिव्य देवों अथवा देवों ही देवों को आवाहित करते हैं॥१३॥

देवासो हि ष्मा मनवे समन्यवो विश्वे साकं सरातयः ।
ते नो अद्य ते अपरं तुचे तु नो भवन्तु वरिवोविदः ॥१४॥

शत्रुओं पर मेन्यु प्रदर्शित करने वाले हे देवताओ ! आप सभी मुझ मनु को एक साथ मिलकर ऐश्वर्य प्रदान करें । आप हमें और हमारी सन्तानों को प्रतिदिन श्रेष्ठ मार्गदर्शन प्रदान करें॥१४॥

प्र वः शंसाम्यद्रुहः संस्थ उपस्तुतीनाम् ।
न तं धूर्तिर्वरुण मित्र मर्त्यं यो वो धामभ्योऽविधत् ॥१५॥

मित्रता करने वाले हे देवताओ ! इस यज्ञस्थल पर हम आपकी प्रार्थना करते हैं । हे मित्र और वरुणदेव ! जो मनुष्य आप जैसी तेजस्विता धारण करते हैं, उन्हें कोई भी विनष्ट नहीं कर सकता॥१५॥

प्र स क्षयं तिरते वि महीरिषो यो वो वराय दाशति ।
प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्पर्यरिष्टः सर्व एधते ॥१६॥

हे देवताओ ! जो व्यक्ति वरिष्ठता को ग्रहण करने के लिए आपको हवि प्रदान करता है, वह अपने गृह को पौष्टिक अन्न सामग्री से समृद्ध करता है । इसके अतिरिक्त वह धर्म का आचरण करके प्रजाओं (सन्तानों) से सम्पन्न होता है । उसे कोई हताहत नहीं कर सकता॥१६॥

ऋते स विन्दते युधः सुगेभिर्यात्यध्वनः ।
अर्यमा मित्रो वरुणः सरातयो यं त्रायन्ते सजोषसः ॥१७॥

श्रेष्ठ दानी मित्र, वरुण और अर्यमा देवता जिनका संरक्षण करते हैं, ऐसे व्यक्ति झगड़े के बिना भी ऐश्वर्य प्राप्त कर लेते हैं। वे प्रगति करते हुए सन्मार्गगामी बनते हैं॥१७॥

अज्रे चिदस्मै कृणुथा न्यञ्चनं दुर्गे चिदा सुसरणम् ।
एषा चिदस्मादशनिः परो नु सास्रेधन्ती वि नश्यतु ॥१८॥

हे देवताओ ! शत्रु के अजेय एवं दुर्गम दुर्ग को (हमारे लिए) सुगमता से प्रवेश करने तथा जीतने योग्य बना दें । रिपुओं के वज्र (अस्त्र-शस्त्र) हमारे वीरों को क्षतिग्रस्त न करके स्वयं विनष्ट हो जाएँ॥१८॥

यदद्य सूर्य उद्यति प्रियक्षत्रा ऋतं दध ।
यन्निम्रुचि प्रबुधि विश्ववेदसो यद्वा मध्यंदिने दिवः ॥१९॥

शौर्य से प्रेम करने वाले सर्वज्ञाता हे देवताओ ! आप सूर्योदय, सूर्यास्त तथा मध्याह्न काल में-हर समय हमारे लिए हितकारी हों॥१९॥

यद्वाभिपित्वे असुरा ऋतं यते छर्दिर्येम वि दाशुषे ।
वयं तद्वो वसवो विश्ववेदस उप स्थेयाम मध्य आ ॥२०॥

सज्जनों को जीवनी शक्ति प्रदान करने वाले हे देवताओ ! आपके निमित्त आहुति प्रदान करने वाले ज्ञाता को आप श्रेष्ठ आवास प्रदान करें । हे सर्वज्ञाता वसुओ ! हम आपके समीप आसीन हों॥२०॥

यदद्य सूर उदिते यन्मध्यंदिन आतुचि ।
वामं धत्थ मनवे विश्ववेदसो जुह्वानाय प्रचेतसे ॥२१॥

हे सर्वज्ञाता देवताओ ! सूर्योदय, सूर्यास्त तथा दोपहर के समय यजन करने वाले विद्वान् मनु को आप श्रेष्ठ ऐश्वर्य प्रदान करें॥२१॥

वयं तद्वः सम्राज आ वृणीमहे पुत्रो न बहुपाय्यम् ।
अश्याम तदादित्या जुह्वतो हविर्येन वस्योऽनशामहै ॥२२॥

हे ओजस्वी देवताओ ! जिस प्रकार पुत्र अपने पिता से याचना करता है, उसी प्रकार हम आपसे ऐसी सम्पत्ति की याचना करते हैं; जो अनेकों का पोषण करने वाली हो । हे आदित्यो ! हवि प्रदाता हम याजक उसी सम्पत्ति से हर्ष प्राप्त करें॥२२॥

# सूक्त २८

ऋषि: मनुर्वैवस्वत:
देवता –विश्वे देवा । छंद: गायत्री, ४ पुर उष्णिक्

ये त्रिंशति त्रयस्परो देवासो बर्हिरासदन् ।
विदन्नह द्वितासनन् ॥१॥

हमारे द्वारा प्रदत्त आहुतियों को स्वीकार करने के लिए कुश के आसन पर विराजित तैतीस देवताओं ने हमारी भावना को जाना। उन्होंने हमें दो प्रकार के धन प्रदान किये॥१॥

वरुणो मित्रो अर्यमा स्मद्रातिषाचो अग्नयः ।
पत्नीवन्तो वषट्कृताः ॥२॥

वरुण, मित्र, अर्यमा तथा अग्निदेव हमारी हवियों को ग्रहण करने के लिए अपनी शक्तियों सहित उपस्थित होकर हमारो आतिथ्य स्वीकार करें॥२॥

ते नो गोपा अपाच्यास्त उदक्त इत्था न्यक् ।
पुरस्तात्सर्वया विशा ॥३॥

वे देवगण सहचरों सहित पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ऊपर और नीचे सभी दिशाओं से हमारी सुरक्षा करें॥३॥

यथा वशन्ति देवास्तथेदसत्तदेषां नकिरा मिनत् ।
अरावा चन मर्त्यः ॥४॥

वे देवगण जिस वस्तु की कामना करते हैं, उसे प्राप्त कर लेते हैं। उनकी इच्छाओं को रोकने में कोई भी मनुष्य समर्थ नहीं हो सकता॥४॥

सप्तानां सप्त ऋष्टयः सप्त द्युम्नान्येषाम् ।
सप्तो अधि श्रियो धिरे ॥५॥

उन सप्त मरुतों के सात प्रकार के हथियार एवं सात प्रकार के कवच भिन्न-भिन्न हैं। वे सभी तेजस्वी स्वरूप वाले हैं॥५॥

# सूक्त २९

ऋषि: मनुर्वैवस्वत:, कश्यपो, मारीच:
देवता –विश्वे देवा । छंद: द्विपदा विराट्

बभ्रुरेको विषुणः सूनरो युवाञ्ज्यङ्क्ते हिरण्ययम् ॥१॥

ओजस्वी, सर्वत्र गमन करने वाले, श्रेष्ठ, नित्य नवीन शोभा वाले, रात्रि के नायक (सोम) स्वर्णिम रूप में उत्पन्न हुए॥१॥

योनिमेक आससाद द्योतनोऽन्तर्देवेषु मेधिरः ॥२॥

अग्निदेवता आलोकयुक्त और विद्वान् हैं, वे अपने मध्यस्थान पर विराजते हैं॥२॥

वाशीमेको बिभर्ति हस्त आयसीमन्तर्देवेषु निध्रुविः ॥३॥

त्वष्टा देवता सभी देवों के मध्य में बैठकर, अपने हाथ में लौह-निर्मित हथियार धारण किए हुए हैं॥३॥

वज्रमेको बिभर्ति हस्त आहितं तेन वृत्राणि जिघ्नते ॥४॥

इन्द्रदेवता अपने हाथ में वज्र धारण करते हैं तथा उसके प्रहार से शत्रुओं का संहार करते हैं॥४॥

तिग्ममेको बिभर्ति हस्त आयुधं शुचिरुग्रो जलाषभेषजः ॥५॥

जल द्वारा रोगों का निवारण करने वाले पुनीत तथा भीषण रुद्रदेव अपने हाथों में नुकीले हथियार ग्रहण करते हैं॥५॥

पथ एकः पीपाय तस्करो यथाँ एष वेद निधीनाम् ॥६॥

पूषा देवता पथ को सुरक्षित करने वाले तथा चोर के सदृश सबके छिपे हुए ऐश्वर्य को जानने वाले हैं॥६॥

त्रीण्येक उरुगायो वि चक्रमे यत्र देवासो मदन्ति ॥७॥

अपने तीन कदमों से, तीनों लोकों को नापने वाले विष्णुदेव स्तुति के योग्य हैं। इनके कार्य को देखकर सभी देवता हर्षित होते हैं॥७॥

विभिर्द्वा चरत एकया सह प्र प्रवासेव वसतः ॥८॥

दोनों अश्विनीकुमार, उषा के साथ एक ही रथ पर विराजमान होकर सभी जगह विचरण करते हैं, जैसे प्रवासी व्यक्ति (एक रथ या वाहन पर) गमन करते हैं॥८॥

सदो द्वा चक्राते उपमा दिवि सम्राजा सर्पिरासुती ॥९॥

अत्यन्त तेज़-सम्पन्न देवता द्वय (मित्र और वरुण) घृत की आहुतियों से युक्त या प्रकाशित हैं। वे दिव्यलोक में निवास करते हैं॥९॥

अर्चन्त एके महि साम मन्वत तेन सूर्यमरोचयन् ॥१०॥

प्रार्थना करने वाले स्तोतागण सामगान करते हैं और अपनी उपासना द्वारा सूर्यदेव को आलोकित करते हैं॥१०॥

# सूक्त ३०

ऋषि: मनुर्वैवस्वत:
देवता –विश्वे देवा । छंद: १ गायत्री, पुर उष्णिक्, ३ वृहती, ४ अनुष्टुप,

नहि वो अस्त्यर्भको देवासो न कुमारकः ।
विश्वे सतोमहान्त इत् ॥१॥

हे देवताओ ! आप में से न तो कोई बालक हैं और न किशोर; आप सभी देवता महान् (परिपक्व) हैं॥१॥

इति स्तुतासो असथा रिशादसो ये स्थ त्रयश्च त्रिंशच्च ।
मनोर्देवा यज्ञियासः ॥२॥

हे देवताओ ! आप हिंसक प्रवृत्ति के व्यक्तियों के विनाशक हैं और विद्वानों के द्वारा पूजनीय हैं। आप तैतीस देवताओं के रूप में सम्मानित किये जाते हैं॥२॥

ते नस्त्राध्वं तेऽवत त उ नो अधि वोचत ।
मा नः पथः पित्र्यान्मानवादधि दूरं नैष्ट परावतः ॥३॥

हे देवताओ ! आप सभी हमारा संरक्षण करें तथा पोषण प्रदान करते हुए हमें उपदेशित करें । हमें पितरों के अनुरूप मनुष्योचित मार्ग पर आगे बढ़ायें, उससे विपरीत या दूर न जाने दें॥३॥

ये देवास इह स्थन विश्वे वैश्वानरा उत ।
अस्मभ्यं शर्म सप्रथो गवेऽश्वाय यच्छत ॥४॥

सभी को सन्मार्ग की ओर ले जाने वाले हे देवताओ ! आप हमारे पास उपस्थित होकर हमें गौओं, अश्वों सहित विविध ऐश्वर्य प्रदान करें॥४॥

# सूक्त ३१

ऋषि: मनुर्वैवस्वत:
देवता – १-४ यज्ञ, यजमानश्च, ५-९ दंपति, १०-१८ दंपयाशिष।
छंद: १ गायत्री, १४ अनुष्टुप, १० पादनिचृत् १५-१८ पंक्ति

यो यजाति यजात इत्सुनवच्च पचाति च ।
ब्रह्मेदिन्द्रस्य चाकनत् ॥१॥

जो ब्राह्मण अपने आप यज्ञ करते और अन्यों से करवाते हैं तथा सोमरस अभिषुत करते हैं और दूसरों से करवाते हैं, वे इन्द्रदेव द्वारा आत्मज्ञान प्राप्त करते हैं॥१॥

पुरोळाशं यो अस्मै सोमं ररत आशिरम् ।
पादित्तं शक्रो अंहसः ॥२॥

जो याजक पुरोडाश और गो दुग्ध मिला हुआ सोमरस इन्द्रदेव को प्रदान करते हैं, उन्हें वे देव दुष्कर्मों से बचाते हैं॥२॥

तस्य द्युमाँ असद्रथो देवजूतः स शूशुवत् ।
विश्वा वन्वन्नमित्रिया ॥३॥

याजकगण देवों के द्वारा प्रदान किया हुआ तेजस्वी रथे प्राप्त करते हैं। वे अपने शत्रुओं को परास्त करके भली प्रकार समृद्धिशाली बनते हैं॥३॥

अस्य प्रजावती गृहेऽसश्चन्ती दिवेदिवे ।
इळा धेनुमती दुहे ॥४॥

इस (याजक) के घर में प्रजायुक्त, स्थिरतापूर्वक विद्यमान रहने वाली, नियमित रूप से धेनु रूपी मति प्रतिदिन ऐश्वर्य दुहती है॥४॥

या दम्पती समनसा सुनुत आ च धावतः ।
देवासो नित्ययाशिरा ॥५॥

हे देवो ! समान विचार वाले जो पति-पत्नी सोमरस अभिषुत करके उसे शुद्ध करते हैं, जो प्रतिदिन देवों को गो-दुग्ध मिश्रित सोम समर्पित करते हैं॥५॥

प्रति प्राशव्याँ इतः सम्यञ्चा बर्हिराशाते ।

न ता वाजेषु वायतः ॥६॥

वे समान विचार वाले दम्पति यज्ञ करते हैं, सदैव पोषक आहार प्राप्त करते हैं। उन्हें कभी भी अन्न से विमुख नहीं होना पड़ता॥६॥

न देवानामपि ह्नुतः सुमतिं न जुगुक्षतः ।
श्रवो बृहद्विवासतः ॥७॥

वे दम्पति देवों की उपेक्षा नहीं करते और न ही अपने विवेक को खोते हैं । अतः वे महान् कीर्ति को वरण करते हैं॥७॥

पुत्रिणा ता कुमारिणा विश्वमायुर्व्यश्नुतः ।
उभा हिरण्यपेशसा ॥८॥

वे दोनों सोने के आभूषणों से युक्त होकर सन्तानों के साथ हर्षित होते हुए पूर्ण आयुष्य को प्राप्त करते हैं॥८॥

वीतिहोत्रा कृतद्वसू दशस्यन्तामृताय कम् ।
समूधो रोमशं हतो देवेषु कृणुतो दुवः ॥९॥

नित्यप्रति देवताओं की प्रार्थना करने वाले वे दम्पति ऐश्वर्य और हर्ष प्रदायक अन्न का दान करते हैं । वे गौओं, भेड़ों आदि पशुओं से समृद्ध होकर उन देवों की उपासना करके अमरत्व को प्राप्त करते हैं॥९॥

आ शर्म पर्वतानां वृणीमहे नदीनाम् ।
आ विष्णोः सचाभुवः ॥१०॥

पहाड़ों और सरिताओं में विद्यमान सुख, तथा विष्णुदेव के पास रहने वाले सुख की हम याचना करते हैं॥१०॥

ऐतु पूषा रयिर्भगः स्वस्ति सर्वधातमः ।
उरुरध्वा स्वस्तये ॥११॥

पूषा देवता ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं। वे अत्यन्त हितकारी तथा सबको धारण करने वाले हैं। वे हमारे समीप पधारें । उनके आगमन से जीवन का विस्तृत भाग हमारे लिए हितकारी हो॥११॥

अरमतिरनर्वणो विश्वो देवस्य मनसा ।
आदित्यानामनेह इत् ॥१२॥

रिपुओं द्वारा परास्त न होने वाले पूषादेव की सभी मनुष्य सच्चे मन से प्रार्थना करते हैं। आदित्यगण जिन साधकों पर प्रसन्न होते हैं, उनके पाप नष्ट हो जाते हैं॥१२॥

यथा नो मित्रो अर्यमा वरुणः सन्ति गोपाः ।
सुगा ऋतस्य पन्थाः ॥१३॥

मित्र, वरुण तथा अर्यमा देवों के द्वारा संरक्षित होने के कारण जीवन में सन्मार्ग पर चलना हमारे लिए सरल हो॥१३॥

अग्निं वः पूर्व्यं गिरा देवमीळे वसूनाम् ।
सपर्यन्तः पुरुप्रियं मित्रं न क्षेत्रसाधसम् ॥१४॥

हे देवो ! ऐश्वर्य के निमित्त हम स्तोतागण आपमें से प्रमुख अग्निदेव की प्रार्थना करते हैं । आप अनेकों लोगों के प्रिय पात्र तथा सखा हैं । आप यज्ञ क्षेत्र को सिद्ध करने वाले हैं॥१४॥

मक्षू देववतो रथः शूरो वा पृत्सु कासु चित् ।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीदयज्वनो भुवत् ॥१५॥

जिस प्रकार रणक्षेत्र में कोई योद्धा तीव्रगति से आगे बढ़ता है, उसी प्रकार देवताओं को प्रिय लगने वाले भक्त का, जीवन रूपी रथ

द्रुतगति से आगे बढ़ता है । जो याजक देवताओं की सच्चे मन से उपासना करते हैं, वे अयाज्ञिक व्यक्ति को परास्त करते हैं॥१५॥

न यजमान रिष्यसि न सुन्वान न देवयो ।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीदयज्वनो भुवत् ॥१६॥

हे याजको ! हम सोमरस को अभिषुत करने वाले तथा देवों की प्रार्थना करने वाले हैं। आपका कभी विनाश नहीं होगा। जो याजक सच्चे मन से देवताओं की उपासना करते हैं, वे अयाज्ञिकों को परास्त करने में समर्थ होते हैं॥१६॥

नकिष्टं कर्मणा नशन्न प्र योषन्न योषति ।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीदयज्वनो भुवत् ॥१७॥

देवों की सच्ची लगन से उपासना करने वाले यजमान अपने कर्तव्य से च्युत नहीं हो सकते और न ही उन्हें कोई धन से दूर कर सकता है। वे स्वयं कभी भ्रष्ट नहीं हो सकते, (इसके विपरीत) अयाज्ञिकों को वे परास्त करने में सक्षम होते हैं॥१७॥

असदत्र सुवीर्यमुत त्यदाश्वश्व्यम् ।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीदयज्वनो भुवत् ॥१८॥

सच्ची लगन से उपासना करने वाले यजमान देवताओं के द्वारा श्रेष्ठ शक्ति तथा अच्चों को प्राप्त करते हैं। इसके अतिरिक्त वे अयाज्ञिकों को परास्त करने में सक्षम होते हैं॥१८॥

# सूक्त ३२

ऋषि: मेधातिथि काण्व
देवता – इन्द्र । छंद: गायत्री,

प्र कृतान्यृजीषिणः कण्वा इन्द्रस्य गाथया ।
मदे सोमस्य वोचत ॥१॥

हे कण्ववंशीय ऋषियो ! इन्द्रदेव के द्वारा सोमरस पीने के बाद, आनन्दित होकर किये गये कर्मों का आप गुणगान करें॥१॥

यः सृबिन्दमनर्शनिं पिप्रुं दासमहीशुवम् ।
वधीदुग्रो रिणन्नपः ॥२॥

पानी की धाराओं को प्रवाहित करने वाले शक्तिशाली इन्द्रदेव ने सृबिन्द, अनर्शनि, पिप्रु, अहीशुव तथा दास आदि समस्त शत्रुओं का संहार किया॥२॥

न्यर्बुदस्य विष्टपं वर्ष्माणं बृहतस्तिर ।

कृषे तदिन्द्र पौंस्यम् ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! अत्यन्त विशालकाय अर्बुद (मेघ) के दुर्ग को आप तोड़ दें, ऐसा वीरतापूर्ण कार्य आप ही सम्पन्न कर सकते हैं॥३॥

प्रति श्रुताय वो धृषत्तूर्णाशं न गिरेरधि ।
हुवे सुशिप्रमूतये ॥४॥

हे याजको ! जिस प्रकार बादलों से पानी की याचना करते हैं, उसी प्रकार हम आपकी सुरक्षा के निमित्त शत्रुओं के संहारक, मुकुटधारी इन्द्रदेव से स्तुति करते हैं॥४॥

स गोरश्वस्य वि व्रजं मन्दानः सोम्येभ्यः ।
पुरं न शूर दर्षसि ॥५॥

हे पराक्रमी इन्द्रदेव ! आप हर्षित होकर गौओं और अश्वों की शालाओं को सोम अभिषव करने वालों के उपयोग हेतु उसी प्रकार खोल देते हैं, जिस प्रकार आपने रिपुओं के नगर द्वारों को खोला था॥५॥

यदि मे रारणः सुत उक्थे वा दधसे चनः ।
आरादुप स्वधा गहि ॥६॥

यदि आप हमारे द्वारा अभिषुत सोमरस और स्तुति वचनों की आकांक्षा करते हैं, तो हमें पोषक अन्न प्रदान करने के निमित्त सुदूर स्थान से भी यज्ञस्थल पर पधारें॥६॥

वयं घा ते अपि ष्मसि स्तोतार इन्द्र गिर्वणः ।
त्वं नो जिन्व सोमपाः ॥७॥

सोमरस पीकर तृप्त होने वाले, प्रशंसा के योग्य हे इन्द्रदेव ! हम आपकी स्तुति करते हैं। आप हमें तुष्टि प्रदान करें॥७॥

उत नः पितुमा भर संरराणो अविक्षितम् ।
मघवन्भूरि ते वसु ॥८॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप प्रसन्न होकर हमें ऐसा ऐश्वर्य प्रदान करें, जो केभी क्षय न हो; क्योंकि आपके पास अपार सम्पत्ति है॥८॥

उत नो गोमतस्कृधि हिरण्यवतो अश्विनः ।
इळाभिः सं रभेमहि ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें गौ, अश्व, स्वर्ण तथा धन-धान्य से सम्पन्न बनाएँ, जिसे प्राप्त कर हम हर्षित हों॥९॥

बृबदुक्थं हवामहे सृप्रकरस्नमूतये ।
साधु कृण्वन्तमवसे ॥१०॥

सम्पूर्ण जगत् के संरक्षण के लिए अपनी भुजाओं को फैलाने वाले तथा सत्कर्म करने वाले उन इन्द्रदेव का हम आवाहन करते हैं, जिनका सर्वत्र ही गुणगान किया जाता है॥१०॥

यः संस्थे चिच्छतक्रतुरादीं कृणोति वृत्रहा ।
जरितृभ्यः पुरूवसुः ॥११॥

युद्धक्षेत्र में अनेकों वीरतापूर्ण कार्य करने वाले इन्द्रदेव वृत्र का वध करते हैं तथा अन्य शत्रुओं का भी संहार करते हैं। वे प्रार्थना करने वालों को प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करते हैं॥११॥

स नः शक्रश्चिदा शकद्दानवाँ अन्तराभरः ।
इन्द्रो विश्वाभिरूतिभिः ॥१२॥

सामर्थ्यवान् तथा दान-दाता इन्द्रदेव हमें बलवान् बनाएँ । वे अपनी रक्षण-शक्ति के द्वारा हमें अन्त: शक्ति प्रदान करें॥१२॥

यो रायोऽवनिर्महान्त्सुपारः सुन्वतः सखा ।
तमिन्द्रमभि गायत ॥१३॥

हे मनुष्यो ! प्रचुर धन वाले, संरक्षण करने वाले तथा विपत्ति से भली प्रकार पार लगाने वाले इन्द्रदेव, यजन करने वालों के सखा हैं । आप, ऐसे इन्द्रदेव का गुणगान करें॥१३॥

आयन्तारं महि स्थिरं पृतनासु श्रवोजितम् ।
भूरेरीशानमोजसा ॥१४॥

हे स्तोताओ ! संग्राम में अडिग रहने वाले, वैभव को जीतने वाले तथा अपने ओज से अनन्त शत्रुओं पर अधिकार एवं नियंत्रण करने वाले इन्द्रदेव की प्रार्थना करें॥१४॥

नकिरस्य शचीनां नियन्ता सूनृतानाम् ।
नकिर्वक्ता न दादिति ॥१५॥

उन इन्द्रदेव की महान् सामर्थ्यों को कोई भी परास्त नहीं कर सकता । ऐसा भी कोई नहीं है, जो उन्हें दान-दाता न कहे॥१५॥

न नूनं ब्रह्मणामृणं प्राशूनामस्ति सुन्वताम् ।

न सोमो अप्रता पपे ॥१६॥

सोम का अभिषवण एवं पान करने वाले ब्राह्मणों (ब्रह्मनिष्ठों) पर निश्चितरूप से कोई ऋण (देव, अषि या पितृ ऋण) नहीं होता। जिसने ऋण भरा (चुकाया नहीं, वह सोमपान नहीं कर सकता॥१६॥

पन्य इदुप गायत पन्य उक्थानि शंसत।
ब्रह्मा कृणोत पन्य इत् ॥१७॥

प्रार्थना के योग्य इन्द्रदेव के निमित्त स्तुतिगान करें, उनके निमित्त ही मन्त्रोच्चारण करें तथा उन्हीं के निमित्त स्तोत्रों का निर्माण करें॥१७॥

पन्य आ दर्दिरच्छता सहस्रा वाज्यवृतः।
इन्द्रो यो यज्वनो वृधः ॥१८॥

जिस शक्तिशाली इन्द्रदेव ने सहस्रों रिपुओं का वध कर दिया, उन्हें कोई भी शत्रु पीड़ित नहीं करते। वे याजकों को समृद्ध करते हैं॥१८॥

वि षू चर स्वधा अनु कृष्टीनामन्वाहुवः।
इन्द्र पिब सुतानाम् ॥१९॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी धारक शक्ति के निमित्त हम आपको आहूत करते हैं। आप हमें अन्न प्रदान करें और हमारे द्वारा प्रदत्त सोमरस का पान करें॥१९॥

पिब स्वधैनवानामुत यस्तुग्र्ये सचा ।
उतायमिन्द्र यस्तव ॥२०॥

हे इन्द्रदेव ! आपके निमित्त गौ दुग्ध और जल मिश्रित सोमरस प्रस्तुत है, आप उसका पान करें॥२०॥

अतीहि मन्युषाविणं सुषुवांसमुपारणे ।
इमं रातं सुतं पिब ॥२१॥

है इन्द्रदेव !जो साधक क्रोधित होकर सोमरस निकालता है, आप उसे ग्रहण न करें। उत्तम विधि से जो साधक सोमरस तैयार करता है, उसके यज्ञ में पहुँच कर सोमरस का पान करें॥२१॥

इहि तिस्रः परावत इहि पञ्च जनाँ अति ।
धेना इन्द्रावचाकशत् ॥२२॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारी पुकार को सुनकर तीनों सवनों में दूर देश से भी पधारें। आप पाँचों प्रकार के मनुष्यों (पितर, गन्धर्व, देवता, राक्षस तथा निषाद आदि) को लाँघकर भी हमारे समीप पधारें॥२२॥

सूर्यो रश्मिं यथा सृजा त्वा यच्छन्तु मे गिरः ।
निम्नमापो न सध्र्यक् ॥२३॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार सूर्य अपनी रश्मियों को प्रदान करता है, उसी प्रकार आप हमें ऐश्वर्य प्रदान करें । जिस प्रकार जल की धारा नीचे की तरफ (सहज हीं) प्रवाहित होती है, उसी प्रकार हमारे स्तुति वचन आपके पास पहुँचें॥२३॥

अध्वर्यवा तु हि षिञ्च सोमं वीराय शिप्रिणे ।
भरा सुतस्य पीतये ॥२४॥

हे अध्वयों ! किरीटधारी इन्द्रदेव के पीने के लिए कलश में सोमरस लेकर आप उन्हें यथाशीघ्र समर्पित करें॥२४॥

य उद्नः फलिगं भिनन्न्यक्सिन्धूँरवासृजत् ।
यो गोषु पक्वं धारयत् ॥२५॥

उन इन्द्रदेव ने जल के निमित्त बादलों को तितर-बितर किया, सरिताओं को प्रवाहित किया तथा गौओं के अन्दर परिपक्व दुग्ध स्थापित किया॥२५॥

अहन्वृत्रमृचीषम और्णवाभमहीशुवम् ।
हिमेनाविध्यदर्बुदम् ॥२६॥

समस्त साधनों में जिन इन्द्रदेव की सराहना की जाती हैं, उन्होंने वृत्र, और्णवाभ तथा अहीशुव (नामक राक्षसों अथवा घेर लेने वाले, ऊन जैसे तथा गतिशील बादलों ) को नष्ट किया । अर्बुद (राक्षस या जल युक्त मेघ को ) हिम (शीतलता) से वेध दिया॥२६॥

प्र व उग्राय निष्टुरेऽषाळ्हाय प्रसक्षिणे ।
देवत्तं ब्रह्म गायत ॥२७॥

हे स्तुति करने वालो ! शक्तिशाली बलवान् तथा रिपुओं का विनाश करने वाले इन्द्रदेव के निमित्त देवताओं को हर्षित करने वाले स्तोत्रों का पाठ करो॥२७॥

यो विश्वान्यभि व्रता सोमस्य मदे अन्धसः ।
इन्द्रो देवेषु चेतति ॥२८॥

हे इन्द्रदेव ! आप सोमरस से आनन्दित होकर देवताओं के अन्दर समस्त कर्मों के ज्ञान को जाग्रत् करते हैं॥८॥

इह त्या सधमाद्या हरी हिरण्यकेश्या ।
वोळ्हामभि प्रयो हितम् ॥२९॥

एक साथ ही उत्साहित होने वाले स्वर्णिम बालों वाले वे दोनों अश्व, कल्याणकारी धन-धान्यों को हमारी ओर ले आएँ॥२९॥

अर्वाञ्चं त्वा पुरुष्टुत प्रियमेधस्तुता हरी ।
सोमपेयाय वक्षतः ॥३०॥

अनेकों द्वारा स्तुत्य हे इन्द्रदेव ! दोनों अश्विनीकुमारों और प्रियमेध के द्वारा आप प्रशंसित हैं । अतः सोमपान के निमित्त यज्ञस्थल के निकट आप पधारें॥३०॥

## ऋग्वेद – अष्टम मंडल

## *सूक्त ३३*

ऋषि: मेधातिथि काण्व
देवता – इन्द्र । छंद: वृहती, १६-१८ गायत्री, १९ अनुष्टुप

वयं घ त्वा सुतावन्त आपो न वृक्तबर्हिषः ।
पवित्रस्य प्रस्रवणेषु वृत्रहन्परि स्तोतार आसते ॥१॥

हे वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ! जिस प्रकार जल नीचे की ओर प्रवाहित होता है, उसी प्रकार शोधित सोमरस सहित हम आपको झुककर नमन करते हैं। पवित्र यज्ञ में कुश के आसन पर एक साथ बैठकर याजकगण आपकी उपासना करते हैं॥१॥

स्वरन्ति त्वा सुते नरो वसो निरेक उक्थिनः ।
कदा सुतं तृषाण ओक आ गम इन्द्र स्वब्दीव वंसगः ॥२॥

सभी को निवास देने वाले है इन्द्रदेव ! सोमरस निकालकर याजकगण आपकी स्तुति करते हैं। सोमपान की इच्छा वाले आप, वृषभ जैसा नाद करते हुए कब हमारे यहाँ पधारेंगे?॥२॥

कण्वेभिर्धृष्णवा धृषद्वाजं दर्षि सहस्रिणम् ।
पिशङ्गरूपं मघवन्विचर्षणे मक्षू गोमन्तमीमहे ॥३॥

धनवान् , ज्ञानी, हे इन्द्रदेव ! शत्रुनाशक, सुवर्ण कान्तियुक्त, गौ के समान पवित्र धन, हम आपके पास से पाने के इच्छुक हैं । हे शूरवीर इन्द्रदेव ! कण्ववंशियों (मेधावी पुरुषों) द्वारा स्तुति किए जाने के बाद आप उन्हें हजारों प्रकार के बल तथा ऐश्वर्य प्रदान करते हैं॥३॥

पाहि गायान्धसो मद इन्द्राय मेध्यातिथे ।
यः सम्मिश्लो हर्योर्यः सुते सचा वज्री रथो हिरण्ययः ॥४॥

हे मेधातिथे ! जो इन्द्रदेव रथ में दो अच्वों को जोड़ते हैं, वज्रधारी हैं, रमणीय हैं, सुवर्णरथ में विराजमान हैं, ऐसे इन्द्रदेव को सोमपान से आनन्दित करके अपनी गौओं की रक्षा करें॥४॥

यः सुषव्यः सुदक्षिण इनो यः सुक्रतुर्गृणे ।
य आकरः सहस्रा यः शतामघ इन्द्रो यः पूर्भिदारितः ॥५॥

जिनके दायें-बायें हाथ श्रेष्ठ हैं, जिनसे वे सत्कर्म करते हैं, जो हजारों गुणों से सम्पन्न हैं, जो सैकड़ों ऐश्वर्यो से युक्त हैं, जो शत्रुओं के दुर्गों को ध्वस्त करते हैं और जो यज्ञों में पधारते हैं, उन इन्द्रदेव की हम प्रार्थना करते हैं॥५॥

यो धृषितो योऽवृतो यो अस्ति श्मश्रुषु श्रितः ।
विभूतद्युम्नश्च्यवनः पुरुष्टुतः क्रत्वा गौरिव शाकिनः ॥६॥

जो इन्द्रदेव शत्रुओं द्वारा कभी पराजित न होकर उनके बीच में प्रवेश करके उनका संहार करते हैं, वे प्रचुर ऐश्वर्य सम्पन्न तथा अनेकों द्वारा स्तुत्य हैं। अपने कर्म में प्रयत्नशील यजमान के लिए वे गौ के समान हैं॥६॥

क ईं वेद सुते सचा पिबन्तं कद्वयो दधे।
अयं यः पुरो विभिनत्त्योजसा मन्दानः शिप्र्यन्धसः ॥७॥

सोमयज्ञ में एक ही स्थान पर विद्यमान होकर सोमपान करने वाले अत्यधिक वैभव सम्पन्न इन्द्रदेव को कौन नहीं जानता ? सोमपान से प्रमुदित, शिरस्त्राण धारण किये हुए इन्द्रदेव अपनी शक्ति से विरोधियों के नगरों को विनष्ट कर देते हैं॥७॥

दाना मृगो न वारणः पुरुत्रा चरथं दधे।
नकिष्ट्वा नि यमदा सुते गमो महाँश्चरस्योजसा ॥८॥

अपने ओज से विचरण करने वाले हमारे लिए सम्माननीय है इन्द्रदेव ! आप इस सोमयज्ञ में पधारें। शत्रु की खोज में घूमने वाले, मतवाले हाथी के समान रथ द्वारा यज्ञ में जाने से आपको कोई रोक नहीं सकता॥८॥

य उग्रः सन्ननिष्टृतः स्थिरो रणाय संस्कृतः ।
यदि स्तोतुर्मघवा शृणवद्धवं नेन्द्रो योषत्या गमत् ॥९॥

जो शस्त्रों से सुसज्जित युद्धभूमि में स्थिर रहने वाले हैं, ऐसे अपराजेय, पराक्रमी वैभवशाली इन्द्रदेव हमारी स्तुतियों को सुनकर, दूसरे स्थान पर न जाकर इस यज्ञ में ही उपस्थित हो॥९॥

सत्यमित्था वृषेदसि वृषजूतिर्नोऽवृतः ।
वृषा ह्युग्र शृण्विषे परावति वृषो अर्वावति श्रुतः ॥१०॥

हे वीर इन्द्रदेव ! दूर और पास के देशों में सर्वत्र, शक्तिशाली रूप में आपकी ख्याति फैल रही है । हे इन्द्रदेव ! आप निश्चित ही बलशाली हैं। सोमयज्ञ करने वाले हम याजकों के आवाहन पर आकर आप हमारा संरक्षण करें॥१०॥

वृषणस्ते अभीशवो वृषा कशा हिरण्ययी ।
वृषा रथो मघवन्वृषणा हरी वृषा त्वं शतक्रतो ॥११॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! आपका स्वर्णिम चाबुक, रास, रथ तथा दोनों अश्व अत्यन्त बलशाली तथा सामर्थ्यवान् हैं । हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! आप भी अत्यन्त शक्ति-सम्पन्न हैं॥११॥

वृषा सोता सुनोतु ते वृषन्नृजीपिन्ना भर ।
वृषा दधन्वे वृषणं नदीष्वा तुभ्यं स्थातर्हरीणाम् ॥१२॥

सोम अभिषव करने वाले शक्तिशाली मनुष्य सोमरस निचोड़ें । हे सोमपान करने वाले इन्द्रदेव ! आप हमें प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करें । आपके निमित्त पानी में संस्कारित सोम को मिश्रित करने वाले सोमरस प्रस्तुत करते हैं॥१२॥

एन्द्र याहि पीतये मधु शविष्ठ सोम्यम् ।
नायमच्छा मघवा शृणवद्गिरो ब्रह्मोक्था च सुक्रतुः ॥१३॥

हे शक्ति-सम्पन्न इन्द्रदेव ! आप मधुर सोमरस को पीने हेतु पधारें । आप महान् कार्य करने वाले हैं। हमारे द्वारा उच्चारित ज्ञानयुक्त स्तोत्रों का आप भली प्रकार श्रवण करें॥१३॥

वहन्तु त्वा रथेष्ठामा हरयो रथयुजः ।
तिरश्चिदर्यं सवनानि वृत्रहन्नन्येषां या शतक्रतो ॥१४॥

वृत्र का संहार करने वाले हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! रथ में नियोजित आपके अश्व, दूसरों द्वारा सम्पन्न किये जाने वाले यज्ञों को छोड़कर हमारे इस श्रेष्ठ यज्ञ में आपको ले आएँ॥१४॥

अस्माकमद्यान्तमं स्तोमं धिष्व महामह ।
अस्माकं ते सवना सन्तु शंतमा मदाय द्युक्ष सोमपाः ॥१५॥

हे महान् इन्द्रदेव ! आप हमारे द्वारा की गई स्तुतियों को समीप पधारकर ग्रहण करें (सुनें ) । आप अत्यधिक सोमपान करने वाले हैं। आपको हर्षित करने के लिये सुखदायी सोमरस प्रस्तुत हैं॥१५॥

नहि षस्तव नो मम शास्त्रे अन्यस्य रण्यति ।
यो अस्मान्वीर आनयत् ॥१६॥

ओजस्वी इन्द्रदेव हमारे नायक हैं । वे हमारे, आपके या किसी अन्य के अधीन रहना पसन्द नहीं करते॥१६॥

इन्द्रश्चिद्घा तदब्रवीत्स्त्रिया अशास्यं मनः ।
उतो अह क्रतुं रघुम् ॥१७॥

इन्द्रदेव का भी कथन यहीं था कि स्त्रियों के मन पर अधिकार करना बड़ा ही दुष्कर कार्य है; क्योंकि उनका संकल्प अदम्य होता है॥१७॥

सप्ती चिद्घा मदच्युता मिथुना वहतो रथम् ।
एवेद्धूर्वृष्ण उत्तरा ॥१८॥

इन्द्रदेव के दो मतवाले अश्व उनके रथ में एक साथ नियोजित होकर उन्हें ले जाते हैं। उनके रथ की धुरी अति उत्तम है॥१८॥

अधः पश्यस्व मोपरि संतरां पादकौ हर ।
मा ते कशप्लकौ दृशन्स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ ॥१९॥

(शापवश स्त्री बने हुए प्रायोगि से इन्द्रदेव ने कहा) अब तुम नीचे की ओर दृष्टि रखो, ऊपर की ओर नहीं । पैरों को पास-पास रखकर (छोटे कदमों से) चलो। तुम्हारे दोनों अंग-मुख एवं पिण्डलियाँ दिखाई न दें (वस्त्र से ढकी रहें), तुम ज्ञानी होकर भी (शाप वश) स्त्री बने हो॥१९॥

## सूक्त ३४

ऋषि: १-१५ नीपातिथि काण्व, १६-१८ सहस्त्रं वसुरोचिषोऽगिरस
देवता – इन्द्र । छंद: अनुष्टुप। १६-१८ गायत्री

एन्द्र याहि हरिभिरुप कण्वस्य सुष्टुतिम् ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१॥

हे तेजस्वी इन्द्रदेव ! आप अश्वारूढ़ होकर कण्व ऋषि की श्रेष्ठ स्तुतियों के श्रवण हेतु पधारें । द्युलोक में शासन करने वाले आप (हमारा अभीष्ट साधन करके) पुनः वहीं के लिए प्रस्थान करें॥१॥

आ त्वा ग्रावा वदन्निह सोमी घोषेण यच्छतु ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! (इस यज्ञ में) सोम कूटने वाला पाषाण शब्द करते हुए आपको (सोम) प्रदान करे । द्युलोक में वास एवं शासन करने वाले है इन्द्रदेव ! पुन: आप अपने लोक को जाएँ॥२॥

अत्रा वि नेमिरेषामुरां न धूनुते वृकः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥३॥

यहाँ (यज्ञ में) यह (मावा पत्थर)सोमलता को (उसी प्रकार)कॅपाती हैं, जैसे भेड़िया भेड़ को । हे द्युलोक के वासी एवं शासक इन्द्रदेव ! आप देव लोक को प्रस्थान करें॥३॥

आ त्वा कण्वा इहावसे हवन्ते वाजसातये ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥४॥

दिव्यलोक में निवास करने वाले हे इन्द्रदेव ! हम कण्ववंशीय ऋषि अपनी सुरक्षा और अन्न प्राप्त करने के लिए आपको आहूत करते हैं। इसके बाद दिव्यलोक में शासन करने के निमित्त आप पुनः द्युलोक में जाएँ॥४॥

दधामि ते सुतानां वृष्णे न पूर्वपाय्यम् ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥५॥

हे दिव्यलोक में निवास करने वाले इन्द्रदेव ! जिस प्रकार वायु को सबसे पहले संस्कारित सोम प्रदान किया जाता है, उसी प्रकार हम

आपको सोमरस प्रदान करते हैं। आप द्युलोक के शासक हैं, इसलिये पुन: द्युलोक को प्रस्थान करें॥५॥

स्मत्पुरंधिर्न आ गहि विश्वतोधीर्न ऊतये ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥६॥

हे दिव्यलोक के वासी इन्द्रदेव ! आप हमारी बुद्धि के संरक्षण तथा यश-विस्तार के लिए पधारें । आप द्युलोक के शासक हैं, इसलिए पुन: द्युलोक में वापस जाएँ॥६॥

आ नो याहि महेमते सहस्रोते शतामघ ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥७॥

हे श्रेष्ठ बुद्धिवाले तथा धुलोक में निवास करने वाले इन्द्रदेव ! आप सहस्रों रक्षण-साधनों वाले और प्रचुर ऐश्वर्य वाले हैं। आप हमारे पास पधारें और द्युलोक के शासक होने के कारण पुनः द्युलोक में वापस जाएँ॥७॥

आ त्वा होता मनुर्हितो देवत्रा वक्षदीड्यः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥८॥

हे द्युलोकवासी इन्द्रदेव ! देवताओं द्वारा प्रशंसित और मनुष्यों के हितैषी अग्निदेव, आपको हमारे समीप ले आएँ। आप द्युलोक के शासक हैं, इसलिए पुन: द्युलोक में वापस जाएँ ॥८॥

आ त्वा मदच्युता हरी श्येनं पक्षेव वक्षतः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥९॥

हे द्युलोक वासी इन्द्रदेव ! जिस प्रकार बाज़ पक्षी के पंख उसको वहन करते हैं, उसी प्रकार आपके मतवाले घोड़े आपको वहन करके ले आएँ । हे इन्द्रदेव ! आप द्युलोक के शासक हैं, इसलिए आप पुन: द्युलोक में वापस जाएँ॥९॥

आ याह्यर्य आ परि स्वाहा सोमस्य पीतये ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! हमारे द्वारा प्रदान किये गये सोमरस को पीने के निमित्त आप पधारें । हे द्युलोकवासी इन्द्रदेव ! आप दिव्यलोक को नियन्त्रित करने वाले हैं, इसलिए आप पुनः वापस द्युलोक जाएँ॥१०॥

आ नो याह्युपश्रुत्युक्थेषु रणया इह ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥११॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारी स्तुतियों को श्रवण करके हमारे इस यज्ञ के समीप पधारें और हमें हर्षित करें । हे द्युलोक निवासी इन्द्रदेव ! आप द्युलोक को नियन्त्रित करने वाले हैं, इसलिए आप पुन: वापस द्युलोक जाएँ॥११॥

सरूपैरा सु नो गहि सम्भृतैः सम्भृताश्वः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! आपके घोड़े अत्यन्त बलवान् हैं। आप समान आकृति वाले अश्वों द्वारा हमारे समीप पधार । हे द्युलोक निवासी इन्द्रदेव ! आप द्युलोक को नियन्त्रित करने वाले हैं, इसलिए पुनः वापस द्युलोक जाएँ॥१२॥

आ याहि पर्वतेभ्यः समुद्रस्याधि विष्टपः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१३॥

हे इन्द्रदेव ! आप पर्वतों तथा आकाश से पधारें । हे द्युलोक निवासी इन्द्रदेव ! आप द्युलोक को नियन्त्रित करने वाले हैं, इसलिए पुनः द्युलोक वापस जाएँ॥१३॥

आ नो गव्यान्यश्व्या सहस्रा शूर दर्दृहि ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१४॥

हे पराक्रमी इन्द्रदेव ! आप हमें सहस्रों गौओं और अश्वों को प्रदान करें । हे द्युलोक निवासी इन्द्रदेव ! आप द्युलोक को नियन्त्रित करने वाले हैं, इसलिए पुनः द्युलोक वापस जाएँ॥१४॥

आ नः सहस्रशो भरायुतानि शतानि च ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१५॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें सैकड़ों-हजारों की संख्या में ऐश्वर्य प्रदान करें । हे द्युलोकवासी इन्द्रदेव ! आप द्युलोक को नियन्त्रित करने वाले हैं, इसलिए पुनः द्युलोक वापस जाएँ॥१५॥

आ यदिन्द्रश्च दद्वहे सहस्रं वसुरोचिषः ।
ओजिष्ठमश्व्यं पशुम् ॥१६॥

धनों से समृद्ध होकर हम और आप, इन्द्रदेव द्वारा प्रदान किये गये हजारों की संख्या में बलिष्ठ अश्व आदि पशुओं को ग्रहण करें॥१६॥

य ऋज्रा वातरंहसोऽरुषासो रघुष्यदः ।
भ्राजन्ते सूर्या इव ॥१७॥

वायु के सदृश गति वाले तथा आसानी से गमन करने वाले इन्द्रदेव के रथ में नियोजित घोड़े सूर्यदेव की तरह आलोकित हो रहे हैं॥१७॥

पारावतस्य रातिषु द्रवच्चक्रेष्वाशुषु ।
तिष्ठं वनस्य मध्य आ ॥१८॥

पारावत (तत्त्वज्ञ ऋषि) द्वारा प्रदत्त ऐश्वर्य तथा द्रुतगामी अश्वों से युक्त रथ में विराजमान होकर हम (तपो) वन के मध्य पहुँच गये (ऐसा वसुरोचिष् ने बार-बार कहा )॥१८॥

# सूक्त ३५

ऋषि: श्यावाश्व आत्रेय:
देवता – आश्विनौ। छंद: उपरिष्टज्ज्योति:। २२, २८ पंक्ति, २२ महावृहती

अग्निनेन्द्रेण वरुणेन विष्णुनादित्यै रुद्रैर्वसुभिः सचाभुवा ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं पिबतमश्विना ॥१॥

हे अश्विनीकुमारो ! इन्द्र, वरुण, अग्नि, विष्णु, आदित्यगण, वसु, रुद्र, उषा तथा सूर्यदेव के सहित आप दोनों सोमरस का पान करें॥१॥

विश्वाभिर्धीभिर्भुवनेन वाजिना दिवा पृथिव्याद्रिभिः सचाभुवा ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं पिबतमश्विना ॥२॥

हे शक्तिशाली अश्विनीकुमारो ! समस्त जीवधारियों, द्युलोक, भूलोक, उषा, सूर्य तथा श्रेष्ठ बुद्धि से सम्पन्न हाकर आप सोमरस का पान करें॥२॥

विश्वैर्देवैस्त्रिभिरेकादशैरिहाद्भिर्मरुद्भिर्भृगुभिः सचाभुवा ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं पिबतमश्विना ॥३॥

हे अश्विनीकुमारो ! सम्पूर्ण तैतीस देवताओं, भृगुआ, मरुतो, जल, उषा तथा सूर्यदेव के साथ मिलकर आप दोनों सोमरस का पान करें॥३॥

जुषेथां यज्ञं बोधतं हवस्य मे विश्वेह देवौ सवनाव गच्छतम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चेषं नो वोळ्हमश्विना ॥४॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों हमारी स्तुतियों पर ध्यान दें और हमारे यज्ञ का सेवन करें । आप दोनों, तीनों सवना के समय पधारे । उसके बाद आप देवी उषा और सूर्यदेव के साथ विराजमान होकर हमें अन्न प्रदान करें॥४॥

स्तोमं जुषेथां युवशेव कन्यनां विश्वेह देवौ सवनाव गच्छतम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चेषं नो वोळ्हमश्विना ॥५॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार युवतियों के स्वयंवर हेतु आने वाले आमन्त्रण को युवक स्वीकार करते हैं, उसी प्रकार हमारी स्तुतियों को आप स्वीकार करें । आप हमारे सम्पूर्ण (तीनों ) सवनों में पधारें और सूर्यदेव के साथ विराजमान होकर हमें अन्न प्रदान करें॥५॥

गिरो जुषेथामध्वरं जुषेथां विश्वेह देवौ सवनाव गच्छतम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चेषं नो वोव्ळ्हमश्विना ॥६॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप हमारे स्तुतिवचनों को ग्रहण करें और श्रेष्ठ यज्ञों का सेवन करें। आप दोनों, समस्त (तीनों) सवनों में यहाँ पधारे और प्रातः सूर्योदयकाल में हमें अन्न प्रदान करें॥६॥

हारिद्रवेव पतथो वनेदुप सोमं सुतं महिषेवाव गच्छथः ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना ॥७॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार प्यास से व्याकुल होकर पक्षी और पशु पानी के पास जाते हैं, उसी प्रकार तैयार किये हुए सोमरस के पास आप दोनों पधारें आप देवी उषा तथा सूर्यदेव के साथ हमारे यज्ञस्थल पर पधारें॥७॥

हंसाविव पतथो अध्वगाविव सोमं सुतं महिषेवाव गच्छथः ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना ॥८॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप हंस के सदृश तेज-सम्पन्न हैं। जिस प्रकार प्यास से व्याकुल होकर पथिक तथा पशु-पक्षी जल के पास जाते हैं, उसी प्रकार आप दोनों तैयार किये हुए सोमरस के पास पधारें। आप

उषाकाल तथा सूर्योदय के समय हमारे घर पर तीनों सवनों में पधारें॥८॥

श्येनाविव पतथो हव्यदातये सोमं सुतं महिषेवाव गच्छथः ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना ॥९॥

हे अश्विनीकुमारो ! अन्न प्रदान करने के लिए आप बाज़ पक्षी की तरह द्रुतगति से पधारें । जल के समीप जाते हुए प्यासे पशु-पक्षी के समान आप सोमरस पीने के लिए पधारें । आप उषाकाल और सूर्योदय के समय हमारे घर में तीनों बार पधारें॥९॥

पिबतं च तृप्णुतं चा च गच्छतं प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चोर्जं नो धत्तमश्विना ॥१०॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप सोमपान करके तृप्त हों और हमें संतान एवं ऐश्वर्य प्रदान करें । आप देवी उषा तथा सूर्यदेव के साथ विद्यमान रहकर हमें महान् सामर्थ्य प्रदान करें॥१०॥

जयतं च प्र स्तुतं च प्र चावतं प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चोर्जं नो धत्तमश्विना ॥११॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप रिपुओं पर विजय प्राप्त करें । हमारे द्वारा प्रशंसित होकर हमारी रक्षा करें । हमें संतान और ऐश्वर्य प्रदान करें । आप उषाकाल और सूर्योदय के समय विद्यमान होकर हमें सामर्थ्य प्रदान करें॥११॥

हतं च शत्रून्यततं च मित्रिणः प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चोर्जं नो धत्तमश्विना ॥१२॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप शत्रुओं का विनाश करें और हमसे मित्रता करके हमें सन्तति तथा ऐश्वर्य प्रदान करें । आप उषाकाल तथा सूर्योदय के समय विद्यमान रहकर हमें शक्ति प्रदान करें॥१२॥

मित्रावरुणवन्ता उत धर्मवन्ता मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चादित्यैर्यातमश्विना ॥१३॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप मित्र, वरुण तथा धर्मशील मरुतों के साथ स्तुति करने वालों के आवाहन को सुनकर पधारते हैं । आप देवी उषा, सूर्यदेव तथा अदिति पुत्रों के साथ विद्यमान रहकर गमन करें॥१३॥

अङ्गिरस्वन्ता उत विष्णुवन्ता मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चादित्यैर्यातमश्विना ॥१४॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप स्तोताओं के आवाहन को सुनकर विष्णु, मरुद्गण तथा अंगिरस के साथ पधारते हैं। आप देवी उषा, सूर्यदेव और अदिति पुत्रों के साथ विद्यमान रहकर प्रस्थान करें॥१४॥

ऋभुमन्ता वृषणा वाजवन्ता मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चादित्यैर्यातमश्विना ॥१५॥

अन्न से सामर्थ्यवान् हे अश्विनीकुमारो ! स्तोताओं के आवाहन को सुनकर आप ऋभुओं, आदित्यों तथा मरुतों के साथ पधारते हैं। आप देवी उषा तथा सूर्यदेव के साथ प्रस्थान करें॥१५॥

ब्रह्म जिन्वतमुत जिन्वतं धियो हतं रक्षांसि सेधतममीवाः ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं सुन्वतो अश्विना ॥१६॥

हे अश्विनीकुमारो !आप असुरों का संहार करें और रोग के कीटाणुओं को भगायें । आप मनुष्यों के ज्ञान और कर्म को नियन्त्रित रखें । आप देवी उषा और सूर्यदेव के साथ सोमयाग में पधारकर सोमरस का पान करें॥१६॥

क्षत्रं जिन्वतमुत जिन्वतं नृन्हतं रक्षांसि सेधतममीवाः ।

सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं सुन्वतो अश्विना ॥१७॥

हे अश्विनीकुमारो !आप असुरों का विनाश करें और रोगों के कीटाणुओं को नष्ट करके, योद्धाओं को तथा उनके पराक्रम को नियन्त्रित करें । आप देवी उषा तथा सूर्यदेव के साथ सोमयाग में पधारकर सोमपान करें॥१७॥

धेनूर्जिन्वतमुत जिन्वतं विशो हतं रक्षांसि सेधतममीवाः ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं सुन्वतो अश्विना ॥१८॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप असुरों का संहार करें और रोगों को नष्ट करके गौओं तथा सन्तानों को बलिष्ठ बनायें । आप दोनों, देवी उषा और सूर्यदेव के साथ पधारकर अभिषुत सोमरस का पान करें॥१८॥

अत्रेरिव शृणुतं पूर्व्यस्तुतिं श्यावाश्वस्य सुन्वतो मदच्युता ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चाश्विना तिरोअह्न्यम् ॥१९॥

रिपुओं के मद को चूर करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार आपने 'अत्रि की प्रार्थना को सुना था, उसी प्रकार सोम अभिषव करते हुए मुझ 'श्यावाश्व' ऋषि की प्रार्थना को सुनें । देवी उषा और सूर्यदेव के साथ आकर आप दोनों अभिषुत सोमरस का पान करें॥१९॥

सर्गाँ इव सृजतं सुष्टुतीरुप श्यावाश्वस्य सुन्वतो मदच्युता ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चाश्विना तिरोअह्न्यम् ॥२०॥

रिपुओं के घमण्डे को चूर करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! सोम अभिषव करते हुए मुझ 'श्यावाश्व' ऋषि की प्रार्थनाओं को निकट पधारकर स्वीकार करें। देवी उषा और सूर्यदेव के संग पधारकर आप दोनों अभिषुत सोमरस का पान करें॥२०॥

रश्मीँरिव यच्छतमध्वराँ उप श्यावाश्वस्य सुन्वतो मदच्युता ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चाश्विना तिरोअह्न्यम् ॥२१॥

रिपुओं के घमण्ड को नष्ट करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! सोम अभिषव करने वाले मुझ 'श्यावाश्व' श्रेष के यज्ञों में लगाम (नियंत्रक) की भाँति आयें। देवीं उषा और सूर्यदेव के साथ उपस्थित होकरआप दोनों अभिषुत सोमरस का पान करें॥२१॥

अर्वाग्रथं नि यच्छतं पिबतं सोम्यं मधु ।
आ यातमश्विना गतमवस्युर्वामहं हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे ॥२२॥

हे अश्विनीकुमारो ! अपनी सुरक्षा के निमित्त हम आपका आवाहन करते हैं, आप पधारें। आप अपने रथ को हमारे पास लायें और मधुर सोमरस का पान करके हमें रत्न प्रदान करें॥२२॥

नमोवाके प्रस्थिते अध्वरे नरा विवक्षणस्य पीतये ।
आ यातमश्विना गतमवस्युर्वामहं हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे ॥२३॥

हे अश्विनीकुमारो ! अपनी सुरक्षा के निमित्त हम आपको आहूत करते हैं, आप निश्चित रूप से पधारें । हमारे श्रेष्ठ यज्ञ में किये गये अभिवादन-पूजन को ग्रहण करके, सोमपान के निमित्त पधारें और मुझ दानी को रत्न-धन प्रदान करें॥२३॥

स्वाहाकृतस्य तृम्पतं सुतस्य देवावन्धसः ।
आ यातमश्विना गतमवस्युर्वामहं हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे ॥२४॥

हे अश्विनीकुमारो ! अपने संरक्षण के लिए हम आपको आहूत करते हैं। अत: आप निश्चित रूप से पधारें। हमारे द्वारा अभिषुत सोम की हवियों को ग्रहण करके संतुष्ट हों और हमें रत्न-धन प्रदान करें॥२४॥

# ऋग्वेद – अष्टम मंडल

## सूक्त ३६

ऋषि: श्यावाश्व आत्रेय:
देवता – इन्द्र । छंद: शक्वरी:, ७ महापंक्ति

अवितासि सुन्वतो वृक्तबर्हिषः पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यं ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः समप्सुजिन्मरुत्वाँ
इन्द्र सत्पते ॥१॥

हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! सोम अभिषुत करने वालों तथा कुश को आसन बिछाने वाले याजकों को आप संरक्षण प्रदान करते हैं । आप सत्पुरुषों को पालन करने वाले और समस्त रिपुओं को पराजित करने वाले हैं। देवताओं द्वारा निर्धारित किये गये सोम के अंश को आप मरुतों के साथ पान करके हर्षित हों॥१॥

प्राव स्तोतारं मघवन्नव त्वां पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यं ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः समप्सुजिन्मरुत्वाँ
इन्द्र सत्पते ॥२॥

हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! आप महान् वैभव से सम्पन्न हैं । आप स्तोताओं को संरक्षण प्रदान करें। आप समस्त रिप-सेनाओं पर विजय प्राप्त करने वाले तथा फैले हुए जल को नियन्त्रित करने वाले हैं। देवताओं द्वारा निर्धारित किये गये सोम के अंश को आप मरुतों के साथ मिलकर पान करें और हर्षित हों । यह सोमरस आपके लिए सुखकारक हो॥२॥

ऊर्जा देवाँ अवस्योजसा त्वां पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यं ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥३॥

हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! आप अपनी ओजस्विता और शक्ति के द्वारा देवताओं को संरक्षित करते हैं । आप समस्त रिपु सेनाओं को पराजित करने वाले तथा सर्वत्र फैले हुए जल को नियन्त्रित करने वाले हैं। हे इन्द्रदेव ! देवताओं द्वारा निर्धारित किये गये सोमरस के भाग को आप मरुतों के साथ मिलकर, हर्षित होने के लिए पान करें । यह सोम आपके लिए सुखकारक हो॥३॥

जनिता दिवो जनिता पृथिव्याः पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यं ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥४॥

हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! आप द्युु और भूलोक को उत्पन्न करने वाले हैं। आप समस्त रिपु सेनाओं को पराजित करने वाले और सर्वत्र फैले हुए जल (रस) को नियन्त्रित करने वाले हैं। देवताओं द्वारा निर्धारित किये गये सोमरस के भाग को आप मरुतों के साथ मिलकर पान करें और हर्षित हों । यह सोमरस आपके लिए सुखकारक हो॥४॥

जनिताश्वानां जनिता गवामसि पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यं ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः समप्सुजिन्मरुत्वाँ
इन्द्र सत्पते ॥५॥

हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! आप गौओं और अश्वों को उत्पन्न करने वाले हैं । आप समस्त रिपु सेनाओं को पराजिन करने वाले तथा सर्वत्र फैले हुए जल को नियन्त्रित करने वाले हैं। देवताओं द्वारा निर्धारित किये गये सोमरस के भाग को आप मरुतों के साथ मिलकर हर्षित होने के लिए पान करें॥५॥

अत्रीणां स्तोममद्रिवो महस्कृधि पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यं ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः समप्सुजिन्मरुत्वाँ
इन्द्र सत्पते ॥६॥

आयुधधारी शतक्रतो हे इन्द्रदेव ! आप 'अत्रि' वंशियों की स्तुतियों का श्रवण करें। आप रिओ की समग्र सेनाओं को परास्त करने वाले तथा सर्वत्र फैले हुए जल को नियन्त्रित करने वाले हैं। हे सत्पुरुषों के

पालक इन्द्रदेव ! देवताओं के द्वारा निर्धारित किये गये सोमरस के भाग को आय मरुतों के साथ मिलकर, हर्षित होने के लिए पान करें॥६॥

श्यावाश्वस्य सुन्वतस्तथा शृणु यथाशृणोरत्रेः कर्माणि कृण्वतः ।
प्र त्रसदस्युमाविथ त्वमेक इन्नृषाह्य इन्द्र ब्रह्माणि वर्धयन् ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार आपने यज्ञ कृत्य करने वाले 'अत्रि ऋषि की स्तुतियों का श्रवण किया था, उसी प्रकार सोम अभिषव करने वाले मुझ 'श्यावाश्व' ऋषि की स्तुतियों का भी श्रवण करें । हे इन्द्रदेव ! रणक्षेत्र में आपने ब्रह्मज्ञान को समृद्ध करते हुए 'त्रसदस्यु' को अकेले ही रक्षित किया॥७॥

# सूक्त ३७

ऋषि: श्यावाश्व आत्रेय:
देवता – इन्द्र । छंद: महापंक्ति, १ अतिजगती

प्रेदं ब्रह्म वृत्रतूर्येष्वाविथ प्र सुन्वतः शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
माध्यंदिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥१॥

बलों के स्वामी हे इन्द्रदेव ! आपने अपने समस्त रक्षण-साधनों के द्वारा इस स्तोता तथा सोम यज्ञ करने वाले याज़क को रक्षित किया। निन्दारहित, वज्रधारी तथा वृत्र का हनन करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप माध्यन्दिन सवन में पधारकर सोमपान करें॥१॥

सेहान उग्र पृतना अभि द्रुहः शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
माध्यंदिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥२॥

बलों के स्वामी तथा वज्रधारी हे इन्द्रदेव ! आप अत्यन्त वीर हैं और निन्दारहित होकर वृत्र को मारने वाले हैं। आप अपने समस्त रक्षण-

साधनों के द्वारा रिपु सेनाओं को परास्त करके, माध्यन्दिन सवन में पधार कर सोमरस का पान करें॥२॥

एकराळस्य भुवनस्य राजसि शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
माध्यंदिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥३॥

बलों के स्वामी तथा वज्रधारी हे इन्द्रदेव ! आप इस लोक के एकमात्र सम्राट् के रूप में अलंकृत होते हैं । निन्दारहित और वृत्र का विनाश करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप अपने समस्त रक्षण-साधनों से सम्पन्न होकर माध्यन्दिन सवन में पधारकर सोमरस का पान करें॥३॥

सस्थावाना यवयसि त्वमेक इच्छचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
माध्यंदिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥४॥

बलों के स्वामी और वज्र धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! भली प्रकार संगठित हुई रिपु-सेनाओं को आप अकेले ही तितर-बितर कर देते हैं। निन्दारहित और वृत्रहन्ता हे इन्द्रदेव ! आप अपने समस्त रक्षण-साधनों से सम्पन्न होकर, माध्यन्दिन सवन में पधारकर सोमरस का पान करें॥४॥

क्षेमस्य च प्रयुजश्च त्वमीशिषे शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
माध्यंदिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥५॥

बलों के स्वामी और वृत्र का हनन करने वाले हे इन्द्रदेव ! उपलब्ध होने वाले और न उपलब्ध होने वाले समस्त ऐश्वर्यों के आप स्वामी हैं । निन्दारहित और वज्रधारी हे इन्द्रदेव ! आप अपने समस्त रक्षण-साधनों से सम्पन्न होकर माध्यन्दिन सवन में पधारकर सोमरस का पान करें॥५॥

क्षत्राय त्वमवसि न त्वमाविथ शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
माध्यंदिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥६॥

बलों के स्वामी और वृत्र का हनन करने वाले हे इन्द्रदेव ! अपनी सामर्थ्य के द्वारा आप सम्पूर्ण विश्व को रक्षित करते हैं, स्वयं भी पूर्ण सुरक्षित हैं। निन्दारहित और वज्रधारी हे इन्द्रदेव ! आप अपने समस्त रक्षण- साधनों से सम्पन्न होकर माध्यन्दिन सवन में पधारकर सोमरस का पान करें॥६॥

श्यावाश्वस्य रेभतस्तथा शृणु यथाशृणोरत्रेः कर्माणि कृण्वतः ।
प्र त्रसदस्युमाविथ त्वमेक इन्नृषाह्य इन्द्र क्षत्राणि वर्धयन् ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार यज्ञ-अनुष्ठान करने वाले 'अत्रि ऋषि की स्तुतियों का आपने श्रवण किया था, उसी प्रकार स्मरण करने वाले 'श्यावाश्व' ऋषि की स्तुतियों का भी श्रवण करें । हे इन्द्रदेव ! आपने

रणक्षेत्र में क्षात्रधर्म को समृद्ध करते हुए 'त्रसदस्यु' को अकेले ही सुरक्षित किया था॥७॥

# सूक्त ३८

ऋषि: श्यावाश्व आत्रेय:
देवता – इन्द्राग्नि । छंद: गायत्री

यज्ञस्य हि स्थ ऋत्विजा सस्नी वाजेषु कर्मसु ।
इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥१॥

हे इन्द्राग्ने ! आप ही यज्ञ के ऋत्विज् हैं । आप हमारी अभिलाषा को समझें तथा पवित्र यज्ञीय कर्मों में पधारें ॥१॥

तोशासा रथयावाना वृत्रहणापराजिता ।
इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥२॥

हे इन्द्राग्नि देव ! शत्रुओं का हनन करने वाले, रथ से यात्रा करने वाले, घेरा डालने वाले, दुष्टों का संहार करने वाले और कभी परास्त न होने वाले, आप हमारी स्तुति को स्वीकार करें ॥२॥

इदं वां मदिरं मध्वधुक्षन्नद्रिभिर्नरः ।
इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥३॥

हे इन्द्राग्ने ! ऋत्विजों ने आपके लिए आनन्दप्रद, मधुर सोमरस तैयार किया है । इसके लिए हमारी प्रार्थना स्वीकार करें॥३॥

जुषेथां यज्ञमिष्टये सुतं सोमं सधस्तुती ।
इन्द्राग्नी आ गतं नरा ॥४॥

हे इन्द्राग्ने ! आपकी एक साथ प्रार्थना की जाती है। हमारी आकांक्षाओं को पूर्ण करने के निमित्त आप हमारे यज्ञ में पधारें और अभिषुत सोमरस का पान करें॥४॥

इमा जुषेथां सवना येभिर्हव्यान्यूहथुः ।
इन्द्राग्नी आ गतं नरा ॥५॥

हे इन्द्राग्ने ! जिस शक्ति से आप आहुतियों को ग्रहण करते हैं, हमारे इस यज्ञ में पधारकर, उसी शक्ति से इसका सेवन करें॥५॥

इमां गायत्रवर्तनिं जुषेथां सुष्टुतिं मम ।
इन्द्राग्नी आ गतं नरा ॥६॥

हे इन्द्राग्ने ! हमारी गायत्री छन्दसे बनी स्तुतियों का आप श्रवण करें और हमारे समीप पधारें॥६॥

प्रातर्यावभिरा गतं देवेभिर्जेन्यावसू ।
इन्द्राग्नी सोमपीतये ॥७॥

हे इन्द्राग्ने ! आप रिपुओं की सम्पत्ति पर विजय प्राप्त करते हैं । उषा काल के समय पधारने वाले देवताओं के साथ आप, सौमपान के निमित्त पधारें॥७॥

श्यावाश्वस्य सुन्वतोऽत्रीणां शृणुतं हवम् ।
इन्द्राग्नी सोमपीतये ॥८॥

हे इन्द्राग्ने ! आप सोम अभिषव करने वाले 'अत्रि' वंशीय ऋषियों और मुझ 'श्यावाश्व' ऋषि की प्रार्थना को सुने तथा सोमपान के निमित्त पधारें॥८॥

एवा वामह्व ऊतये यथाहुवन्त मेधिराः ।
इन्द्राग्नी सोमपीतये ॥९॥

हे इन्द्राग्ने ! जिस प्रकार आत्मज्ञानियों ने सोमपान के निमित्त आपको आहूत किया था, उसी प्रकार अपनी सुरक्षा के लिए हम आपका आवाहन करते हैं॥९॥

आहं सरस्वतीवतोरिन्द्राग्न्योरवो वृणे ।
याभ्यां गायत्रमृच्यते ॥१०॥

जिन इन्द्रदेव और अग्निदेव के लिए गायत्री छन्दवाले स्तोत्र उच्चारित किये जाते हैं, उनके द्वारा संरक्षित होने की हम सब कामना करते हैं॥१०॥

# सूक्त ३९

ऋषि: नाभाक: काण्व:
देवता – अग्नि । छंद: महापंक्ति

अग्निमस्तोष्यृग्मियमग्निमीळा यजध्यै ।
अग्निर्देवाँ अनक्तु न उभे हि विदथे कविरन्तश्चरति दूत्यं
नभन्तामन्यके समे ॥१॥

अपने यज्ञ के निमित्त हम ऋक्मन्त्रों द्वारा पूजने योग्य अग्निदेव की प्रार्थना करते हैं। हमारे द्वारा प्रदत्त आहुतियों से वे देवताओं को आलोकित करें । क्रान्तदर्शी अग्निदेव मनुष्य और देवों के मध्य में संदेशवाहक का कार्य करते हुए गमन करते हैं, जिसके कारण हमारे समस्त रिपु नष्ट हो जाते हैं॥१॥

न्यग्ने नव्यसा वचस्तनूषु शंसमेषाम् ।
न्यराती रराव्णां विश्वा अर्यो अरातीरितो युच्छन्त्वामुरो नभन्तामन्यके
समे ॥२॥

हे अग्ने ! हमारे शरीर में विद्यमान (रोग रूपी) रिपुओं को और हविप्रदाता के रिपुओं को आप अपने नवीन आयुधों द्वारा नष्ट करें । (साथ ही) समस्त मूढ़ और दुष्ट-दुराचारी शत्रुओं का विनाश करें॥२॥

अग्ने मन्मानि तुभ्यं कं घृतं न जुह्व आसनि ।
स देवेषु प्र चिकिद्धि त्वं ह्यसि पूर्व्यः शिवो दूतो विवस्वतो
नभन्तामन्यके समे ॥३॥

हे अग्ने ! हम आपके मुख में हर्ष प्रदायक घृत की आहुतियाँ प्रदान करते हुए मननीय स्तोत्रों का उच्चारण करते हैं, इन्हें ग्रहण करें। आप अत्यन्त प्राचीन, हितकारी, सम्पूर्ण ऐश्वर्यों के स्वामी तथा देवताओं के सन्देशवाहक हैं। आप हमारे सम्पूर्ण रिपुओं का विनाश करें॥३॥

तत्तदग्निर्वयो दधे यथायथा कृपण्यति ।
ऊर्जाहुतिर्वसूनां शं च योश्च मयो दधे विश्वस्यै देवहूत्यै नभन्तामन्यके
समे ॥४॥

स्तोतागण, जिस प्रकार के अन्न की इच्छा करते हैं, अग्निदेव उन्हें वैसा ही अन्न प्रदान करते हैं । स्तुतियों द्वारा बुलाये जाने वाले अग्निदेव, याजकों को हितकारी सुख और रोगनिरोधक क्षमता प्रदान करते हैं। यज्ञों में सभी देवों के साथ आवाहन किये जाने वाले अग्निदेव, हमारे रिपुओं का विनाश करें॥४॥

स चिकेत सहीयसाग्निश्चित्रेण कर्मणा ।
स होता शश्वतीनां दक्षिणाभिरभीवृत इनोति च प्रतीव्यं नभन्तामन्यके समे ॥५॥

अग्निदेव अपनी सामर्थ्य और कार्यों की विचित्रता से पहचाने जाते हैं। वे यज्ञों में विद्यमान रहने वाले और देवताओं का आवाहन करने वाले हैं । वे अपनी सम्पूर्ण शक्ति से सम्पन्न होकर चढ़ाई करने के निमित्त रिपुओं तक पहुँचते हैं और उनका विनाश करते हैं॥५॥

अग्निर्जाता देवानामग्निर्वेद मर्तानामपीच्यम् ।
अग्निः स द्रविणोदा अग्निर्द्वारा व्यूर्णुते स्वाहुतो नवीयसा
नभन्तामन्यके समे ॥६॥

वे अग्निदेव मनुष्य जीवन के रहस्यों और देवताओं के रहस्यों को जानते हैं । वे नवीन अन्नों की आहुतियों को ग्रहण करके समस्त ऐश्वर्यों को प्रदान करते हैं तथा सम्पूर्ण रिपुओं का विनाश करते हैं। वे बुलाये जाने के बाद सम्पूर्ण सम्पत्ति का द्वार खोल देते हैं॥६॥

अग्निर्देवेषु संवसुः स विक्षु यज्ञियास्वा ।
स मुदा काव्या पुरु विश्वं भूमेव पुष्यति देवो देवेषु यज्ञियो
नभन्तामन्यके समे ॥७॥

वे अग्निदेव देवताओं के बीच में वास करते हैं और यज्ञ-कृत्य करने वालों के बीच में यज्ञाग्नि के रूप में प्रकट होते हैं। जिस प्रकार पृथ्वी, जगत् को पोषण प्रदान करती है, उसी प्रकार अग्निदेव सम्पूर्ण कार्यों को पुष्ट करते हैं । वे महान् गुणों से सम्पन्न होने के कारण पूजनीय हैं। वे हमारे समस्त रिपुओं का संहार करें॥७॥

यो अग्निः सप्तमानुषः श्रितो विश्वेषु सिन्धुषु ।
तमागन्म त्रिपस्त्यं मन्धातुर्दस्युहन्तममग्निं यज्ञेषु पूर्व्यं नभन्तामन्यके समे ॥८॥

वे अग्निदेव सातों द्वीपों, सरिताओं और सभी मनुष्यों में व्याप्त रहते हैं। तीनों (द्यु, अन्तरिक्ष और पृथ्वी) स्थानों में विद्यमान रहने वाले अग्निदेव विद्वान् पुरुषों की रक्षा करते हैं । महान् तथा दुष्ट लोगों के संहारक अग्निदेव को हम यज्ञों में वरण करते हैं, क्योंकि वे हमारे सम्पूर्ण रिपुओं का विनाश करते हैं॥८॥

अग्निस्त्रीणि त्रिधातून्या क्षेति विदथा कविः ।
स त्रीँरेकादशाँ इह यक्षच्च पिप्रयच्च नो विप्रो दूतः परिष्कृतो नभन्तामन्यके समे ॥९॥

क्रान्तदर्शी अग्निदेव तीनों स्थानों ( पृथ्वी, अन्तरिक्ष और द्युलोक ) में निवास करते हैं। वे देवताओं के संदेशवाहक हैं । वे पवित्र होकर

देवताओं तक आहुतियाँ पहुँचाते हैं और हमें भी तुष्ट करते हैं। वे हमारे सम्पूर्ण रिपुओं का संहार करते हैं॥९॥

त्वं नो अग्न आयुषु त्वं देवेषु पूर्व्य वस्व एक इरज्यसि ।
त्वामापः परिस्रुतः परि यन्ति स्वसेतवो नभन्तामन्यके समे ॥१०॥

हे पुरातन अग्ने ! आप देवताओं में सर्वश्रेष्ठ हैं और मनुष्यों के स्वामी हैं । सर्वत्र प्रवाहित होने वाली जल धाराएँ आपकी तरफ गमन करती हैं। आप हमारे सम्पूर्ण रिपुओं का संहार करें॥१०॥

# सूक्त ४०

ऋषि: नाभाक: काण्व:
देवता – इन्द्राग्नि । छंद: महापंक्ति, २ शक्करी, १२ त्रिष्टुप

इन्द्राग्नी युवं सु नः सहन्ता दासथो रयिम् ।
येन दृळ्हा समत्स्वा वीळु चित्साहिषीमह्यग्निर्वनेव वात
इन्नभन्तामन्यके समे ॥१॥

हे इन्द्राग्ने ! आप हमें श्रेष्ठ सम्पत्ति प्रदान करें । जैसे अग्नि और वायु दोनों मिलकर वनों को भस्म कर देते हैं, उसी प्रकार हम उस सम्पत्ति के द्वारा बलिष्ठ रिपु-सेनाओं का विनाश करें॥१॥

नहि वां वव्रयामहेऽथेन्द्रमिद्यजामहे शविष्ठं नृणां नरम् ।
स नः कदा चिदर्वता गमदा वाजसातये गमदा मेधसातये
नभन्तामन्यके समे ॥२॥

नायकों में सर्वश्रेष्ठ, शक्तिशाली हे इन्द्राग्ने !हम, आप दोनों की उपेक्षा नहीं, उपासना करते हैं । आष अन्न आदि वैभव प्रदान करने के लिए

अपने अश्वों द्वारा हमारे यज्ञों में कब पधार रहे हैं? हमारे रिषु स्वयं नष्ट हो जाएँ॥२॥

ता हि मध्यं भराणामिन्द्राग्नी अधिक्षितः ।
ता उ कवित्वना कवी पृच्छ्यमाना सखीयते सं धीतमश्नुतं नरा
नभन्तामन्यके समे ॥३॥

हे श्रेष्ठ नायक इन्द्राग्ने ! आप अपनी विद्वत्ता के कारण सबके लिए वरणीय हैं । मित्रता के इच्छुक अपने भक्तों द्वारा किये गए कर्मों को आप स्वीकार करें। आप रणक्षेत्र के बीच में विद्यमान रहते हैं, जिससे हमारे अन्य रिपु अपने आप नष्ट हो जाते हैं॥३॥

अभ्यर्च नभाकवदिन्द्राग्नी यजसा गिरा ।
ययोर्विश्वमिदं जगदियं द्यौः पृथिवी मह्युपस्थे बिभृतो वसु
नभन्तामन्यके समे ॥४॥

उन दोनों (इन्द्राग्नि) में समस्त जगत् , धरती और आकाश विद्यमान हैं तथा वे ऐश्वर्य धारण करते हैं । हे याजको ! 'नाभाक' ऋषि के सदृश आप भी उन इन्द्राग्नि का यज्ञ और स्तोत्रों द्वारा पूजन करें। उनके प्रभाव से हमारे सभी शत्रु नष्ट हो जाएँ॥४॥

प्र ब्रह्माणि नभाकवदिन्द्राग्निभ्यामिरज्यत ।

या सप्तबुध्नमर्णवं जिह्मबारमपोर्णुत इन्द्र ईशान ओजसा
नभन्तामन्यके समे ॥५॥

साधकगण 'नाभाक' ऋषि के सदृश इन्द्र और अग्निदेव की स्तुति करते हैं। वे जल के सप्तमूल अर्थात् सप्त महासागरों को अपने बल से आच्छादित करने वाले तथा जल-धाराओं को प्रवाहित करने वाले हैं। वे इन्द्रदेव अपने ओज के द्वारा समस्त जगत् को नियन्त्रित करने वाले ईश्वर हैं। (उनकी कृपा से) सभी शत्रु नष्ट हों॥५॥

अपि वृश्च पुराणवद्व्रततेरिव गुष्पितमोजो दासस्य दम्भय ।
वयं तदस्य सम्भृतं वस्विन्द्रेण वि भजेमहि नभन्तामन्यके समे ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! प्राचीन काल की तरह आप रिपुओं को पौधों की अवाञ्छित टहनियों की भाँति काट दें। आप दस्युओं के ओज को विनष्ट करें । आपके सहयोग से असुरों द्वारा संगृहीत ऐश्वर्य हमको प्राप्त हो तथा हमारे अन्य रिपु अपने आप नष्ट हो जाएँ॥६॥

यदिन्द्राग्नी जना इमे विह्वयन्ते तना गिरा ।
अस्माकेभिर्नृभिर्वयं सासह्याम पृतन्यतो वनुयाम वनुष्यतो
नभन्तामन्यके समे ॥७॥

जो मनुष्य अपने धन और प्रार्थनाओं के द्वारा इन्द्राग्निदेव को आवाहित करते हैं, उनके साथ हम अपने पराक्रमी योद्धाओं की सहायता से रिपु-सेनाओं को पराजित करते हैं। जो व्यक्ति हमसे प्रेम करते हैं, हम भी उनके साथ प्रेमपूर्ण व्यवहार करें (और) हमारे अन्य रिपु विनष्ट हो जाएँ॥७॥

या नु श्वेतावावो दिव उच्चरात उप द्युभिः ।
इन्द्राग्न्योरनु व्रतमुहाना यन्ति सिन्धवो यान्त्सीं बन्धादमुञ्चतां
नभन्तामन्यके समे ॥८॥

वे इन्द्रदेव और अग्निदेव सतोगुण सम्पन्न हैं । वे अपने आलोक के द्वारा द्युलोक में सब जगह गमन करते हैं । उन्होंने सरिताओं को बन्धनमुक्त करके प्रवाहित किया। उनके कृत्यों के अनुसार याजकगण आचरण करते हैं । वे देव हमारे अन्य रिपुओं का विनाश करें॥८॥

पूर्वीष्ट इन्द्रोपमातयः पूर्वीरुत प्रशस्तयः सूनो हिन्वस्य हरिवः ।
वस्वो वीरस्यापृचो या नु साधन्त नो धियो नभन्तामन्यके समे ॥९॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! अपने वीरतापूर्ण कार्यों से प्रसन्न करने वाले योद्धाओं को आप ऐश्वर्य प्रदान करें। आपके अनेकों नाम और

अनेकों स्तोत्र हैं। उन स्तुतियों ने हमारी बुद्धि को श्रेष्ठ बनाया है, आप हमारे समस्त रिपुओं का संहार करें॥९॥

तं शिशीता सुवृक्तिभिस्त्वेषं सत्वानमृग्मियम् ।
उतो नु चिद्य ओजसा शुष्णस्याण्डानि भेदति जेषत्स्वर्वतीरपो
नभन्तामन्यके समे ॥१०॥

तेज-सम्पन्न इन्द्रदेव ने अपने ओज के द्वारा 'शुष्ण' नामक राक्षस के पुत्रों का संहार किया। उन्होंने ध्वनि करने वाली सरिताओं को नियन्त्रित किया । शक्तिशाली तथा मन्त्रों द्वारा प्रार्थनीय उन इन्द्रदेव को स्तुतियों द्वारा समृद्ध करें, जिससे वे समस्त रिपुओं का संहार करें॥१०॥

तं शिशीता स्वध्वरं सत्यं सत्वानमृत्वियम् ।
उतो नु चिद्य ओहत आण्डा शुष्णस्य भेदत्यजैः स्वर्वतीरपो
नभन्तामन्यके समे ॥११॥

हे स्तोताओं ! जो सर्वत्र गमन करते हैं और शुष्ण' नामक राक्षस के पुत्रों का संहार करते हैं तथा जो हर्ष प्रदायक जल-प्रवाहों को नियंत्रित करते हैं; उन श्रेष्ठ मार्गदर्शक, अविनाशी तथा प्रार्थनीय इन्द्रदेव को आप समृद्ध करें, जिससे वे समस्त रिपुओं का संहार कर सकें॥११॥

एवेन्द्राग्निभ्यां पितृवन्नवीयो मन्धातृवदङ्गिरस्वदवाचि ।
त्रिधातुना शर्मणा पातमस्मान्वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥१२॥

हमने अपने पिता 'मान्धाता' और 'अंगिरा' ऋषि के सदृश ही अग्नि और इन्द्रदेव के लिए अभिनव स्तुतियाँ की हैं । वे हमें तीन पर्वो वाला (तीन प्रकार सर्दी – गर्मी – बरसात से सुरक्षित) आवास प्रदान करें और हमें ऐश्वर्य सम्पन्न बनाएँ॥१२॥

# सूक्त ४१

ऋषि: नाभाक: काण्व:
देवता – वरुण:। छंद: महापंक्ति

अस्मा ऊ षु प्रभूतये वरुणाय मरुद्भ्योऽर्चा विदुष्टरेभ्यः ।
यो धीता मानुषाणां पश्वो गा इव रक्षति नभन्तामन्यके समे ॥१॥

हे स्तोताओ ! वरुणदेव, मनुष्यों के समस्त पशुओं को, गौओं के सदृश ही रक्षित करते हैं। ऐश्वर्यवान् वरुणदेव तथा ज्ञानी मरुद्गण की आप उपासना करें। वे हमारे समस्त रिपुओं का विनाश करें॥१॥

तमू षु समना गिरा पितॄणां च मन्मभिः ।
नाभाकस्य प्रशस्तिभिर्यः सिन्धूनामुपोदये सप्तस्वसा स मध्यमो
नभन्तामन्यके समे ॥२॥

हम अपने श्रेष्ठ स्तोत्रों से वरुणदेव की स्तुति करते हैं, पितरों की स्तुति करते हैं। 'नाभाक' षि के स्तोत्रों के द्वारा, सात सरिताओं से समृद्ध

सप्तमहासागरों की स्तुति करते हैं । वे हमारे समस्त रिपुओं का संहार करें॥२॥

स क्षपः परि षस्वजे न्युस्रो मायया दधे स विश्वं परि दर्शतः ।
तस्य वेनीरनु व्रतमुषस्तिस्रो अवर्धयन्नभन्तामन्यके समे ॥३॥

दर्शनीय और अत्यन्त त्यागी वरुणदेव अपने कर्म-कौशल के द्वारा समस्त संसार को विनिर्मित करते हैं। वे रात्रियों को मिलाकर रखते हैं। वृद्धि की कामना वाले व्यक्ति उन (वरुण देव) को तीनों उषाओं में संवर्धित करते हैं । वे हमारे समस्त रिपुओं का विनाश करें॥३॥

यः ककुभो निधारयः पृथिव्यामधि दर्शतः ।
स माता पूर्व्यं पदं तद्वरुणस्य सप्त्यं स हि गोपा इवेर्यो नभन्तामन्यके समे ॥४॥

जिन दर्शनीय वरुणदेव ने पृथ्वी पर समस्त दिशाओं की स्थापना की, वही सबके स्वामी भी हैं। उनका उच्च स्थान पहले से निर्धारित है । वे ग्वाले के समान सबकी सुरक्षा करते हैं। वे हमारे समस्त रिपुओं का विनाश करें॥४॥

यो धर्ता भुवनानां य उस्राणामपीच्या वेद नामानि गुह्या ।
स कविः काव्या पुरु रूपं द्यौरिव पुष्यति नभन्तामन्यके समे ॥५॥

वरुणदेव, समस्त लोकों को धारण करने वाले और किरणों के गुह्य नामों को जानने वाले हैं। वे ही द्युलोक के समान कवियों (दूरदर्शियों) के ज्ञान को पुष्ट करते हैं। वे हमारे समस्त रिपुओं का विनाश करें॥५॥

यस्मिन्विश्वानि काव्या चक्रे नाभिरिव श्रिता ।
त्रितं जूती सपर्यत व्रजे गावो न संयुजे युजे अश्वाँ अयुक्षत
नभन्तामन्यके समे ॥६॥

चक्र की नाभि के समान जिन वरुणदेव में समस्त सद्ज्ञान आश्रित हैं, तीनों भुवनों में व्याप्त होने वाले उन देव की सभी लोग प्रार्थना करें । जिस प्रकार गौएँ गोष्ठ में प्रवेश करती हैं, उसी प्रकार रिपुओं को पराजित करने के लिए रथों में घोड़ों को नियोजित करके वे रणक्षेत्र में जाते हैं । वे समस्त रिपुओं का विनाश करते हैं॥६॥

य आस्वत्क आशये विश्वा जातान्येषाम् ।
परि धामानि मर्मृशद्वरुणस्य पुरो गये विश्वे देवा अनु व्रतं
नभन्तामन्यके समे ॥७॥

जो वरुणदेव समस्त पदार्थों को छत्र के सदृश ढक कर रहते हैं, जो समस्त देवताओं के बल को समृद्ध करते हैं; सभी देवता उनके कृत्यों का अनुपालन करते हैं। वे हमारे समस्त रिपुओं का विनाश करें॥७॥

स समुद्रो अपीच्यस्तुरो द्यामिव रोहति नि यदासु यजुर्दधे ।
स माया अर्चिना पदास्तृणान्नाकमारुहन्नभन्तामन्यके समे ॥८॥

समुद्रों के स्वामी वरुणदेव, सूर्य की भाँति आकाश में आरूढ़ होकर सभी दिशाओं में कर्मरत होते हैं। वे सभी मनुष्यों को दान देते हैं। वे राक्षसों की माया को अपने दिव्य प्रकाश से नष्ट कर देते हैं। हमारे समस्त रिपु नष्ट हों॥८॥

यस्य श्वेता विचक्षणा तिस्रो भूमीरधिक्षितः ।
त्रिरुत्तराणि पप्रतुर्वरुणस्य ध्रुवं सदः स सप्तानामिरज्यति
नभन्तामन्यके समे ॥९॥

अन्तरिक्ष में विद्यमान रहने वाले जिन वरुणदेव ने अपने उज्ज्वल तेज के द्वारा तीनों लोकों का विस्तार किया, उनका स्थान अविचल है। वे (जल के) सातों (स्रोतों ) को नियंत्रित करते हैं। वे हमारे समस्त रिषुओं का विनाश करें॥९॥

यः श्वेताँ अधिनिर्णिजश्चक्रे कृष्णाँ अनु व्रता ।

स धाम पूर्व्यं ममे यः स्कम्भेन वि रोदसी अजो न द्यामधारयन्नभन्तामन्यके समे ॥१०॥

जिन वरुणदेव ने अपने व्रत के अनुसार अपनी किरणों को दिन में सफेद और रात में काली बनाया तथा जिनने अन्तरिक्ष और पृथ्वीलोक को उसी प्रकार धारण किया, जैसे आदित्य द्युलोक को धारण करते हैं, वे हमारे समस्त रिपुओं का विनाश करें॥१०॥

# सूक्त ४२

ऋषि: नाभाक: काण्व: अर्चनाना आत्रेयो।
देवता – १-३ वरुण:, ४-६ आश्विनौ। छंद: १-३ त्रिष्टुप, ४-६ अनुष्टुप

अस्तभ्नाद्द्यामसुरो विश्ववेदा अमिमीत वरिमाणं पृथिव्याः ।
आसीदद्विश्वा भुवनानि सम्राड्विश्वेत्तानि वरुणस्य व्रतानि ॥१॥

वरुणदेव सर्वज्ञाता और बलवान हैं, उन्होंने द्युलोक को स्थापित किया तथा पृथ्वी को विस्तार दिया है । उन्होंने समस्त लोकों को नियंत्रित किया है । ये समस्त पुरुषार्थ वरुणदेव के ही हैं॥१॥

एवा वन्दस्व वरुणं बृहन्तं नमस्या धीरममृतस्य गोपाम् ।
स नः शर्म त्रिवरूथं वि यंसत्पातं नो द्यावापृथिवी उपस्थे ॥२॥

हे स्तोताओ ! आप उन श्रेष्ठ वरुणदेव की वंदना करें । जो अमृत को सुरक्षित करने वाले और धैर्य धारण करने वाले हैं। आप उनको नमन करें । वे हमें तीन खण्डों वाला सुरक्षित आवास प्रदान करें । आकाश

तथा पृथ्वी पर हमारा संरक्षण करें। हम उनकी गोद में निश्चिन्त होकर रहते हैं॥२॥

इमां धियं शिक्षमाणस्य देव क्रतुं दक्षं वरुण सं शिशाधि ।
ययाति विश्वा दुरिता तरेम सुतर्माणमधि नावं रुहेम ॥३॥

हे वरुणदेव ! यज्ञ(परमार्थ) करने वाली हमारी बुद्धि को आप श्रेष्ठ दिशा प्रदान करें । आप हमारी कर्मशीलता और बौद्धिक क्षमता को बढ़ाएँ । जिसके सहयोग से हम समस्त विपत्तियों को पार कर जाएँ और सुगमता से पार लगाने वाली नाव को बढ़ाएँ॥३॥

आ वां ग्रावाणो अश्विना धीभिर्विप्रा अचुच्यवुः ।
नासत्या सोमपीतये नभन्तामन्यके समे ॥४॥

सत्य के पालक हे अश्विनीकुमारो ! विद्वान् पुरुष आप दोनों के निमित्त पाषाणों से पीसकर तैयार किया गया सोमरस प्रस्तुत करते हैं, जिससे आपकी अनुकम्पा प्राप्त करके, वे अपने समस्त रिपुओं का विनाश करने में सफल हो सकें॥४॥

यथा वामत्रिरश्विना गीर्भिर्विप्रो अजोहवीत् ।
नासत्या सोमपीतये नभन्तामन्यके समे ॥५॥

सत्य के पालक हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार 'अत्रि ऋषि ने अपनी स्तुतियों के द्वारा, सोमरस पान करने के लिए आपको आवाहित किया था, उसी प्रकार हम भी आपका आवाहन करते हैं। आप हमारे समस्त रिपुओं का विनाश करें॥५॥

एवा वामह्व ऊतये यथाहुवन्त मेधिराः ।
नासत्या सोमपीतये नभन्तामन्यके समे ॥६॥

सत्य के पालक हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार विद्वान् पुरुषों ने सोमपान के निमित्त आपकी आवाहन किया था, उसी प्रकार अपने संरक्षण के लिए हम भी आपका आवाहन करते हैं । आप हमारे समस्त रिपुओं का संहार करें॥६॥

# सूक्त ४३

ऋषि: विरूप अंगिरस
देवता – अग्नि:। छंद: गायत्री

इमे विप्रस्य वेधसोऽग्नेरस्तृतयज्वनः ।
गिरः स्तोमास ईरते ॥१॥

मेधावी अग्निदेव ही समस्त संसार को बनाने वाले हैं। वे अपने याजकों को कभी भी नष्ट नहीं होने देते । हम स्तोतागण ऐसे अग्निदेव की उपासना करते हैं॥१॥

अस्मै ते प्रतिहर्यते जातवेदो विचर्षणे ।
अग्ने जनामि सुष्टुतिम् ॥२॥

समस्त पदार्थों के ज्ञाता और सबको प्रकाशित करने वाले हे अग्ने ! आप से अनुदान की कामना करने वाले, हम याजकगण आपके निमित्त स्तोत्र पाठ करते हैं॥२॥

आरोका इव घेदह तिग्मा अग्ने तव त्विषः ।
दद्भिर्वनानि बप्सति ॥३॥

हे अग्ने ! जिस प्रकार प्रकाश अंधकार को खा जाता है, उसी प्रकार आप की तेजस्वी लपटें वनों (काष्ठादि) को खा जाती हैं॥३॥

हरयो धूमकेतवो वातजूता उप द्यवि ।
यतन्ते वृथगग्नयः ॥४॥

धूम्र रूप ध्वजा से पहचाने जाने वाले अग्निदेव रसों का हरण करते हैं। वायु के द्वारा प्रेरित होकर एक स्थान से दूसरे स्थान तक पहुँचने वाले अग्निदेव आकाश में पृथक्-पृथक् रूपों से विचरण करते हैं॥४॥

एते त्ये वृथगग्नय इद्धासः समदृक्षत ।
उषसामिव केतवः ॥५॥

अग्निदेव अलग-अलग जलकर प्रातःकाल उषा की लाली रूपी पताका के सदृश देखने योग्य हो जाते हैं॥५॥

कृष्णा रजांसि पत्सुतः प्रयाणे जातवेदसः ।
अग्निर्यद्रोधति क्षमि ॥६॥

संसार के समस्त पदार्थों के ज्ञाता अग्निदेव धरती पर प्रकट होकर जब वापस होते हैं, उस समय रज-कण काले रंग के हो जाते हैं॥६॥

धासिं कृण्वान ओषधीर्बप्सदग्निर्न वायति ।
पुनर्यन्तरुणीरपि ॥७॥

वे अग्निदेव अनेक प्रकार की ओषधियों को अन्न समझकर खाते हैं, फिर भी वे तुष्ट नहीं होते। वे सदैव युवा बने रहकर ओषधियों में विद्यमान रहते हैं॥७॥

जिह्वाभिरह नन्नमदर्चिषा जञ्जणाभवन् ।
अग्निर्वनेषु रोचते ॥८॥

वे अग्निदेव पेड़पौधों को अपनी जिह्वा के द्वारा चाटते हुए (जलाते हुए) अपने आत्मतेज से अत्यन्त आलोकन होते हैं और वनों में सुशोभित होते हैं॥८॥

अप्स्वग्ने सधिष्टव सौषधीरनु रुध्यसे ।
गर्भे सञ्जायसे पुनः ॥९॥

हे अग्ने ! आप जल में प्रविष्ट होते हैं और ओषधियों को स्थिरता प्रदान करते हुए उन्हीं के बीच से उत्पन्न होते हैं॥९॥

उदग्ने तव तद्घृतादर्ची रोचत आहुतम् ।
निंसानं जुह्वो मुखे ॥१०॥

हे अग्ने ! आपकी लपटें घृत के रूप में आहुति ग्रहण करती हैं । घों से भरे हुए चम्मच को मुख से चाटकर वे सुशोभित होती हैं॥१०॥

उक्षान्नाय वशान्नाय सोमपृष्ठाय वेधसे ।
स्तोमैर्विधेमाग्नये ॥११॥

जिनका अन्न ग्रहण करने योग्य और आहुति भक्षण करने योग्य है, उन सोम पीठ वाले अग्निदेव का महान् स्तोत्रों के द्वारा हम पूजन करते हैं॥११॥

उत त्वा नमसा वयं होतर्वरेण्यक्रतो ।
अग्ने समिद्भिरीमहे ॥१२॥

देवताओं का आवाहन करने वाले महान् ज्ञानी हे अग्ने ! हम विनम्रतापूर्वक समिधाओं को प्रचलित कर आपकी प्रार्थना करते हैं॥१२॥

उत त्वा भृगुवच्छुचे मनुष्वदग्न आहुत ।
अङ्गिरस्वद्धवामहे ॥१३॥

पवित्र और आवाहन किये जाने योग्य हे अग्ने ! जिस प्रकार 'भग' और 'मनु' ने आपका आवाहन किया था, उसी प्रकार हम भी आपका आवाहन करते हैं॥१३॥

त्वं ह्यग्ने अग्निना विप्रो विप्रेण सन्त्सता ।
सखा सख्या समिध्यसे ॥१४॥

हे अग्ने ! आप सखा, सज्जन तथा विद्वान् हैं । आप समान गुणों वाली अग्नियो के द्वारा प्रकट या सुशोभित होते हैं॥१४॥

स त्वं विप्राय दाशुषे रयिं देहि सहस्रिणम् ।
अग्ने वीरवतीमिषम् ॥१५॥

हे अग्ने ! आप आहुति प्रदान करने वाले ज्ञानी पुरुषों को हजारों प्रकार का धन-धान्य और सन्तान आदि से युक्त वैभव प्रदान करें॥१५॥

अग्ने भ्रातः सहस्कृत रोहिदश्व शुचिव्रत ।
इमं स्तोमं जुषस्व मे ॥१६॥

भाई के समान प्रेम करने वाले, शक्तिशाली, तेज-सम्पन्न, लपटों वाले तथा पवित्र व्रतो को धारण करने वाले हे अग्ने ! आप हमारी स्तुतियों को स्नेहपूर्वक ग्रहण करें॥१६॥

उत त्वाग्ने मम स्तुतो वाश्राय प्रतिहर्यते ।
गोष्ठं गाव इवाशत ॥१७॥

हे अग्ने ! जिस प्रकार गौएँ आवाज करते हुए बछड़े की ओर जाती हैं, उसी प्रकार हमारी स्तुतियाँ आपकी ओर गमन करती हैं॥१७॥

तुभ्यं ता अङ्गिरस्तम विश्वाः सुक्षितयः पृथक् ।
अग्ने कामाय येमिरे ॥१८॥

हे आने ! आप अंगिराओं में सर्वश्रेष्ठ । अपनी कामनाओं को प्राप्त करने के लिए समन प्रजाएं आपका उपासना करती हैं॥१८॥

अग्निं धीभिर्मनीषिणो मेधिरासो विपश्चितः ।
अद्मसद्याय हिन्विरे ॥१९॥

अपने मन को श्रेष्ठ दिशा में चलाने वाले विद्वान् और ज्ञानी पुरुष अपने श्रेष्ठ कर्मों के द्वारा प्रत्येक घर में विद्यमान रहने वाले, अग्निदेव को प्रदीप्त करते हैं॥१९॥

तं त्वामज्मेषु वाजिनं तन्वाना अग्ने अध्वरम् ।
वह्निं होतारमीळते ॥२०॥

हे अग्निदेव ! आप अत्यन्त शक्तिशाली, हवियों को वहन करने वाले तथा देवताओं को बुलाने वाले हैं। याजक, अपने घरों में यज्ञ सम्पन्न करते हुए आपकी प्रार्थना करते हैं॥२०॥

पुरुत्रा हि सदृङ्ङसि विशो विश्वा अनु प्रभुः ।
समत्सु त्वा हवामहे ॥२१॥

हे अग्निदेव ! आप सर्वत्र विराजमान रहने वाले तथा समस्त प्राणियों को समान दृष्टि से देखने वाले सबके स्वामी हैं। इसलिए हम लोग युद्ध में आपका आवाहन करते हैं॥२१॥

तमीळिष्व य आहुतोऽग्निर्विभ्राजते घृतैः ।
इमं नः शृणवद्धवम् ॥२२॥

अग्निदेव घृत की हवियों से प्रज्वलित होते हैं । हे याजको ! आप उन अग्निदेव की ही प्रार्थना करें ; क्योंकि वे ही हमारी प्रार्थनाओं को सुनते हैं॥२२॥

तं त्वा वयं हवामहे शृण्वन्तं जातवेदसम् ।
अग्ने घ्नन्तमप द्विषः ॥२३॥

हे अग्निदेव ! आप समस्त पदार्थों को जानने वाले, हमारी स्तुतियों को सुनने वाले तथा सम्पूर्ण रिपुओं का संहार करने वाले हैं । हम आपका आवाहन करते हैं॥२३॥

विशां राजानमद्भुतमध्यक्षं धर्मणामिमम् ।
अग्निमीळे स उ श्रवत् ॥२४॥

वे अग्निदेव श्रेष्ठ कार्यों के स्वामी और समस्त मनुष्यों के सम्राट् हैं । हम उनकी प्रार्थना करते हैं॥२४॥

अग्निं विश्वायुवेपसं मर्यं न वाजिनं हितम् ।
सप्तिं न वाजयामसि ॥२५॥

वे अग्निदेव समस्त मनुष्यों को चलाने वाले एवं शक्तिशाली मनुष्यों के समान सबके लिए कल्याणकारी हैं । वे अश्व की भाँति द्रुतगामी हैं। अपनी आहुतियों के द्वारा हम उन्हें शक्तिशाली बनाते हैं॥२५॥

घ्नन्मृध्राण्यप द्विषो दहन्रक्षांसि विश्वहा ।
अग्ने तिग्मेन दीदिहि ॥२६॥

हे अग्निदेव ! हिंसा करने वालों, ईर्ष्या करने वालों तथा बाधा पहुँचाने वाले असुरों को जलाते हुए आप सदैव तीव्र आलोक से प्रकाशित हों॥२६॥

यं त्वा जनास इन्धते मनुष्वदङ्गिरस्तम ।
अग्ने स बोधि मे वचः ॥२७॥

हे अग्निदेव ! आप अंगिराओं में सर्वश्रेष्ठ । जिस प्रकार आपको 'मनु' ने प्रज्वलित किया था, उसी प्रकार ये मनुष्य भी करते हैं। आप हमारी प्रार्थनाओं को भी उन्हीं की भाँति समझें॥२७॥

यदग्ने दिविजा अस्यप्सुजा वा सहस्कृत ।
तं त्वा गीर्भिर्हवामहे ॥२८॥

हे अग्निदेव ! आप आकाश से पैदा हुए (आदित्य रूप) हैं अथवा जल में पैदा हुए (बिजली रूप) हैं अथवा बल से पैदा हुए (भौतिक अग्नि के रूप में) हैं। हम आपका अपनी स्तुतियों द्वारा आवाहन करते हैं॥२८॥

तुभ्यं घेत्ते जना इमे विश्वाः सुक्षितयः पृथक् ।
धासिं हिन्वन्त्यत्तवे ॥२९॥

हे अग्निदेव ! सभी साधकगण तथा समस्त प्रजाएँ आपके भक्षण के लिए पृथक्-पृथक् हविष्यान्न प्रदान करती हैं॥२९॥

ते घेदग्ने स्वाध्योऽहा विश्वा नृचक्षसः ।
तरन्तः स्याम दुर्गहा ॥३०॥

हे अग्निदेव ! आपके अनुग्रह से सत्कर्म करने वाले तथा सदैव श्रेष्ठ पदार्थों को देखने वाले होकर हम समस्त विपत्तियों को पार कर जायेंगे॥३०॥

अग्निं मन्द्रं पुरुप्रियं शीरं पावकशोचिषम् ।
हृद्भिर्मन्द्रेभिरीमहे ॥३१॥

वे अग्निदेव पवित्र आलोक फैलाने वाले, अनेकों के प्रिय तथा यज्ञों द्वारा अत्यन्त तेज-सम्पन्न हैं। हम प्रसन्नता प्रदान करने वाली स्तुतियों से उन्हें आनन्दित करते हैं॥३१॥

स त्वमग्ने विभावसुः सृजन्त्सूर्यो न रश्मिभिः ।
शर्धन्तमांसि जिघ्नसे ॥३२॥

हे अग्निदेव ! आप उत्पन्न होकर सूर्यदेव की तरह शक्ति का संवर्धन तथा अंधकार का नाश कर देते हैं॥३२॥

तत्ते सहस्व ईमहे दात्रं यन्नोपदस्यति ।
त्वदग्ने वार्यं वसु ॥३३॥

हे अग्निदेव ! आपका ग्रहण करने योग्य तथा दान करने योग्य ऐश्वर्य सदैव अविनाशी बना रहता है। हम आपसे उसी ऐश्वर्य की याचना करते हैं॥३३॥

# सूक्त ४४

ऋषि: विरूप अंगिरस
देवता – अग्नि:। छंद: गायत्री

समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम् ।
आस्मिन्हव्या जुहोतन ॥१॥

हे ऋत्विजो ! अतिथि के सदृश अग्निदेव की समिधाओं के द्वारा सेवा करें । घृत के रूप में इन्हें श्रेष्ठ आहुतियाँ समर्पित करें॥१॥

अग्ने स्तोमं जुषस्व मे वर्धस्वानेन मन्मना ।
प्रति सूक्तानि हर्य नः ॥२॥

हे अग्ने ! आप हमारे मननीय स्तोत्रों को स्वीकार करें और समृद्धि को प्राप्त करें। आप हमारे स्तोत्रों की कामना करें॥२॥

अग्निं दूतं पुरो दधे हव्यवाहमुप ब्रुवे ।

देवाँ आ सादयादिह ॥३॥

देवताओं के संदेशवाहक के रूप में आहुतियों को उनके पास तक पहुँचाने वाले अग्निदेव की हम स्थापना करते हैं और उनकी प्रार्थना करते हैं। वे इस यज्ञ मण्डप में देवगणों को आहूत करें॥३॥

उत्ते बृहन्तो अर्चयः समिधानस्य दीदिवः ।
अग्ने शुक्रास ईरते ॥४॥

हे तेजस्वी अग्निदेव ! भली प्रकार प्रदीप्त, महानता को प्रेरित करने वाली आपकी लपटें वृद्धि को प्राप्त करती हैं॥४॥

उप त्वा जुह्वो मम घृताचीर्यन्तु हर्यत ।
अग्ने हव्या जुषस्व नः ॥५॥

पूजायोग्य हे अग्निदेव ! घृत ( हवि) से परिपूर्ण पात्र आपको प्राप्त हों । आप हमारी आहुतियों को स्वीकार करें॥५॥

मन्द्रं होतारमृत्विजं चित्रभानुं विभावसुम् ।
अग्निमीळे स उ श्रवत् ॥६॥

आनन्द प्रदायक देवताओं का आवाहन करने वाले, ऋतु के अनुकूल यज्ञ करने वाले, तेजस्विता से युक्त, प्रकाशमान अग्निदेव की हम स्तुति करते हैं॥६॥

प्रत्नं होतारमीड्यं जुष्टमग्निं कविक्रतुम् ।
अध्वराणामभिश्रियम् ॥७॥

देवताओं को आहृत करने वाले, स्तुति के योग्य, परिचर्या करने योग्य, अत्यन्त विद्वान् तथा यज्ञों को अलंकृत करने वाले उन प्राचीन अग्निदेव की हम प्रार्थना करते हैं॥७॥

जुषाणो अङ्गिरस्तमेमा हव्यान्यानुषक् ।
अग्ने यज्ञं नय ऋतुथा ॥८॥

हे अग्निदेव ! आप 'अंगिरा' वंशियों में सबसे श्रेष्ठ । हमारे यज्ञों को सम्पादित करते हुए समयानुसार आहुतियों का सेवन करें॥८॥

समिधान उ सन्त्य शुक्रशोच इहा वह ।
चिकित्वान्दैव्यं जनम् ॥९॥

हे अग्निदेव ! आप पूजने योग्य और पवित्र तेज वाले हैं। आप सर्वज्ञाता तथा दर्शनीय आलोक वाले हैं। आप देवजनों को हमारे इस यज्ञ में ले आयें॥९॥

विप्रं होतारमद्रुहं धूमकेतुं विभावसुम् ।
यज्ञानां केतुमीमहे ॥१०॥

ज्ञानसम्पन्न, देवताओं को यज्ञ में आहूत करने वाले, धूम्र रूप पताका वाले, अत्यन्त तेज-सम्पन्न, विद्रोह न करने वाले तथा यज्ञों के ध्वज रूप अग्निदेव की हम स्तुति करते हैं॥१०॥

अग्ने नि पाहि नस्त्वं प्रति ष्म देव रीषतः ।
भिन्धि द्वेषः सहस्कृत ॥११॥

हे शक्तिसम्पन्न, तेजस्वी अग्निदेव ! आप हम याजकों की, हिंसक रिपुओं से सुरक्षा करें और हमसे ईर्ष्या करने वालों को नष्ट करें॥११॥

अग्निः प्रत्नेन मन्मना शुम्भानस्तन्वं स्वाम् ।
कविर्विप्रेण वावृधे ॥१२॥

अपने तेजस्वी स्वरूप में सुशोभित होने वाले मेधावी अग्निदेव को ऋत्विज्ञों द्वारा पुरातन स्तोत्रों से प्रज्वलित किया जाता है॥१२॥

ऊर्जो नपातमा हुवेऽग्निं पावकशोचिषम् ।
अस्मिन्यज्ञे स्वध्वरे ॥१३॥

ऊर्जा को नीचे न गिरने देने वाले, पवित्र बनाने वाले, दीप्तिमान् अग्निदेव का इस उत्तम यज्ञ में हम आवाहन करते हैं॥१३॥

स नो मित्रमहस्त्वमग्ने शुक्रेण शोचिषा ।
देवैरा सत्सि बर्हिषि ॥१४॥

पूज्य, मित्र तुल्य हे अग्निदेव ! आप शुभ्र ज्वालाओं और तेज से पूर्ण होकर देवों के साथ इस यज्ञ में प्रतिष्ठित हों॥१४॥

यो अग्निं तन्वो दमे देवं मर्तः सपर्यति ।
तस्मा इद्दीदयद्वसु ॥१५॥

ऐश्वर्य की अभिलाषा करने वाले जो व्यक्ति अपने घरों में अग्निदेव की अभ्यर्थना करते हैं, उन्हीं को वे ऐश्वर्य प्रदान करते हैं॥१५॥

अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम् ।
अपां रेतांसि जिन्वति ॥१६॥

देवताओं में सर्वश्रेष्ठ, आकाश के उन्नत स्थान पर प्रतिष्ठित रहने वाले, पृथ्वी के स्वामी ये अग्निदेव (जल) में ओज स्थापित करते हैं॥१६॥

उदग्ने शुचयस्तव शुक्रा भ्राजन्त ईरते ।
तव ज्योतींष्यर्चयः ॥१७॥

हे अग्ने ! स्वच्छ, उज्ज्वल और प्रकाशित ज्योतियाँ आपके तेज को प्रवाहित करती रहती हैं॥१७॥

ईशिषे वार्यस्य हि दात्रस्याग्ने स्वर्पतिः ।
स्तोता स्यां तव शर्मणि ॥१८॥

हे अग्ने ! आप स्वर्ग लोक के स्वामी, वरण करने योग्य और दान देने योग्य धन के अधिष्ठाता हैं। आपके द्वारा प्रदत्त सुख भोगते हुए हम सदा आपके प्रशंसक बने रहें॥१८॥

त्वामग्ने मनीषिणस्त्वां हिन्वन्ति चित्तिभिः ।
त्वां वर्धन्तु नो गिरः ॥१९॥

हे अग्निदेव ! मनीषीगण आपकी प्रार्थना करते हुए अपने श्रेष्ठ कर्मों से आपको हर्षित करते हैं। हमारी प्रार्थनाएँ आपको समृद्ध करें॥१९॥

अदब्धस्य स्वधावतो दूतस्य रेभतः सदा ।
अग्नेः सख्यं वृणीमहे ॥२०॥

हे अग्निदेव ! आप अविनाशी और सामर्थ्यवान् हैं। आप देवताओं के संदेशवाहक तथा ज्ञान के उपदेशक हैं। हम आपको मित्रता को अंगीकार करते हैं॥२०॥

अग्निः शुचिव्रततमः शुचिर्विप्रः शुचिः कविः ।
शुची रोचत आहुतः ॥२१॥

हे अग्निदेव ! आप पवित्र ज्ञानी, अत्यन्त शुभ कर्म करने वाले तथा क्रांतदर्शी हैं । आप पवित्रतापूर्वक प्रदान की हुई आहुतियों द्वारा अलंकृत होते हैं॥२१॥

उत त्वा धीतयो मम गिरो वर्धन्तु विश्वहा ।
अग्ने सख्यस्य बोधि नः ॥२२॥

हे अग्निदेव ! हमारे सत्कर्म और हमारी स्तुतियाँ आपको समृद्ध करें । आप हमारे सख्यभाव को समझें॥२२॥

यदग्ने स्यामहं त्वं त्वं वा घा स्या अहम् ।

स्युष्टे सत्या इहाशिषः ॥२३॥

हे अग्निदेव ! हम आपको समर्पित होकर आपके बन जाएँ और आप हमारे बन जाएँ। आपके आशीष हमारे जीवन में सत्य सिद्ध हों॥२३॥

वसुर्वसुपतिर्हि कमस्यग्ने विभावसुः ।
स्याम ते सुमतावपि ॥२४॥

हे अग्निदेव ! आप आलोक-सम्पन्न, सबका पालन करने वाले और सम्पूर्ण ऐश्वर्यों के स्वामी हैं। हम आपकी इच्छा के अनुरूप विवेकपूर्ण आचरण करें॥२४॥

अग्ने धृतव्रताय ते समुद्रायेव सिन्धवः ।
गिरो वाश्रास ईरते ॥२५॥

हे अग्निदेव ! आप सत्कर्मों के धारक हैं । हमारी सुन्दर प्रार्थनाएँ आपके पास उसी प्रकार पहुँचती हैं, जिस प्रकार सरिताएँ समुद्र की ओर गमन करती हैं॥२५॥

युवानं विश्पतिं कविं विश्वादं पुरुवेपसम् ।
अग्निं शुम्भामि मन्मभिः ॥२६॥

यज्ञादि विविध सत्कर्म करने वाले, हमेशा युवा रहने वाले, समस्त आहुतियों का सेवन करने वाले विद्वान् अग्निदेव को हम अपनी स्तुतियों द्वारा समृद्ध करते हैं॥२६॥

यज्ञानां रथ्ये वयं तिग्मजम्भाय वीळवे ।
स्तोमैरिषेमाग्नये ॥२७॥

तीक्ष्ण लपटों वाले, यज्ञों में प्रमुख तथा पराक्रमी अग्निदेव की हम अपने स्तोत्रों द्वारा प्रार्थना करते हैं॥२७॥

अयमग्ने त्वे अपि जरिता भूतु सन्त्य ।
तस्मै पावक मृळय ॥२८॥

पवित्र बनाने वाले, पूजनीय हे अग्निदेव ! हम स्तोता आपकी विविध प्रकार से वन्दना करते हैं। आप हमें सुख प्रदान करें॥२८॥

धीरो ह्यस्यद्मसद्विप्रो न जागृविः सदा ।
अग्ने दीदयसि द्यवि ॥२९॥

हे अग्निदेव ! आप ज्ञानी तथा धैर्यवान् है । आप आहुतियों का सेवन करते हुए प्रजाओं के हित में सदैव जाग्रत् रहते हैं । आप आकाश में आलोकित होते हैं॥२९॥

पुराग्ने दुरितेभ्यः पुरा मृध्रेभ्यः कवे ।
प्र ण आयुर्वसो तिर ॥३०॥

हे मेधावी अग्निदेव ! आप सबको आश्रय प्रदान करने वाले हैं। पाप करने वालों और हिंसा करने वालों से आप हमारी रक्षा करें और हमारे आयुष्य की वृद्धि करें॥३०॥

# सूक्त ४५

ऋषि: त्रिशोक: काण्व
देवता – इन्द्र; १ अग्निन्द्रौ । छंद: गायत्री

आ घा ये अग्निमिन्धते स्तृणन्ति बर्हिरानुषक् ।
येषामिन्द्रो युवा सखा ॥१॥

यज्ञाग्नि को प्रज्वलित करने वाले याजकगण अपने मित्र चिरयुवा इन्द्रदेव के निमित्त यज्ञशाला में पवित्र आसन (कुशाएँ प्रदान करते हैं॥१॥

बृहन्निदिध्म एषां भूरि शस्तं पृथुः स्वरुः ।
येषामिन्द्रो युवा सखा ॥२॥

अधियों के पास समिधायें पर्याप्त हैं । स्तोत्र भी असंख्य हैं । चिरयुवा इन्द्रदेव सदैव ही इन ऋषियों के मित्र बनकर रहते हैं॥२॥

अयुद्ध इद्युधा वृतं शूर आजति सत्वभिः ।
येषामिन्द्रो युवा सखा ॥३॥

इन्द्रदेव जिनके मित्र हैं, वे साधक युद्ध की इच्छा न रखते हुए भी सैन्यबल से युक्त शत्रु को पराजित करने में समर्थ होते हैं॥३॥

आ बुन्दं वृत्रहा ददे जातः पृच्छद्वि मातरम् ।
क उग्राः के ह शृण्विरे ॥४॥

वृत्र को मारने वाले इन्द्रदेव ने जन्म लेते ही अपने हाथ में धनुष-बाण ग्रहण किया और अपनी माता से पूछा कि इस संसार में अत्यन्त पराक्रमी वीर कौन-कौन से हैं ?॥४॥

प्रति त्वा शवसी वदद्गिरावप्सो न योधिषत् ।
यस्ते शत्रुत्वमाचके ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी शक्ति से सम्पन्न माता ने कहा कि शत्रु जो तुमसे शत्रुता रखता है, वह पर्वतों में (मदमत्त) हाथी की तरह विचरण करता है॥५॥

उत त्वं मघवञ्छृणु यस्ते वष्टि ववक्षि तत् ।
यद्वीळयासि वीळु तत् ॥६॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! जो व्यक्ति आपसे याचना करते हैं, आप उन्हें वह सब प्रदान करते हैं। जिसे आप शक्तिशाली बनाते हैं, वही बलवान् बनता है । अतः आप हमारी प्रार्थनाएँ सुनें॥६॥

यदाजिं यात्याजिकृदिन्द्रः स्वश्वयुरुप ।
रथीतमो रथीनाम् ॥७॥

इन्द्रदेव जब अपने श्रेष्ठ अश्वों को नियोजित करके रणक्षेत्र में युद्ध करने के लिए जाते हैं, तब वे सभी रथियों के बीच महारथी की भाँति सुशोभित होते हैं ॥७॥

वि षु विश्वा अभियुजो वज्रिन्विष्वग्यथा वृह ।
भवा नः सुश्रवस्तमः ॥८॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! जैसे भी सम्भव हो आप अपनी प्रजाओं को हर प्रकार से (बढ़ाएँ) समृद्ध करें। आप हमारे लिए उत्तम अन्न से सम्पन्न बने रहें॥८॥

अस्माकं सु रथं पुर इन्द्रः कृणोतु सातये ।
न यं धूर्वन्ति धूर्तयः ॥९॥

दुष्ट लोग जिनको मार नहीं सकते, ऐसे इन्द्रदेव हमारी वांछित वस्तुओं को प्रदान करने के लिए अपने श्रेष्ठ रथ को सामने करें अर्थात् यज्ञ स्थल पर उपस्थित हों॥९॥

वृज्याम ते परि द्विषोऽरं ते शक्र दावने ।
गमेमेदिन्द्र गोमतः ॥१०॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! हम आपके शत्रुओं के बन्धन में कभी न जाएँ । जब आप अनेकों गौओं से सम्पन्न वांछित धन देते हैं, तब हम आपके सम्मुख विद्यमान रहें॥१०॥

शनैश्चिद्यन्तो अद्रिवोऽश्वावन्तः शतग्विनः ।
विवक्षणा अनेहसः ॥११॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! हम धीरे-धीरे प्रगति करते हुए सैकड़ों गौओं और अश्वों से युक्त धन से सम्पन्न हों तथा पापरहित बने रहें॥११॥

ऊर्ध्वा हि ते दिवेदिवे सहस्रा सूनृता शता ।
जरितृभ्यो विमंहते ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! आप अपने यजमान को सैंकड़ों और हजारों प्रकार के विविध ऐश्वर्य प्रदान करते हैं॥१२॥

विद्मा हि त्वा धनंजयमिन्द्र दृळ्हा चिदारुजम् ।
आदारिणं यथा गयम् ॥१३॥

हे इन्द्रदेव ! आप धन को जीतने वाले मजबूत किलों को भी ध्वस्त करने वाले तथा रिपुओं का संहार करने वाले हैं। हम आपको घर के समान संरक्षण प्रदान करने वाले समझते हैं॥१३॥

ककुहं चित्त्वा कवे मन्दन्तु धृष्णविन्दवः ।
आ त्वा पणिं यदीमहे ॥१४॥

हे क्रान्तदर्शी इन्द्रदेव ! आप रिपुओं के संहारक हैं । जब हम आपसे धन की कामना करें, तब हमारा यह सोमरस आपके लिये तृप्तिदायक हो॥१४॥

यस्ते रेवाँ अदाशुरिः प्रममर्ष मघत्तये ।
तस्य नो वेद आ भर ॥१५॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! जो मनुष्य अपार वैभव से सम्पन्न होकर भी कृपण है और आपसे द्वेष करता है। आप उसका ऐश्वर्य हमें प्रदान करें॥१५॥

इम उ त्वा वि चक्षते सखाय इन्द्र सोमिनः ।
पुष्टावन्तो यथा पशुम् ॥१६॥

जिस प्रकार पशुपालक हाथ में घास लेकर स्नेहपूर्वक पशुओं की ओर देखता है, उसी प्रकार आपको तृप्त करने के लिए याजकगण सोमादि हाथ में लेकर आपकी ओर देखते रहते हैं॥१६॥

उत त्वाबधिरं वयं श्रुत्कर्णं सन्तमूतये ।
दूरादिह हवामहे ॥१७॥

हे इन्द्रदेव ! आप ध्वनियाँ सुनने में भली प्रकार सक्षम हैं, बधिर नहीं है । अपनी सुरक्षा के लिए हम आपको दूर स्थान से भी आहूत करते हैं॥१७॥

यच्छुश्रूया इमं हवं दुर्मर्षं चक्रिया उत ।
भवेरापिर्नो अन्तमः ॥१८॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारी पुकार को सुनकर अपनी असीम सामर्थ्य को प्रकट करें और हमारे निकटस्थ प्रिय बन्धु हो जाएँ॥१८॥

यच्चिद्धि ते अपि व्यथिर्जगन्वांसो अमन्महि ।
गोदा इदिन्द्र बोधि नः ॥१९॥

हे इन्द्रदेव ! जब हम दुःख से व्यथित होकर आपकी शरण में आये और प्रार्थना करें, तब आप जागरूक होकर हमें गोएँ प्रदान करें॥१९॥

आ त्वा रम्भं न जिव्रयो ररभ्मा शवसस्पते ।
उश्मसि त्वा सधस्थ आ ॥२०॥

सामर्थ्यवान् हे अग्निदेव ! जिस प्रकार वृद्ध व्यक्ति दण्ड का सहारा प्राप्त करते हैं, उसी प्रकार हम आपके अश्रय को प्राप्त करें । हम यज्ञ मण्डप में आपकी उपस्थिति की कामना करते हैं॥२०॥

स्तोत्रमिन्द्राय गायत पुरुनृम्णाय सत्वने ।
नकिर्यं वृण्वते युधि ॥२१॥

हे स्तोताओ ! जिन पराक्रमी इन्द्रदेव को रणक्षेत्र में कोई परास्त नहीं कर सकता, आप उन इन्द्रदेव का गुणगान करें॥२१॥

अभि त्वा वृषभा सुते सुतं सृजामि पीतये ।
तृम्पा व्यश्नुही मदम् ॥२२॥

हे बलशाली इन्द्रदेव ! इस सोमयज्ञ में आपके लिए सोमरस समर्पित करते हैं । आप इस तृप्तिकारक सोमरस का पान करें॥२२॥

मा त्वा मूरा अविष्यवो मोपहस्वान आ दभन् ।
माकीं ब्रह्मद्विषो वनः ॥२३॥

हे इन्द्रदेव ! आपसे रक्षण की कामना करने वाले तथा उपहास करने वाले अज्ञानियों का आप पर कोई प्रभाव न पड़े । ज्ञान-द्वेषियों की आप कोई भी सहायता न करें॥२३॥

इह त्वा गोपरीणसा महे मन्दन्तु राधसे ।
सरो गौरो यथा पिब ॥२४॥

हे इन्द्रदेव ! गौ-दुग्ध मिश्रित सोमरस की हवि देकर होता ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए आपकी प्रार्थना करते हैं । तालाब में जल पीने वाले मृग की भाँति आप सोमरस का पान करें॥२४॥

या वृत्रहा परावति सना नवा च चुच्युवे ।
ता संसत्सु प्र वोचत ॥२५॥

हे वृत्रदन्ता इन्द्रदेव ! प्राचीन काल में आपने जो पुरातन तथा नवीन धन प्रदान किया था, उसको विवेचन आप सभागृह में करें॥२५॥

अपिबत्कद्रुवः सुतमिन्द्रः सहस्रबाह्वे ।
अत्रादेदिष्ट पौंस्यम् ॥२६॥

कद्रु के द्वारा निष्पन्न सोमरस का इन्द्रदेव ने पान किया और हजारों भुजाओं वाले बलशाली शत्रु का संहार किया। इससे उनका दर्शनीय पराक्रम प्रकट हुआ॥२६॥

सत्यं तत्तुर्वशे यदौ विदानो अह्नवाय्यम् ।
व्यानट् तुर्वणे शमि ॥२७॥

हे इन्द्रदेव ! आपने 'तुर्वश' और यादवों के वास्तविक कार्यों को जानकर रणक्षेत्र में 'अह्नवाय' नामक रिपु का वध कर दिया॥२७॥

तरणिं वो जनानां त्रदं वाजस्य गोमतः ।
समानमु प्र शंसिषम् ॥२८॥

(हे स्तोताओ) सज्जनों को बाधाओं से पार कराने वाले, शत्रुओं को भयभीत करने वाले, पशुधन से सम्पन्न, अन्न का दान करने वाले तथा उन्नतशील इन्द्रदेव की हम स्तुति करते हैं॥२८॥

ऋभुक्षणं न वर्तव उक्थेषु तुग्र्यावृधम् ।

इन्द्रं सोमे सचा सुते ॥२९॥

सोमाभिषव करते हुए सभी स्तोता एक साथ मिलकर जल की वृद्धि करने वाले महान् इन्द्रदेव की स्तुति करते हैं। उनसे ऐश्वर्य प्राप्ति की कामना करते हैं॥२९॥

यः कृन्तदिद्वि योन्यं त्रिशोकाय गिरिं पृथुम् ।
गोभ्यो गातुं निरेतवे ॥३०॥

जिन इन्द्रदेव ने त्रिशोक के निमित्त जल को प्रवाहित करने के लिए विशाल मेघों को विदीर्ण किया, उन्होंने ही पृथ्वी पर किरणों के लिये (अथवा बहने वाले जल के लिए) मार्ग भी बनाया॥३०॥

यद्दधिषे मनस्यसि मन्दानः प्रेदियक्षसि ।
मा तत्करिन्द्र मृळय ॥३१॥

हे इन्द्रदेव ! हर्षित होकर जिस ऐश्वर्य को धारण करते हैं, जिसकी कामना करते हैं तथा जिसका दान करते हैं, वह ऐश्वर्य हमें क्यों नहीं प्रदान करते ? हे देव ! आप हमें समृद्ध करें॥३१॥

दभ्रं चिद्धि त्वावतः कृतं शृण्वे अधि क्षमि ।
जिगात्विन्द्र ते मनः ॥३२॥

हे इन्द्रदेव ! आपके द्वारा किया हुआ छोटा कार्य भी धरती पर विख्यात हो जाता है । अत: आप हमारे ऊपर कृपा करें॥३२॥

तवेदु ताः सुकीर्तयोऽसन्नुत प्रशस्तयः ।
यदिन्द्र मृळयासि नः ॥३३॥

हे इन्द्रदेव ! जब आप हमें हर्षित करते हैं, उस समय आप ही यशस्वी और प्रशंसनीय होते हैं॥३३॥

मा न एकस्मिन्नागसि मा द्वयोरुत त्रिषु ।
वधीर्मा शूर भूरिषु ॥३४॥

हे इन्द्रदेव ! हमारे द्वारा एक अपराध होने पर हमारा संहार न करें । दो अपराध होने पर अथवा तीन या अधिक अपराध होने पर भी आप हमें पीड़ित न करें॥३४॥

बिभया हि त्वावत उग्रादभिप्रभङ्गिणः ।
दस्मादहमृतीषहः ॥३५॥

हे पराक्रमी इन्द्रदेव ! आप रिपुओं पर चोट करने वाले और पापी मनुष्यों का विनाश करने वाले हैं। आप रिपुओं को परास्त करने में सक्षम हैं। हम आपसे भयभीत न हों॥३५॥

मा सख्युः शूनमा विदे मा पुत्रस्य प्रभूवसो ।
आवृत्वद्भूतु ते मनः ॥३६॥

सम्पदा से सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! हम अपने सखा अथवा पुत्र के ऐश्वर्य की याचना नहीं करते। हम तो आपके मन को अपनी ओर आकृष्ट करना चाहते हैं॥३६॥

को नु मर्या अमिथितः सखा सखायमब्रवीत् ।
जहा को अस्मदीषते ॥३७॥

हे मनुष्यो ! क्रोधरहित, सखारूप इन्द्रदेव ने अपने मित्र से प्रश्न किया कि हमने किस निर्दोष मनुष्य का हनन किया है? और कौन हमसे दूर भागता हैं ?॥३७॥

एवारे वृषभा सुतेऽसिन्वन्भूर्यावयः ।
श्वघ्नीव निवता चरन् ॥३८॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! जिस प्रकार पर्वतों पर रहने वाला शिकारी अपने शिकार को प्राप्त करता हैं, उसी प्रकार सोम अभिषव करने वाले 'एवार' (नाम वाले अथवा आदरणीय व्यक्ति) को आपने प्रचुर सम्पत्ति प्रदान की॥३८॥

आ त एता वचोयुजा हरी गृभ्णे सुमद्रथा ।
यदीं ब्रह्मभ्य इद्ददः ॥३९॥

हे इन्द्रदेव ! आपके कहने मात्र से ही रथ में नियोजित हो जाने वाले अश्वों को हम आहूत करते हैं । इस सम्पत्ति को आपने ब्रह्मनिष्ठ साधकों के निमित्त ही प्रदान किया हैं॥३९॥

भिन्धि विश्वा अप द्विषः परि बाधो जही मृधः ।
वसु स्पार्हं तदा भर ॥४०॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे समस्त हिंसक रिपुओं का विनाश करके उन्हें हमसे दूर हटाएँ तथा उनका ऐश्वर्य हमारे पास पहुँचाएँ॥४०॥

यद्वीळाविन्द्र यत्स्थिरे यत्पर्शाने पराभृतम् ।
वसु स्पार्हं तदा भर ॥४१॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें ऐसी सम्पत्ति प्रदान करें, जो पुष्ट और स्थिर भूमि में विद्यमान हो तथा जिसे किसी ने स्पर्श न किया हो॥४१॥

यस्य ते विश्वमानुषो भूरेर्दत्तस्य वेदति ।
वसु स्पार्हं तदा भर ॥४२॥

हे इन्द्रदेव ! आपके द्वारा प्रदत्त जिस वैभव को सभी लोग उचित ढंग से जानते हैं, उस वाञ्छित ऐश्वर्य को हमें पर्याप्त मात्रा में प्रदान करें॥४२॥

# सूक्त ४६

ऋषि: वशोऽश्व्य:
देवता – इन्द्र; २१-२४ कानीत: पृथुश्रवा, २५-२८, ३२ वायु । छंद: गायत्री, पादनिचृत, ५ ककुप्, ७ बृहती, ८ अनुष्टुप, ९ सतोवृहती, ११-१२ विपरीतोत्तर:, १३ द्विपदा जगती, १४ वृहती पिपीलिकमध्या, १५ ककुम्न्यंकुशिरा, १६ विराट, १० जगती, १८ उपरिष्टाद् वृहती, १९ वृहती, २० विषमपदा वृहती, २१, २४ पंक्ति, २२ संस्ता पंक्ति, २५-२८ प्रगाथ:, ३० द्विपदा विराट, ३१ उष्णिक्, ३२ पंक्ति

त्वावतः पुरूवसो वयमिन्द्र प्रणेतः ।
स्मसि स्थातर्हरीणाम् ॥१॥

धनवान्, श्रेष्ठ नायक और अश्वों के स्वामी हे इन्द्रदेव ! आपके समान रक्षक अन्य कोई नहीं हैं । हम आपके प्रति समर्पित होकर रहें॥१॥

त्वां हि सत्यमद्रिवो विद्म दातारमिषाम् ।
विद्म दातारं रयीणाम् ॥२॥

वज्र धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! हम आपको अन्नदाता और ऐश्वर्य प्रदाता के रूप में मानते हैं, यही वास्तविकता है॥२॥

आ यस्य ते महिमानं शतमूते शतक्रतो ।
गीर्भिर्गृणन्ति कारवः ॥३॥

हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! आप सैकड़ों रक्षण- साधनों से सम्पन्न हैं । स्तोतागण स्तुति करते हुए आपकी महानता का वर्णन करते हैं॥३॥

सुनीथो घा स मर्त्यो यं मरुतो यमर्यमा ।
मित्रः पान्त्यद्रुहः ॥४॥

मरुद्गण, मित्र और अर्यमादेव द्रोहरहित होकर जिस साधक की रक्षा करते हैं, वह साधक निश्चित रूप से श्रेष्ठ पथगामी होता है॥४॥

दधानो गोमदश्ववत्सुवीर्यमादित्यजूत एधते ।
सदा राया पुरुस्पृहा ॥५॥

हम स्तोतागण इन्द्र (सूर्य) द्वारा संरक्षित होकर गौओं और अश्वों से सम्पन्न सामर्थ्यवान् होते हैं । हम उनसे वांछित धन प्राप्त करके समृद्ध होते हैं॥५॥

तमिन्द्रं दानमीमहे शवसानमभीर्वम् ।
ईशानं राय ईमहे ॥६॥

शक्ति से सम्पन्न, निर्भीक तथा सबके अधिष्ठाता, उन इन्द्रदेव से हम दान और ऐश्वर्य की याचना करते हैं॥६॥

तस्मिन्हि सन्त्यूतयो विश्वा अभीरवः सचा ।
तमा वहन्तु सप्तयः पुरूवसुं मदाय हरयः सुतम् ॥७॥

रक्षण करने वाली समस्त निर्भीक सेनाएँ इन्द्रदेव के आश्रित रहकर साथ-साथ निवास करती हैं। उनके द्रुतगामी घोड़े उन्हें हर्षित करने के लिए सोमयाग के समीप ले आयें॥७॥

यस्ते मदो वरेण्यो य इन्द्र वृत्रहन्तमः ।
य आददिः स्वर्नृभिर्यः पृतनासु दुष्टरः ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आपका जो 'मद' (सोमपानजनित हर्षातिरेक) वरण करने योग्य हैं, जो रिपुओं का संहारक है, जो शत्रुओं के धन को हरण करने वाला है और जो संग्राम में अभिभूत (पराभूत) न होने वाला है, (उस मद-हर्षातिरेक के लिए अश्व लेकर आएँ)॥८॥

यो दुष्टरो विश्ववार श्रवाय्यो वाजेष्वस्ति तरुता ।
स नः शविष्ठ सवना वसो गहि गमेम गोमति व्रजे ॥९॥

उन इन्द्रदेव का शौर्य रणक्षेत्र में रिपुओं के द्वारा अजेय, शक्तिप्रदायक तथा विपत्तियों से मुक्ति दिलाने वाला है । वरण करने योग्य, शक्ति से सम्पन्न तथा सबको निवास प्रदान करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप हमारे यज्ञ में पधारें, जिससे हम गौओं से सम्पन्न गोष्ठ में प्रविष्ट हों॥९॥

गव्यो षु णो यथा पुराश्वयोत रथया ।
वरिवस्य महामह ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! सदैव की तरह हमें उत्तम गौओं, श्रेष्ठ घोड़ों से युक्त रथ तथा प्रतिष्ठापूर्ण धन प्रदान करने की इच्छा से आप हमारे पास आयें॥१०॥

नहि ते शूर राधसोऽन्तं विन्दामि सत्रा ।
दशस्या नो मघवन्नू चिदद्रिवो धियो वाजेभिराविथ ॥११॥

हे पराक्रमी इन्द्रदेव ! वास्तव में आपकी सम्पत्ति असीम हैं । हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप हमें ऐश्वर्य प्रदान करें । हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप अपनी सामर्थ्य से हमारे कर्मों का संरक्षण करें॥११॥

य ऋष्वः श्रावयत्सखा विश्वेत्स वेद जनिमा पुरुष्टुतः ।
तं विश्वे मानुषा युगेन्द्रं हवन्ते तविषं यतस्रुचः ॥१२॥

वे महान् इन्द्रदेव कीर्तिवानों के सखा और अनेकों द्वारा प्रशंसित हैं। वे हमारे सम्पूर्ण जन्मों के ज्ञाता हैं। उन शक्तिशाली इन्द्रदेव के निमित्त सुक् पात्र से हवि प्रदान करने वाले हम याजकगण सदैव यजन करते हैं॥१२॥

स नो वाजेष्वविता पुरूवसुः पुरःस्थाता मघवा वृत्रहा भुवत् ॥१३॥

वे धनवान् इन्द्रदेव अनेकों को निवास प्रदान करने वाले और वृत्र का संहार करने वाले हैं। वे रणक्षेत्र में सदैव अग्रणी रहकर हमारा संरक्षण करें॥१३॥

अभि वो वीरमन्धसो मदेषु गाय गिरा महा विचेतसम् ।
इन्द्रं नाम श्रुत्यं शाकिनं वचो यथा ॥१४॥

हे उद्गाताओ ! हितकारी, असुरजयी, सोमरस से आनन्दित होने वाले वीर, मेधावी तथा कीर्तिमान् इन्द्रदेव की विशेष स्तोत्रों से स्तुति करो॥१४॥

ददी रेक्णस्तन्वे ददिर्वसु ददिर्वाजेषु पुरुहूत वाजिनम् ।
नूनमथ ॥१५॥

अनेकों द्वारा आहूत किये जाने वाले हे इन्द्रदेव ! आप हमको पुष्टिदायक धन दें, श्रेष्ठ आवास दें तथा रणक्षेत्र में शक्ति से सम्पन्न असीम उत्साह प्रदान करें॥१५॥

विश्वेषामिरज्यन्तं वसूनां सासह्वांसं चिदस्य वर्पसः ।
कृपयतो नूनमत्यथ ॥१६॥

हे स्तोताओ ! समस्त ऐश्वर्यों को नियंत्रित करने वाले और शक्तिशाली रिपुओं को भी परास्त करने वाले इन्द्रदेव की आप भली प्रकार प्रार्थना करें॥१६॥

महः सु वो अरमिषे स्तवामहे मीळ्हुषे अरंगमाय जग्मये ।
यज्ञेभिर्गीर्भिर्विश्वमनुषां मरुतामियक्षसि गाये त्वा नमसा गिरा ॥१७॥

हम उन शक्तिशाली, सज्जनों की सहायता करने वाले, सब जगह गमन करने वाले इन्द्रदेव की प्रचुर अन्न प्राप्ति के लिए यजनीय स्तोत्रों द्वारा प्रार्थना करते हैं। आप भी उनकी प्रार्थना करें । हे इन्द्रदेव ! आप

समस्त मनुष्यों तथा मरुद्गणों के उपास्य हैं, हम अपने विनम्र वचनों द्वारा आपका गुणगान करते हैं॥१७॥

ये पातयन्ते अज्मभिर्गिरीणां स्नुभिरेषाम् ।
यज्ञं महिष्वणीनां सुम्नं तुविष्वणीनां प्राध्वरे ॥१८॥

जो मरुद्गण अपने शक्ति-प्रवाहों से सम्पन्न होकर पर्वतीय (मेघीय) जल को नीचे की ओर प्रवाहित करते हैं, उन गर्जनशील मरुतों के निमित्त हम यजन करते हैं। उनकी कृपा से इस श्रेष्ठ यज्ञ में सुख प्राप्त करते हैं॥१८॥

प्रभङ्गं दुर्मतीनामिन्द्र शविष्ठा भर ।
रयिमस्मभ्यं युज्यं चोदयन्मते ज्येष्ठं चोदयन्मते ॥१९॥

प्रेरक बुद्धि से सम्पन्न, शक्तिशाली हे इन्द्रदेव ! आप दुर्बुद्धिग्रस्त मनुष्यों का विनाश करते हैं। आप हमें उत्तम ऐश्वर्य से परिपूर्ण करें॥१९॥

सनितः सुसनितरुग्र चित्र चेतिष्ठ सूनृत ।
प्रासहा सम्राट् सहुरिं सहन्तं भुज्युं वाजेषु पूर्व्यम् ॥२०॥

दानशील, शक्तिशाली तथा सत्यभाषी हे इन्द्रदेव ! आप अद्‌भुत सामर्थ्य से सम्पन्न हैं और रिपुओं का विनाश करने वाले सम्राट् हैं। हमें आप ऐसी सम्पत्ति प्रदान करें, जो रणक्षेत्र में रिपुओं को परास्त करने वाली और सहनशक्ति प्रदान करने वाली हो॥२०॥

आ स एतु य ईवदाँ अदेवः पूर्तमाददे ।
यथा चिद्वशो अश्व्यः पृथुश्रवसि कानीतेऽस्या व्युष्याददे ॥२१॥

अश्य (अश्व से उत्पन्न या पुत्र) 'वश' ने उषाकाल में कानीत (कनीत से उत्पन्न या पुत्र) पृथुश्रवा (यशस्वी) से वैभव प्राप्त किया। ऐसा दान प्राप्त करने वाले (वश) यहाँ पधारे॥२१॥

षष्टिं सहस्राश्व्यस्यायुतासनमुष्ट्रानां विंशतिं शता ।
दश श्यावीनां शता दश त्र्यरुषीणां दश गवां सहस्रा ॥२२॥

(वश कहते हैं-) मैंने साठ हजार तथा अयुत (दस हजार) अश्वों (संचारके सामथ्र्यो ) को तथा बीस सौ (दो हजार) ऊँटों को प्राप्त किया। श्याम वर्ण की दस सौ (एक हजार) घोड़ियाँ तथा तीन स्थानों (ककुद, पीठ एवं बगल) पर प्रकाशित (सफेद लकीरों से युक्त) दस हजार गौएँ भी प्राप्त कीं॥२२॥

दश श्यावा ऋधद्रयो वीतवारास आशवः ।

मथ्रा नेमिं नि वावृतुः ॥२३॥

हमारे रथ की धुरी को दस श्याम वर्ण वाले घोड़े खींचते हैं। वे घोड़े अत्यन्त द्रुतगामी, शक्तिशाली तथा रिपुओं को मथने वाले हैं॥२३॥

दानासः पृथुश्रवसः कानीतस्य सुराधसः ।
रथं हिरण्ययं ददन्मंहिष्ठः सूरिरभूद्वर्षिष्ठमकृत श्रवः ॥२४॥

'पृथुश्रवा' के पुत्र 'कानीत' अत्यन्त धनवान् हैं। उन्होंने हमें स्वर्णिम रथ प्रदान किया। इसलिए वे सर्वश्रेष्ठ दानी और विद्वान् हो गए। इसके बाद हमने उनकी कीर्ति को समृद्ध किया॥२४॥

आ नो वायो महे तने याहि मखाय पाजसे ।
वयं हि ते चकृमा भूरि दावने सद्यश्चिन्महि दावने ॥२५॥

हे वायो ! महान् ऐश्वर्य प्राप्त करने के निमित्त हम आपकी प्रार्थना करते हैं। आप हमें प्रचुर सम्पत्ति और यज्ञीय बल प्रदान करने के लिए पधारें॥२५॥

यो अश्वेभिर्वहते वस्त उस्रास्त्रिः सप्त सप्ततीनाम् ।
एभिः सोमेभिः सोमसुद्भिः सोमपा दानाय शुक्रपूतपाः ॥२६॥

सोमरस पीने वाले, बल बढ़ाने वाले तथा शुद्ध करने वाले वायुदेव अपने अश्वों से गमन करते हैं और तीन गुना सात बार, फिर उसका सत्तर गुना (अर्थात् गौओं को आश्रय प्रदान करते हैं। सोम अभिषव करने वालों को वे दान देते हैं॥२६॥

यो म इमं चिदु त्मनामन्दच्चित्रं दावने ।
अरट्वे अक्षे नहुषे सुकृत्वनि सुकृत्तराय सुक्रतुः ॥२७॥

यह जो (दानशील वायु) हमें विलक्षण दान देकर आनन्दित होता है, उस सत्कर्म परायण (पृथुश्रवा) यशस्वी ने (इस प्रयोजन हेतु) युवा 'अक्ष' (व्यवहार कुशल) नहुष' (मनुष्यों) सुकृत्' (श्रेष्ठकर्मी) तथा 'सुकृत्तर' (श्रेष्ठतर कमी) को प्रेरित किया॥२७॥

उचथ्ये वपुषि यः स्वराळुत वायो घृतस्नाः ।
अश्वेषितं रजेषितं शुनेषितं प्राज्म तदिदं नु तत् ॥२८॥

तेजस्वी वायु (प्राणयुक्त प्रवाह) जो उचथ्य (नामक राजा अथवा स्तुत्य) वपु (राजा या शरीर) के क्षेत्र में स्व प्रकाशित (अथवा स्वयं ही शासक) हैं; उन्होंने घोड़ों, ऊँटों तथा श्वानों से प्रेरित (प्रेषित) जो अन्न प्रदान किया, यह वही है॥२८॥

अध प्रियमिषिराय षष्टिं सहस्रासनम् ।

अश्वानामिन्न वृष्णाम् ॥२९॥

इस समय ऐश्वर्य प्रदान करने वाले शासक से हमने आठ हजार शक्तिशाली अश्वों को दान के रूप में ग्रहण किया॥२९॥

गावो न यूथमुप यन्ति वध्रय उप मा यन्ति वध्रयः ॥३०॥

जिस प्रकार गौएँ (पोषक शक्तियाँ) अपने झुण्ड के साथ गमन करती हैं, उसी प्रकार 'पृथुश्रवा' द्वारा प्रदत्त वृषभ (बलशाली प्रवाह) हमारे साथ गमन करते हैं॥३०॥

अध यच्चारथे गणे शतमुष्ट्राँ अचिक्रदत् ।
अध श्वित्नेषु विंशतिं शता ॥३१॥

उसके बाद विचरण करने वाले ऊँटों के झुण्ड से सौ ऊँट और श्वेत वर्ण वाली गौओं में दो हजार गौएँ दान में प्रदान की ॥३१॥

शतं दासे बल्बूथे विप्रस्तरुक्ष आ ददे ।
ते ते वायविमे जना मदन्तीन्द्रगोपा मदन्ति देवगोपाः ॥३२॥

हम गौओं और अश्वों का पालन करने वाले ब्राह्मण हैं । हमने बलबूथ' नाम वाले (अथवा बल-सम्पन्न) से सैकड़ों गौएँ तथा अश्व प्राप्त किये थे । हे वायो ! ये सब आपके आश्रित हैं। ये स्तोतागण इन्द्र तथा अन्य देवताओं द्वारा संरक्षित होकर हर्षित होते हैं॥३२॥

अध स्या योषणा मही प्रतीची वशमश्व्यम् ।
अधिरुक्मा वि नीयते ॥३३॥

इसके बाद वे (दाता) स्वर्णिम आभूषणों से सुसज्जित तथा वंदनीया नारी को 'अश्व्य' के पुत्र 'वश' के सम्मुख पहुँचाते हैं॥३३॥

# सूक्त ४७

ऋषि: त्रित आप्त्य:
देवता – आदित्या, १४-१८ आदित्योषस:। छंद: महापंक्ति

महि वो महतामवो वरुण मित्र दाशुषे ।
यमादित्या अभि द्रुहो रक्षथा नेमघं नशदनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१॥

हे मित्र और वरुणदेव ! जिन रक्षण-साधनों से आप हवि प्रदाता यजमान को संरक्षण प्रदान करते हैं, वे अत्यन्त श्रेष्ठ हैं। हे आदित्यगण ! आप जिस यजमान को विद्रोही रिघुओं से संरक्षित करते हैं, उसको पाप आदि पीड़ित नहीं कर सकते॥१॥

विदा देवा अघानामादित्यासो अपाकृतिम् ।
पक्षा वयो यथोपरि व्यस्मे शर्म यच्छतानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥२॥

हे आदित्यगण ! आपको यह ज्ञात है कि हमारा दुःख किस प्रकार दूर हो ? जिस प्रकार पक्षी अपने बच्चों को पंख से ढककर सुख देता है, उसी प्रकारे आप में सुख प्रदान करें। आपके रक्षण- साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ॥२॥

व्यस्मे अधि शर्म तत्पक्षा वयो न यन्तन ।
विश्वानि विश्ववेदसो वरूथ्या मनामहेऽनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥३॥

जिस प्रकार पक्षी पंखों से ढककर अपने बच्चों को सुरक्षा प्रदान करते हैं, उसी प्रकार आप हमें संरक्षित करें । सर्वज्ञाता हे देवो ! आपसे सम्पूर्ण संरक्षण की हम कामना करते हैं। आपके रक्षण- साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं॥३॥

यस्मा अरासत क्षयं जीवातुं च प्रचेतसः ।
मनोर्विश्वस्य घेदिम आदित्या राय ईशतेऽनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥४॥

प्रचेता (चेतना के संचारको आदित्यगण जिन्हें जीवन के साधन एवं आवास प्रदान करते हैं, उन्हीं मनुष्यों के लिए संसार के ऐश्वर्यों पर भी शासन (उन्हें व्यवस्थित-सुनियोजित) करते हैं । हे देवो ! आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ॥४॥

परि णो वृणजन्नघा दुर्गाणि रथ्यो यथा ।
स्यामेदिन्द्रस्य शर्मण्यादित्यानामुतावस्यनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥५॥

जिस प्रकार रथ को खींचने वाले घोड़े दुर्गम पथ को छोड़ देते हैं, उसी प्रकार हम पापपूर्ण रास्तों को छोड़ देंगे। हम इन्द्रदेव के आश्रित तथा आदित्यों से संरक्षित होकर रहें । आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं॥५॥

परिह्वृतेदना जनो युष्मादत्तस्य वायति ।
देवा अदभ्रमाश वो यमादित्या अहेतनानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥६॥

कष्ट सहन करके भी जो व्यक्ति आपकी उपासना करता है, वह आपके ऐश्वर्य को प्राप्त करता है । हे द्रुत गति से गमन करने वाले देवताओ ! जिनके समीप आप पधारते हैं, वे व्यक्ति असीमित ऐश्वर्य प्राप्त करते हैं। आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ॥६॥

न तं तिग्मं चन त्यजो न द्रासदभि तं गुरु ।
यस्मा उ शर्म सप्रथ आदित्यासो अराध्वमनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥७॥

हे आदित्यगण ! जो व्यक्ति आपके आश्रित होकर रहते हैं, उन्हें तीक्ष्ण हथियार भी पीड़ित नहीं कर सकते । वें बड़ी-बड़ी विपत्तियों से भी बचकर सुखी रहते हैं। आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ॥७॥

युष्मे देवा अपि ष्मसि युध्यन्त इव वर्मसु ।
यूयं महो न एनसो यूयमर्भादुरुष्यतानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥८॥

हे देवताओ ! जिस प्रकार कवच धारण करके योद्धा सुरक्षित रहते हैं, उसी प्रकार आपको समर्पित होकर, हम छोटे-बड़े पापों से बचे रहते हैं। आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ॥८॥

अदितिर्न उरुष्यत्वदितिः शर्म यच्छतु ।
माता मित्रस्य रेवतोऽर्यम्णो वरुणस्य चानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥९॥

सम्पत्तिवान् अर्यमा, मित्र और वरुणदेव की माता अदिति हमें सुरक्षित करें । वे हमें सुख प्रदान करें । आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं॥९॥

यद्देवाः शर्म शरणं यद्भद्रं यदनातुरम् ।

त्रिधातु यद्वरूथ्यं तदस्मासु वि यन्तनानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१०॥

हे देवताओ !आप अपने आश्रय (कवच) का सुख हमें प्रदान करें वह त्रिधातु (तीन गुणों या धारण-क्षमताओ) कल्याणप्रद, रोगमुक्त तथा रक्षण-सामर्थ्य से युक्त हो । आपके रक्षण- साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ॥१०॥

आदित्या अव हि ख्यताधि कूलादिव स्पशः ।
सुतीर्थमर्वतो यथानु नो नेषथा सुगमनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥११॥

हे आदित्यगण ! जिस प्रकार मनुष्य सरिता के किनारे से नीचे की ओर दृष्टिपात करता है, उसी प्रकार आप ऊपर से नीचे हमारी तरफ देखें । जिस प्रकार अन्न घाट से अश्वी को (जल तक ले जाते हैं, उसी प्रकार आप हम श्रेष्ठ मार्ग पर चलाएँ । आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं॥११॥

नेह भद्रं रक्षस्विने नावयै नोपया उत ।
गवे च भद्रं धेनवे वीराय च श्रवस्यतेऽनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१२॥

हे आदित्या ! आप असुरों, विद्वंपियों तथा उपद्रवियों का हित न करके सदेव गोआ (पोषण देने वालो ), पराक्रमियों (रक्षकों ) तथा कीर्ति की कामना करने वाले (लोक हितेषी ) मनुष्यों का ही कल्याण करें। आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ॥१२॥

यदाविर्यदपीच्यं देवासो अस्ति दुष्कृतम् ।
त्रिते तद्विश्वमाप्त्य आरे अस्मद्दधातनानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१३॥

हे देवताओ ! हमारे प्रकट तथा गुप्त पापों को आप हमसे दूर करे । मुझ त्रित आप्त्य (तीन-भाव, विचार एवं कर्मानुसार आप्त अनुशासन में रहने वाले, कृषि या साधक) में वे एक भी पाप न रहे । आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं॥१३॥

यच्च गोषु दुष्ष्वप्न्यं यच्चास्मे दुहितर्दिवः ।
त्रिताय तद्विभावर्याप्त्याय परा वहानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१४॥

हे सूर्य पुत्री उषादेवि !आप हमारी औरहमारी गौओं के दुःस्वानो (कुकल्पनाओ ) को मुझ 'त्रित आप्य' ग्रंथ के निवेदन पर दूर करें । हे विभावरी (श्राळ आभा से भर देने वाली) !आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्राद्ध हैं॥१४॥

निष्कं वा घा कृणवते स्रजं वा दुहितर्दिवः ।
त्रिते दुष्ष्वप्न्यं सर्वमाप्त्ये परि दद्मस्यनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१५॥

हे सूर्य पुत्री उषादेवि ! गढ़ाई करने वाले तथा माला बनाने वाले के दुःस्वप्नों (कुकल्पनाओं ) को आप 'त्रित आप्त्य' ऋषि की प्रार्थना से दूर करें । आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ॥१५॥

तदन्नाय तदपसे तं भागमुपसेदुषे ।
त्रिताय च द्विताय चोषो दुष्ष्वप्न्यं वहानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१६॥

हे उषादेवि ! आप अन्न लेने वाले और देने वाले अथवा उस अन्न के भाग को ग्रहण करने वाले 'त्रित आप्त्य' के दुःस्वप्नों (कुकल्पनाओं या हीन संकल्पों ) को दूर हटाएँ। हे देवो ! आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ हैं॥१६॥

यथा कलां यथा शफं यथ ऋणं संनयामसि ।
एवा दुष्ष्वप्न्यं सर्वमाप्त्ये सं नयामस्यनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१७॥

जिस प्रकार यज्ञार्थ वस्तुओं का क्रमश: दान करते हैं। जिस प्रकार उधार के सूद एवं मूलधन को क्रमशः पूर्णरूपेण चुका देते हैं, उसी प्रकार अपने सम्पूर्ण दु:स्वप्नों को हम 'त्रित आप्त्य' श्रेष्ठ अपने पास से हटा देंगे। आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ॥१७॥

अजैष्माद्यासनाम चाभूमानागसो वयम् ।
उषो यस्माद्दुष्ष्वप्न्यादभैष्माप तदुच्छत्वनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१८॥

हे उषादेवि ! आज हम विजयी होकर लाभान्वित तथा पापरहित होंगे। जिस दु:स्वप्न से हम भयभीत हो गये थे, उससे हमें मुक्त करें। आपके रक्षण-साधन पापरहित तथा श्रेष्ठ है॥१८॥

## ऋग्वेद – अष्टम मंडल

## *सूक्त ४८*

ऋषि: प्रगाथो घौर काण्व:
देवता – सोम:। छंद: त्रिष्टुप, ५ जगती

स्वादोरभक्षि वयसः सुमेधाः स्वाध्यो वरिवोवित्तरस्य ।
विश्वे यं देवा उत मर्त्यासो मधु ब्रुवन्तो अभि संचरन्ति ॥१॥

जिस सोमरस को समस्त देवता तथा मनुज 'मधुर' कहकर सराहना करते हुए ग्रहण करते हैं; अत्यन्त स्वादिष्ट तथा सम्माननीय उस सोमरस का, हम श्रेष्ठ स्वाध्यायी और मेधावी याजकगण सेवन करते हैं॥१॥

अन्तश्च प्रागा अदितिर्भवास्यवयाता हरसो दैव्यस्य ।
इन्दविन्द्रस्य सख्यं जुषाणः श्रौष्टीव धुरमनु राय ऋध्याः ॥२॥

हे अविनाशी सोमरस ! आप देवताओं के अन्त: करण प्रवेश करके उनके क्रोध को नष्ट करते हैं । रथ में नियोजित होकर अश्व जिस प्रकार भार वहन करते हैं, उसी प्रकार आप इन्द्रदेव की मैत्री को ग्रहण करके याजकों को ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए संलग्न होते हैं॥२॥

अपाम सोमममृता अभूमागन्म ज्योतिरविदाम देवान् ।
किं नूनमस्मान्कृणवदरातिः किमु धूर्तिरमृत मर्त्यस्य ॥३॥

हे सोम ! आप यज्ञ की समृद्धि को बढ़ाने वाले हैं। हम यजमान आपके सहयोग से सूर्य रूप ज्योति से ज्योतित होकर अमरत्व को प्राप्त करें

। हम भूलोक से दिव्य लोक में आरोहण करें । हम देवों के ज्योतिर्मय स्वर्गलोक को देखने में समर्थ हों॥३॥

शं नो भव हृद आ पीत इन्दो पितेव सोम सूनवे सुशेवः ।
सखेव सख्य उरुशंस धीरः प्र ण आयुर्जीवसे सोम तारीः ॥४॥

हे सोम ! जिस प्रकार पिता के लिए पुत्र तथा मित्र के लिए मित्र सुखदायक होता है, उसी प्रकार आप (सोम) हमारे हदय के लिए सुखकारी हों । हे बहु प्रशंसित सोम ! आप बुद्धि से सम्पन्न हैं । आप हमारे जीवन में सुख और आयुष्य की वृद्धि करें॥४॥

इमे मा पीता यशस उरुष्यवो रथं न गावः समनाह पर्वसु ।
ते मा रक्षन्तु विस्रसश्चरित्रादुत मा स्रामाद्यवयन्त्विन्दवः ॥५॥

जिस प्रकार बैलों को रथ में नियोजित किया जाता है, उसी प्रकार यह सोमरस हमारे प्रत्येक अंग को कर्म में नियोजित करे । कीर्तिवान् यह सोम हम संरक्षण की अभिलाषा करने वालों की चारित्रिक-भष्टता से रक्षा करे और रोगों से मुक्त करे॥५॥

अग्निं न मा मथितं सं दिदीपः प्र चक्षय कृणुहि वस्यसो नः ।
अथा हि ते मद आ सोम मन्ये रेवाँ इव प्र चरा पुष्टिमच्छ ॥६॥

हे सोम ! पान किये जाने पर आप प्रज्वलित अग्नि के समान हमें आलोक और तेज से सम्पन्न करें। आप हमें ऐश्वर्यवान् बनायें । इसके बाद आपके आनन्द के लिए हम प्रार्थना करते हैं। आप ऐश्वर्यवान् के समान सब जगह गमन करें तथा पोषण प्राप्त करें॥६॥

इषिरेण ते मनसा सुतस्य भक्षीमहि पित्र्यस्येव रायः ।
सोम राजन्प्र ण आयूंषि तारीरहानीव सूर्यो वासराणि ॥७॥

हम कामनायुक्त मन से पैतृक सम्पत्ति के समान अभिषुत सोमरस का सेवन करेंगे । हे तेजसम्पन्न सोम ! जिस प्रकार सूर्यदेव दिन में प्रकाश की वृद्धि करते हैं, उसी प्रकार आप हमारे आयुष्य की वृद्धि करें॥७॥

सोम राजन्मृळया नः स्वस्ति तव स्मसि व्रत्यास्तस्य विद्धि ।
अलर्ति दक्ष उत मन्युरिन्दो मा नो अर्यो अनुकामं परा दाः ॥८॥

हे तेज सम्पन्न सोम ! हमारे हित के लिए आप हमें प्रसन्न करें । हम व्रतशील आपके ही हैं, इस तथ्य को आप समझें । हे सोम ! आप हमें विवेक युक्त मन्यु (अनीति से लड़ने की क्षमता) प्रदान करें । आप हमें रिपुओं के अधीन न करें॥८॥

त्वं हि नस्तन्वः सोम गोपा गात्रेगात्रे निषसत्था नृचक्षाः ।

यत्ते वयं प्रमिनाम व्रतानि स नो मृळ सुषखा देव वस्यः ॥९॥

हे सोम ! आप हमारे शरीर के संरक्षक तथा मनुष्यों के निरीक्षक हैं। आप हमारे अंग-प्रत्यंग में समाहित हो जायें। यद्यपि हम आपके व्रतों को भंग कर देते हैं (प्रयास करने पर भी निभा नहीं पाते); फिर भी आप हमारे अभिन्न सखा बनकर हमें सुख प्रदान करें॥९॥

ऋदूदरेण सख्या सचेय यो मा न रिष्येद्धर्यश्व पीतः ।
अयं यः सोमो न्यधाय्यस्मे तस्मा इन्द्रं प्रतिरमेम्यायुः ॥१०॥

श्रेष्ठ अश्वों वाले हे इन्द्रदेव ! जो सोमरस पान करने पर पीड़ा न पहुँचाये, हम उस सुपाच्य सोमरस की मित्रता प्राप्त करें। अपने पेट में पहुँचे हुए सोमरस को दीर्घकाल तक बने रहने की हम आपसे प्रार्थना करते हैं॥१०॥

अप त्या अस्थुरनिरा अमीवा निरत्रसन्तमिषीचीरभैषुः ।
आ सोमो अस्माँ अरुहद्विहाया अगन्म यत्र प्रतिरन्त आयुः ॥११॥

वह श्रेष्ठ सोमरस हमें मिल गया है। कठिनाई से दूर होने वाले और अत्यधिक पीड़ा पहुँचाने वाले रोग अब नष्ट हो जाएँ, जिससे हम भयरहित हो जाएँ। जहाँ पर सोम आयुष्य की वृद्धि करते हो, हम वहीं जाएँ॥११॥

यो न इन्दुः पितरो हृत्सु पीतोऽमर्त्यो मर्त्याँ आविवेश ।
तस्मै सोमाय हविषा विधेम मृळीके अस्य सुमतौ स्याम ॥१२॥

हे पितरो ! पान करने पर जो अविनाशी सोमरस मानवों के हृदय में प्रवेश करता है, उस सोमरस की आहुतियों के द्वारा हम आपकी सेवा करते हैं । हम उनकी श्रेष्ठ बुद्धि तथा अनुकम्पा को प्राप्त करें॥१२॥

त्वं सोम पितृभिः संविदानोऽनु द्यावापृथिवी आ ततन्थ ।
तस्मै त इन्दो हविषा विधेम वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥१३॥

हे सोम ! आप पितरों की शक्ति के साथ मिलकर दिव्यलोक और भूलोक तक विस्तार प्राप्त करते हैं । हम विष्य समर्पित करते हुए आपकी सेवा करते हैं, आप हमें धन-धान्य से सम्पन्न करें॥१३॥

त्रातारो देवा अधि वोचता नो मा नो निद्रा ईशत मोत जल्पिः ।
वयं सोमस्य विश्वह प्रियासः सुवीरासो विदथमा वदेम ॥१४॥

हे रक्षा करने वाले देवताओ ! आप हमें मीठे शब्दों में उपदेशित करें । दुःस्वप्न में अपने अधीन न करें । हम नित्य ही सोमरस के प्रियपात्र बने रहें । श्रेष्ठ सन्तानों से सम्पन्न होकर हम सोमरस को प्रार्थना करें॥१४॥

त्वं नः सोम विश्वतो वयोधास्त्वं स्वर्विदा विशा नृचक्षाः ।
त्वं न इन्द ऊतिभिः सजोषाः पाहि पश्चातादुत वा पुरस्तात् ॥१५॥

हे सोम ! आप हर तरफ से हमें अन्न प्रदान करने वाले हैं। आप सुखदाता तथा सर्वदर्शी हैं। आप हमारे अन्दर प्रवेश करें । हर्षित होकर अपने रक्षण-साधनों द्वारा हमें सुरक्षा प्रदान करें॥१५॥

# सूक्त ४९

ऋषि: प्रम्कण्व काण्व:
देवता – इन्द्र:। छंद: प्रगाथ

अभि प्र वः सुराधसमिन्द्रमर्च यथा विदे ।
यो जरितृभ्यो मघवा पुरूवसुः सहस्रेणेव शिक्षति ॥१॥

हे ऋत्विजो ! ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव स्तुति करने वालों को अनेक प्रकार के श्रेष्ठ धनों से सम्पन्न बनाते हैं । अतः उत्तम धन की प्राप्ति के लिए जैसे भी संभव हो, उनकी (इन्द्रदेव की) अर्चना करो॥१॥

शतानीकेव प्र जिगाति धृष्णुया हन्ति वृत्राणि दाशुषे ।
गिरेरिव प्र रसा अस्य पिन्विरे दत्राणि पुरुभोजसः ॥२॥

जिस प्रकार सेनापति, शत्रु सेना पर चढ़ाई करते समय अपनी सेना का संरक्षण करता है, उसी प्रकार श्रेष्ठ कार्यों में अपने साधन लगाने

वालों का इन्द्रदेव संरक्षण करते हैं। ऐसे साधन, लोगों को तृप्तिदायक पर्वत के जेल (झरने) के समान लाभदायक होते हैं॥२॥

आ त्वा सुतास इन्दवो मदा य इन्द्र गिर्वणः ।
आपो न वज्रिन्नन्वोक्यं सरः पृणन्ति शूर राधसे ॥३॥

हे वज्रधारी, शूरवीर इन्द्रदेव ! आनन्द-प्रदायक सोमरस आपके लिए ही अभिषुत किया गया है । जिस प्रकार पानी सरोवर को भरता है, उसी प्रकार यह सोमरस आपको परिपूर्ण (तृप्त करता है॥३॥

अनेहसं प्रतरणं विवक्षणं मध्वः स्वादिष्ठमीं पिब ।
आ यथा मन्दसानः किरासि नः प्र क्षुद्रेव त्मना धृषत् ॥४॥

रिपुओं का विनाश करने वाले है इन्द्रदेव ! आप इस दोषमुक्त और सराहनीय सोमरस का पान करें । हर्षित होकर आप हमें क्षुद्र की तरह (बहुत क्षुद्र-छोटी वस्तु समझकर) ऐश्वर्य प्रदान करें॥४॥

आ नः स्तोममुप द्रवद्धियानो अश्वो न सोतृभिः ।
यं ते स्वधावन्त्स्वदयन्ति धेनव इन्द्र कण्वेषु रातयः ॥५॥

हे तृप्ति देने वाले इन्द्रदेव ! आपकी धेनुएँ (गौएँ अथवा धारण सामर्थ्य ) तथा कण्व वंशियों को दिये गए साधन, जिस (यज्ञ) को श्रेष्ठ बनाते

हैं; सोम अभिषव करने वालों के द्वारा की हुई स्तुतियों से प्रेरित होकर, अश्व के सदृश द्रुतगति से आप वहाँ पधारें॥५॥

उग्रं न वीरं नमसोप सेदिम विभूतिमक्षितावसुम् ।
उद्रीव वज्रिन्नवतो न सिञ्चते क्षरन्तीन्द्र धीतयः ॥६॥

है वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप, नष्ट न होने वाले अनेकों प्रकार के ऐश्वर्यों से सम्पन्न हैं। जिस प्रकार मनुष्य पराक्रमी व्यक्ति का आश्रय ग्रहण करते हैं, उसी प्रकार हम विनयपूर्वक आपके पास आते हैं । जिस प्रकार कुएँ के जल से खेतों की सिंचाई होती है, उसी प्रकार हमारे हाथ की अँगुलियाँ आपके निमित्त सोमरस अभिषुत करती हैं॥६॥

यद्ध नूनं यद्वा यज्ञे यद्वा पृथिव्यामधि ।
अतो नो यज्ञमाशुभिर्महेमत उग्र उग्रेभिरा गहि ॥७॥

श्रेष्ठ बुद्धि-सम्पन्न हे वीर इन्द्रदेव !आप यज्ञ-मण्डप में विद्यमान हों, धरती पर विद्यमान हों या अन्य किसी स्थान पर विद्यमान हों, आप हमारे यज्ञ-स्थल पर अपने बलशाली तथा द्रुतगामी अश्वों द्वारा अवश्य पधारें॥७॥

अजिरासो हरयो ये त आशवो वाता इव प्रसक्षिणः ।
येभिरपत्यं मनुषः परीयसे येभिर्विश्वं स्वर्दृशे ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आपके द्रुतगामी तथा वायु के सदृश वेगवान् अश्व रिपुओं पर विजय प्राप्त करने वाले हैं । आप उनके द्वारा मनुष्यों के यज्ञों को तथा समस्त लोकों को देखने के लिए गमन करते हैं॥८॥

एतावतस्त ईमह इन्द्र सुम्नस्य गोमतः ।
यथा प्रावो मघवन्मेध्यातिथिं यथा नीपातिथिं धने ॥९॥

है इन्द्रदेव ! जिस प्रकार आपने ऋष मेध्यातिथि (मेधा के अनुगामी) और नीपातिथि (नीतिमार्ग के अनुगामी) को अपार धन देकर उनकी रक्षा की थीं, उसी प्रकार आप हमें गौओं, अश्वों से सम्पन्न वैभव प्रदान करें । हम आप से याचना करते हैं॥९॥

यथा कण्वे मघवन्त्रसदस्यवि यथा पक्थे दशव्रजे ।
यथा गोशर्ये असनोर्ऋजिश्वनीन्द्र गोमद्धिरण्यवत् ॥१०॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! आपने जिस प्रकार कण्व, दशवज (दस इन्द्रियों के नियामक), त्रसदस्यु (दस्युओं को त्रास देने वाले), पक्थ (परिपक्व) तथा ऋजिश्वी (जुमार्गगामी) को गौओं (पोषण तथा स्वर्ण (वैभव) से सम्पन्न ऐश्वर्य प्रदान किया, उसी प्रकार हमें भी प्रदान करें॥१०॥

# सूक्त ५०

ऋषिः पुष्टिगुः काण्वः
देवता – इन्द्रः। छंदः प्रगाथ

प्र सु श्रुतं सुराधसमर्चा शक्रमभिष्टये ।
यः सुन्वते स्तुवते काम्यं वसु सहस्रेणेव मंहते ॥१॥

हे स्तोताओ ! जो इन्द्रदेव सोम यज्ञ करने वालों तथा स्तोताओं को सहस्रों प्रकार के इच्छित ऐश्वर्य प्रदान करते हैं, उन बलशाली तथा ऐश्वर्यशाली, यशस्वी इन्द्रदेव की ; वाञ्छित सम्पत्ति प्राप्ति के निमित्त आप विधिवत् प्रार्थना करें॥१॥

शतानीका हेतयो अस्य दुष्टरा इन्द्रस्य समिषो महीः ।
गिरिर्न भुज्मा मघवत्सु पिन्वते यदीं सुता अमन्दिषुः ॥२॥

जब सुसंस्कृत सोमरस उन इन्द्रदेव को आनन्दित करता है, तब वे सम्पत्तिवानों को पर्वत के सदृश विशाल पदार्थों का भण्डार प्रदान

करके, उन्हें तुष्ट करते हैं। उनके पास अडिग रहने वाले तथा भली प्रकार फेंके जाने वाले सैकड़ों अस्त्र-शस्त्र हैं॥२॥

यदीं सुतास इन्दवोऽभि प्रियममन्दिषुः ।
आपो न धायि सवनं म आ वसो दुघा इवोप दाशुषे ॥३॥

सबको निवास प्रदान करने वाले हे इन्द्रदेव !अभिषुत सोमरस ने जब आपको आनन्दित किया, तब आपने हम आहुति प्रदाताओं के यज्ञ-कर्म को दूध देने वाली गौओं तथा जल के सदृश (सबको तृप्ति देने वाला) बनाया॥३॥

अनेहसं वो हवमानमूतये मध्वः क्षरन्ति धीतयः ।
आ त्वा वसो हवमानास इन्दव उप स्तोत्रेषु दधिरे ॥४॥

हे याजको ! अपनी सुरक्षा के लिए आप उन इन्द्रदेव के निमित्त सोमरस अभिषुत करते हैं, जो अत्यन्त सराहनीय तथा रिपुओं के द्वारा अजेय हैं। सबको निवास प्रदान करने वाले हे इन्द्रदेव ! यज्ञ-मण्डप में सराहनीय सोमरस आपके सम्मुख प्रस्तुत किया जाता है॥४॥

आ नः सोमे स्वध्वर इयानो अत्यो न तोशते ।
यं ते स्वदावन्त्स्वदन्ति गूर्तयः पौरे छन्दयसे हवम् ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारी स्तुतियों की अभिलाषा करते हैं, वे आपको हर्षित करती हैं । अश्व के सदृश वेगपूर्वक गमन करते हुए आप हमारे सोमयज्ञ में पधारें तथा रिपुओं (दुष्प्रवृत्तियों) का विनाश करे॥५॥

प्र वीरमुग्रं विविचिं धनस्पृतं विभूतिं राधसो महः ।
उद्रीव वज्रिन्नवतो वसुत्वना सदा पीपेथ दाशुषे ॥६॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव !आप अत्यन्त पराक्रमी तथा अनेकों प्रकार के ऐश्वर्यों से सम्पन्न हैं । हम आपसे प्रचुर ऐश्वर्य की याचना करते हैं । आप पानी से युक्त जलकुण्ड के सदृश, हम हवि-प्रदाता यजमानों को सन्तुष्ट करते हैं॥६॥

यद्ध नूनं परावति यद्वा पृथिव्यां दिवि ।
युजान इन्द्र हरिभिर्महेमत ऋष्व ऋष्वेभिरा गहि ॥७॥

महान् बुद्धि सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! आप द्युलोक में विद्यमान हों, भूलोक अथवा अन्यत्र किसी दूरे प्रदेश में हों, अपने शक्तिशाली अश्वों को नियोजित करके हमारे समीप शीघ्र हीं पधारें॥७॥

रथिरासो हरयो ये ते अस्रिध ओजो वातस्य पिप्रति ।
येभिर्नि दस्युं मनुषो निघोषयो येभिः स्वः परीयसे ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आपके रथ में नियोजित होने वाले अश्व बाधाओं से रहित हैं । आप उनके द्वारा रिपुओं को प्रताड़ित करते हैं तथा स्वर्ग-लोक में चारों ओर गमन करते हैं। आपके अश्व वायु में व्याप्त ओज को आत्मसात् करते हैं॥८॥

एतावतस्ते वसो विद्याम शूर नव्यसः ।
यथा प्राव एतशं कृत्व्ये धने यथा वशं दशव्रजे ॥९॥

सबको निवास प्रदान करने वाले शूरवीर हे इन्द्रदेव ! आपने ऐश्वर्य के लिए 'एतश' तथा 'दशवज' श्रेष्ठ को संरक्षित किया। आप ऐश्वर्यवान् तथा प्रार्थनीय हैं। हम आपको भली-भाँति जानते हैं॥९॥

यथा कण्वे मघवन्मेधे अध्वरे दीर्घनीथे दमूनसि ।
यथा गोशर्ये असिषासो अद्रिवो मयि गोत्रं हरिश्रियम् ॥१०॥

वज्र को धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार आपने यज्ञ-स्थल पर 'कण्व' ऋषि, 'दीर्घनीथ', तथा 'गोशर्य' को रक्षित किया था, उसी प्रकार अश्वों द्वारा पधारकर हमारी सुरक्षा करें॥१०॥

## सूक्त ५१

ऋषिः श्रुष्टिगुः काण्वः
देवता – इन्द्रः। छंदः प्रगाथः

यथा मनौ सांवरणौ सोममिन्द्रापिबः सुतम् ।
नीपातिथौ मघवन्मेध्यातिथौ पुष्टिगौ श्रुष्टिगौ सचा ॥१॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! जिस प्रकार आपने 'सांवरण मनु' के यज्ञ में अभिषुत सोमरस का पान किया था, उसी प्रकार बलशाली गौओं से युक्त 'मेधातिथि 'नीपातिथि', 'पुष्टिगु' तथा 'श्रुष्टिगु' आदि ऋषियों के यज्ञ में भी सोमपान किया करें॥१॥

पार्षद्वाणः प्रस्कण्वं समसादयच्छयानं जिव्रिमुद्धितम् ।
सहस्राण्यसिषासद्गवामृषिस्त्वोतो दस्यवे वृकः ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! उच्च स्थान में शयन करने वाले ऋषि 'प्रस्कण्व' को जब 'पार्षद्वाण' के ऊपर स्थापित किया गया, उस समय आपने उनकी सुरक्षा करके सहस्रों गौओं की रक्षा की थी॥२॥

य उक्थेभिर्न विन्धते चिकिद्य ऋषिचोदनः ।
इन्द्रं तमच्छा वद नव्यस्या मत्यरिष्यन्तं न भोजसे ॥३॥

(ऋषि श्रुष्टिगु स्वयं के प्रति कहते हैं) जो इन्द्रदेव स्तोत्रों द्वारा सभी के ज्ञाता तथा प्रषियों के प्रेरक हैं, उनके निमित्त अभिनव स्तुतियाँ करें । उनसे दिव्य पोषण की कामना करें॥३॥

यस्मा अर्कं सप्तशीर्षाणमानृचुस्त्रिधातुमुत्तमे पदे ।
स त्विमा विश्वा भुवनानि चिक्रददादिज्जनिष्ट पौंस्यम् ॥४॥

जिन इन्द्रदेव ने समस्त लोकों का सृजन करके अपनी शक्ति को प्रकट किया। उनके लिए स्तोतागणों ने सप्त शीर्ष (सात व्याहतियों ) तथा तीन धारक क्षमताओं से युक्त स्तोत्रों का वाचन किया॥४॥

यो नो दाता वसूनामिन्द्रं तं हूमहे वयम् ।
विद्मा ह्यस्य सुमतिं नवीयसीं गमेम गोमति व्रजे ॥५॥

हम अपनी सहायता के लिए ऐश्वर्य प्रदाता इन्द्रदेव को आहूत करते हैं । हम जानी हुई उनकी अभिनव प्रार्थना करके श्रेष्ठ गौओं से सम्पन्न गोशाला को प्राप्त करें॥५॥

यस्मै त्वं वसो दानाय शिक्षसि स रायस्पोषमश्नुते ।
तं त्वा वयं मघवन्निन्द्र गिर्वणः सुतावन्तो हवामहे ॥६॥

सबको आवास प्रदान करने वाले हे इन्द्रदेव ! जिस व्यक्ति को आप दान देने का उपदेश देते हैं, वह व्यक्ति ऐश्वर्य से पोषित होता है । हे प्रार्थनीय तथा धनवान् इन्द्रदेव ! हम याजकगण अपनी सहायता के निमित्त आपका आवाहन करते हैं॥६॥

कदा चन स्तरीरसि नेन्द्र सश्चसि दाशुषे ।
उपोपेन्नु मघवन्भूय इन्नु ते दानं देवस्य पृच्यते ॥७॥

है इन्द्रदेव ! आप कभी सृष्टि को विखण्डित नहीं करते। आप याजक के सहयोगी बनें। आप देवता हैं। आपका दान बार-बार आता है, जो (आशा से) अधिक ही प्राप्त होता है॥७॥

प्र यो ननक्षे अभ्योजसा क्रिविं वधैः शुष्णं निघोषयन् ।
यदेदस्तम्भीत्प्रथयन्नमूं दिवमादिज्जनिष्ट पार्थिवः ॥८॥

जिन इन्द्रदेव ने अपनी सामर्थ्य से स्वर्ग लोक को रोकने वाले 'शुष्ण' नामक असुर का अपने आयुधों द्वारा वध किया, उन्होंने ही धरती के समस्त पदार्थों को उत्पन्न किया॥८॥

यस्यायं विश्व आर्यो दासः शेवधिपा अरिः ।
तिरश्चिदर्ये रुशमे परीरवि तुभ्येत्सो अज्यते रयिः ॥९॥

सभी आर्य एवं दास जिसके धन के रक्षक हैं, जो 'रुशम' के लिए 'पवीर' (रथ नेमि) की तरह अनुकूल होते हैं, वे ही इन्द्रदेव तुम्हारे लिए गुप्त धन प्रदायक होते हैं॥९॥

तुरण्यवो मधुमन्तं घृतश्चुतं विप्रासो अर्कमानृचुः ।
अस्मे रयिः पप्रथे वृष्ण्यं शवोऽस्मे सुवानास इन्दवः ॥१०॥

शीघ्र कार्य करने वाले विप्रगण मधुर घृतसिक्तं पूजनीय मंत्रों का उच्चारण करते हैं । इससे हमारे लिए धन, वीर्य (पौरुष) तथा सोम की सिद्धि होती है॥१०॥

# सूक्त ५२

ऋषि: आयु: काण्व:
देवता – इन्द्र:। छंद: प्रगाथ:

यथा मनौ विवस्वति सोमं शक्रापिबः सुतम् ।
यथा त्रिते छन्द इन्द्र जुजोषस्यायौ मादयसे सचा ॥१॥

सामर्थ्य- सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार आपने विवस्वान् मनु द्वारा प्रदत्त अभिषुत सोमरस का पान किया तथा त्रित ऋषि के छन्दों का श्रवण किया, उसी प्रकार आप मुझ'आयुष' के साथ आसीन होकर हर्षित हों॥१॥

पृषध्रे मेध्ये मातरिश्वनीन्द्र सुवाने अमन्दथाः ।
यथा सोमं दशशिप्रे दशोण्ये स्यूमरश्मावृजूनसि ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार आप सोम अभिषव करने वाले मेध्य, दशशिप्र, पृषध तथा मातरिश्वा द्वारा प्रदत्त सोमरस का पान करके

हर्षित हुए, उसी प्रकार आप स्यूमरश्मि, जूनस तथा दशोण्य ऋषियों के यज्ञ में सोमरस का पान करके हर्षित हों॥२॥

य उक्था केवला दधे यः सोमं धृषितापिबत् ।
यस्मै विष्णुस्त्रीणि पदा विचक्रम उप मित्रस्य धर्मभिः ॥३॥

रिपुओं का संहार करने वाले इन्द्रदेव केवल स्तोत्रों को ग्रहण करते हैं तथा सोमरस पान करते हैं। जिसके निमित्त विष्णुदेव ने मित्रवत् कर्तव्य की पूर्ति के लिए तीन पादों से सब कुछ (तीनों लोकों को) नाप लिया था, वे इन्द्रदेव हमें सुख प्रदान करें॥३॥

यस्य त्वमिन्द्र स्तोमेषु चाकनो वाजे वाजिञ्छतक्रतो ।
तं त्वा वयं सुदुघामिव गोदुहो जुहूमसि श्रवस्यवः ॥४॥

शक्तिशाली तथा शतकर्मा हे इन्द्रदेव ! आप यज्ञ में स्तोताओं द्वारा की गई स्तुतियों से सन्तुष्ट होते हैं। अन्न की कामना करने वाले हम याजक आपको आहुतियाँ समर्पित करते हुए उसी प्रकार सन्तुष्ट करते हैं, जिस प्रकार ग्वाला गौओं को चारा ( आहार) प्रदान करके सन्तुष्ट करता हैं॥४॥

यो नो दाता स नः पिता महाँ उग्र ईशानकृत् ।
अयामन्नुग्रो मघवा पुरूवसुर्गोरश्वस्य प्र दातु नः ॥५॥

पराक्रमी तथा शासन करने वाले महान् इन्द्रदेव हमारे पिता तुल्य हैं। वे हमें ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं। वे रणक्षेत्र से पीछे न हटने वाले अत्यन्त विकराल योद्धा हैं। अनेकों को निवास देने वाले वे इन्द्रदेव हमें गौएँ तथा अश्व प्रदान करें॥५॥

यस्मै त्वं वसो दानाय मंहसे स रायस्पोषमिन्वति ।
वसूयवो वसुपतिं शतक्रतुं स्तोमैरिन्द्रं हवामहे ॥६॥

सभी को आश्रय प्रदान करने वाले शतकर्मा हे इन्द्रदेव ! आप जिस व्यक्ति को दान देने की इच्छा करते हैं, वहीं व्यक्ति ऐश्वर्य से सम्पन्न होकर आपका संरक्षण प्राप्त करता है । ऐश्वर्य की कामना करने वाले स्तोत्रों से आपका आवाहन करते हैं॥६॥

कदा चन प्र युच्छस्युभे नि पासि जन्मनी ।
तुरीयादित्य हवनं त इन्द्रियमा तस्थावमृतं दिवि ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आप दो प्रकार से जन्म लेने वाले हैं। आप कभी प्रमत्त नहीं होते (सदैव जागरूक रहते हैं ) । हे आदित्य (अदिति पुत्र) ! आप जगत् पालक हैं। शरीर में इन्द्रियाँ आपकी प्रतीक हैं तथा अमर द्युलोक में आप (जगदात्मा) का आवाहन करते हैं॥७॥

यस्मै त्वं मघवन्निन्द्र गिर्वणः शिक्षो शिक्षसि दाशुषे ।
अस्माकं गिर उत सुष्टुतिं वसो कण्ववच्छृणुधी हवम् ॥८॥

धनवान्, प्रार्थनीय तथा आश्रयदाता हे इन्द्रदेव ! आप दानियों को जो ऐश्वर्य प्रदान करते हैं, उसके लिए हम भी आपकी स्तुति करते हैं। जिस प्रकार आपने कण्व ऋषि की स्तुतियों को सुना था, उसी प्रकार हमारी भी प्रार्थना सुनें॥८॥

अस्तावि मन्म पूर्व्यं ब्रह्मेन्द्राय वोचत ।
पूर्वीर्ऋतस्य बृहतीरनूषत स्तोतुर्मेधा असृक्षत ॥९॥

हे ऋत्विजो ! आप इन्द्रदेव के लिए सनातन कण्ठस्थ स्तोत्रों का पाठ करें । पूर्व यज्ञों में बृहती छन्दमें सामगान किया था। इससे स्तोताओं की मेधा में वृद्धि होती है॥९॥

समिन्द्रो रायो बृहतीरधूनुत सं क्षोणी समु सूर्यम् ।
सं शुक्रासः शुचयः सं गवाशिरः सोमा इन्द्रममन्दिषुः ॥१०॥

जिन इन्द्रदेव ने द्युलोक, पृथ्वी लोक, सूर्य तथा प्रचुर सम्पत्ति का सृजन किया, उन्हें गौ-दुग्ध युक्त तेजस्वी एवं शुद्ध सोमरस ने हर्षित किया॥१०॥

# सूक्त ५३

ऋषि: मेध्व: काण्व:
देवता – इन्द्र:। छंद: प्रगाथ:

उपमं त्वा मघोनां ज्येष्ठं च वृषभाणाम् ।
पूर्भित्तमं मघवन्निन्द्र गोविदमीशानं राय ईमहे ॥१॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! आप सम्पत्तिवानों तथा बलवानों में सर्वश्रेष्ठ हैं तथा शत्रुओं की पुरियों को नष्ट करने वाले हैं । गौओं को प्रदान करने वाले आप सभी के शासक हैं। हम भी आपसे ऐश्वर्य की याचना करते हैं॥१॥

य आयुं कुत्समतिथिग्वमर्दयो वावृधानो दिवेदिवे ।
तं त्वा वयं हर्यश्वं शतक्रतुं वाजयन्तो हवामहे ॥२॥

शतकर्मा, हरि संज्ञक अश्वों वाले जिन इन्द्रदेव ने आयु, अतिथिग्व तथा कुत्स को नित्य सामर्थ्य प्रदान करके महान् बनायो । अपनी सहायता

के लिए हम उनका आवाहन करते हैं तथा उनसे बल की कामना करते हैं॥२॥

आ नो विश्वेषां रसं मध्वः सिञ्चन्त्वद्रयः ।
ये परावति सुन्विरे जनेष्वा ये अर्वावतीन्दवः ॥३॥

दूर या निकट के प्रदेशों में जिस सोम की प्रतिष्ठा है, उसे हम सबके लिए (ऋत्विग्गण) अद्रि (पत्थर) से निचोड़कर निकालें॥३॥

विश्वा द्वेषांसि जहि चाव चा कृधि विश्वे सन्वन्त्वा वसु ।
शीष्टेषु चित्ते मदिरासो अंशवो यत्रा सोमस्य तृम्पसि ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! जिस याजक के सोमरस का पान करके आप सन्तुष्ट होते हैं, उसके समस्त शत्रुओं को परास्त करके उसकी सुरक्षा करें, समस्त मानव उसे ऐश्वर्य प्रदान करें। उसके द्वारा तैयार किया गया सोमरस आपके लिए हितकारी हो॥४॥

इन्द्र नेदीय एदिहि मितमेधाभिरूतिभिः ।
आ शंतम शंतमाभिरभिष्टिभिरा स्वापे स्वापिभिः ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! शान्तिप्रदायक, सुखदायी कामनाओं के साथ श्रेष्ठ बन्धुओं सहित आप हमारे समीप पधारें। आप मेधावी तथा संरक्षण की कामना करने वालों के साथ पधारें॥५॥

आजितुरं सत्पतिं विश्वचर्षणिं कृधि प्रजास्वाभगम् ।
प्र सू तिरा शचीभिर्ये त उक्थिनः क्रतुं पुनत आनुषक् ॥६॥

समस्त मनुष्यों के हितैषी तथा सत्पात्रों के पालनकर्ता हे इन्द्रदेव ! आप प्रजाओं में संव्याप्त युद्धों को जीतने वाले हैं। आप अपने स्तोताओं को धन प्रदान करके अपनी सामर्थ्य से उन्हें समृद्ध बनाएँ त। यज्ञादि कार्यों को सम्पादित करें॥६॥

यस्ते साधिष्ठोऽवसे ते स्याम भरेषु ते ।
वयं होत्राभिरुत देवहूतिभिः ससवांसो मनामहे ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! हम अपनी सुरक्षा के लिए आपका आवाहन करते हैं । रणक्षेत्र में हम आपके आश्रित होकर रहें । अपनी स्तुतियों द्वारा अन्न की कामना करने वाले हम (याजक) आपकी उपासना करते हैं॥७॥

अहं हि ते हरिवो ब्रह्म वाजयुराजिं यामि सदोतिभिः ।
त्वामिदेव तममे समश्वयुर्गव्युरग्रे मथीनाम् ॥८॥

अश्वों से सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! गौओं, अश्वों तथा अन्न की कामना करने वाले हम (याजक) आपके द्वारा संरक्षित होकर भंयकर संग्राम में भी चले जाते हैं । हम भयभीत होने पर पराक्रमियों में सर्वश्रेष्ठ, आपकी शरण में आते हैं॥८॥

# सूक्त ५४

ऋषि: मातरिश्वा काण्व:
देवता – इन्द्र: ३-४ विश्वे देवा। छंद: प्रगाथ

एतत्त इन्द्र वीर्यं गीर्भिर्गृणन्ति कारवः ।
ते स्तोभन्त ऊर्जमावन्घृतश्चुतं पौरासो नक्षन्धीतिभिः ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! विग्गण आपकी सामर्थ्य का वर्णन करते हैं। उन्होंने प्रार्थनाओं द्वारा आपसे अन्न तथा घृत प्रदान करने वाली गौएँ प्राप्त कीं॥१॥

नक्षन्त इन्द्रमवसे सुकृत्यया येषां सुतेषु मन्दसे ।
यथा संवर्ते अमदो यथा कृश एवास्मे इन्द्र मत्स्व ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! जिनके सोमयागों द्वारा आप हर्षित होते हैं, वे याजक अपनी सुरक्षा के लिए सत्कर्मों द्वारा आपका वरण करते हैं। जिस प्रकार आप 'संवर्त' तथा 'कृश' ऋषि के यज्ञ में हर्षित हुए थे, उसी प्रकार हमारे यज्ञ में भी आनन्दित हों॥२॥

आ नो विश्वे सजोषसो देवासो गन्तनोप नः ।
वसवो रुद्रा अवसे न आ गमञ्छृण्वन्तु मरुतो हवम् ॥३॥

मित्रभाव से रहने वाले समस्त देवगण हमारे समीप पधारें । संरक्षण के लिए वसु और रुद्रदेव हमारे समीप पधारें तथा मरुद्गण हमारी स्तुतियों का श्रवण करें॥३॥

पूषा विष्णुर्हवनं मे सरस्वत्यवन्तु सप्त सिन्धवः ।
आपो वातः पर्वतासो वनस्पतिः शृणोतु पृथिवी हवम् ॥४॥

विष्णुदेव, सरस्वती, पूषा और सप्त-सरिताएँ हमारे यज्ञ को संरक्षण प्रदान करें । वनस्पति, जल, वायु, पर्वत तथा धरित्री हमारी स्तुतियों को सुनें॥४॥

यदिन्द्र राधो अस्ति ते माघोनं मघवत्तम ।
तेन नो बोधि सधमाद्यो वृधे भगो दानाय वृत्रहन् ॥५॥

हे वृत्रहन्ता, ऐश्वर्यवान्, वन्दनीय इन्द्रदेव ! आप अपने श्रेष्ठ धन के साथ उल्लसित होकर दान देने के लिए (हमारी ओर) बढ़े॥५॥

आजिपते नृपते त्वमिद्धि नो वाज आ वक्षि सुक्रतो ।

वीती होत्राभिरुत देववीतिभिः ससवांसो वि शृण्विरे ॥६॥

युद्ध को नियंत्रित करने वाले तथा सत्कर्म करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप प्रजाजनों का पोषण करते हैं तथा रणक्षेत्र में हमें संरक्षित करते हैं। देवताओं के निमित्त यजन करने वाले याजक अन्न प्राप्ति की इच्छा करते हुए आपकी प्रार्थना करते हैं॥६॥

सन्ति ह्यर्य आशिष इन्द्र आयुर्जनानाम् ।
अस्मान्नक्षस्व मघवन्नुपावसे धुक्षस्व पिप्युषीमिषम् ॥७॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! मनुष्यों का जीवन तथा धन आपके आश्रित है । संरक्षित करने के लिए आप हमें अपने ही पास रखें तथा पोषक अन्न प्रदान करें॥७॥

वयं त इन्द्र स्तोमेभिर्विधेम त्वमस्माकं शतक्रतो ।
महि स्थूरं शशयं राधो अह्रयं प्रस्कण्वाय नि तोशय ॥८॥

हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! आप हमारे हैं और हम आपके । स्तोत्रों के द्वारा हम आपकी प्रार्थना करते हैं। हे इन्द्रदेव ! आप मुझ प्रस्कण्व ऋष को ऐसी सम्पत्ति प्रदान करें, जो महान् , निन्दारहित तथा सदैव अक्षुण्ण हो॥८॥

# सूक्त ५५

ऋषि: कृश: काण्व:
देवता – इन्द्र: प्रस्कण्वश्च । छंद: गायत्री, ३,५, अनुष्टुप :

भूरीदिन्द्रस्य वीर्यं व्यख्यमभ्यायति ।
राधस्ते दस्यवे वृक ॥१॥

दुष्टों का विनाश करने वाले हे इन्द्रदेव ! आपका श्रेष्ठ शौर्य ही चारों ओर आलोकित हो रहा है। आपका ऐश्वर्य हमें भी प्राप्त हो ॥१॥

शतं श्वेतास उक्षणो दिवि तारो न रोचन्ते ।
मह्ना दिवं न तस्तभुः ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आपके द्वारा प्रदत्त सैकड़ों श्वेत वृषभ दिव्यलोक में तारों के सदृश सुशोभित हो रहे हैं। आप अपनी सामर्थ्य से दिव्यलोक को धारण किये हुए हैं॥२॥

शतं वेणूञ्छतं शुनः शतं चर्माणि म्लातानि ।
शतं मे बल्बजस्तुका अरुषीणां चतुःशतम् ॥३॥

उन इन्द्रदेव ने कृश ऋषि को सैकड़ों श्वान, वेणु, मुलायम खाल, घास के गट्ठर तथा लालवर्ण के चार अश्व प्रदान किये॥३॥

सुदेवाः स्थ काण्वायना वयोवयो विचरन्तः ।
अश्वासो न चङ्क्रमत ॥४॥

हे कण्ववंशियो ! आप (आकाश में ) पक्षियों के समान तथा (भूमिपर) अश्वों के समान विचरण करते हुए महान् देवत्व से सम्पन्न बने॥४॥

आदित्साप्तस्य चर्किरन्नानूनस्य महि श्रवः ।
श्यावीरतिध्वसन्पथश्चक्षुषा चन संनशे ॥५॥

हे स्तोताओ ! आप सप्त लोकों के अधिष्ठाता इन्द्रदेव की प्रार्थना करें । श्यामवर्ण के पथ को पार करते हुए आप उन्हें आँखों से देख सकते हैं। पूर्णता को प्राप्त उनकी कीर्ति महान् है॥५॥

# सूक्त ५६

ऋषि: पृषध्र काण्व:
देवता – इन्द्र, प्रस्कण्वश्च , ५ अग्निसूर्यो । छंद: गायत्री, ५ पंक्ति

प्रति ते दस्यवे वृक राधो अदर्श्यह्रयम् ।
द्यौर्न प्रथिना शवः ॥१॥

रिपुओं के लिए व्याघ्र के समान हे इन्द्रदेव ! आपका पवित्र ऐश्वर्य उन रिपुओं के लिए विपरीत प्रतीत होता हैं । आपकी सामर्थ्य दिव्यलोक के समान महान् है॥१॥

दश मह्यं पौतक्रतः सहस्रा दस्यवे वृकः ।
नित्याद्रायो अमंहत ॥२॥

सत्कर्म करने वाले हे इन्द्रदेव ! हमारे लिए आपने दस सहस्र रिपुओं का वध कर दिया तथा उनके अविनाशी धनं का भण्डार हमें प्रदान किया॥२॥

शतं मे गर्दभानां शतमूर्णावतीनाम् ।
शतं दासाँ अति स्रजः ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आपने मुझ (पृषध) को सैकड़ों भेड़े, गधे और सेवक प्रदान किये॥३॥

तत्रो अपि प्राणीयत पूतक्रतायै व्यक्ता ।
अश्वानामिन्न यूथ्याम् ॥४॥

जो मनुष्य श्रेष्ठ बुद्धि से सम्पन्न हैं, उनके ही पास वे इन्द्रदेव अश्वों के झुण्ड के समान ऐश्वर्य पहुँचाते हैं॥४॥

अचेत्यग्निश्चिकितुर्हव्यवाट् स सुमद्रथः ।
अग्निः शुक्रेण शोचिषा बृहत्सूरो अरोचत दिवि सूर्यो अरोचत ॥५॥

हव्य को देवताओं के सन्निकट ले जाने वाले रथ के समान ज्ञान-सम्पन्न अग्निदेव प्रकट हुए हैं। जब वे अपने उज्ज्वल आलोक से धरती पर सुशोभित होते हैं, तब द्युलोक में सूर्यदेव भी आलोकित होने लगते हैं॥५॥

# सूक्त ५७

ऋषि: मेध्य: काण्व:
देवता – आश्विनौ । छंद: त्रिष्टुप

युवं देवा क्रतुना पूर्व्येण युक्ता रथेन तविषं यजत्रा ।
आगच्छतं नासत्या शचीभिरिदं तृतीयं सवनं पिबाथः ॥१॥

सत्य का आचरण करने वाले सम्माननीय हे अश्विनीकुमारो ! आप अपने सामर्थ्यपूर्ण कर्मों से सम्पन्न होकर रथ द्वारा यज्ञ-स्थल पर पधारें । आप तीसरे सवन में सोमरस का पान करें॥१॥

युवां देवास्त्रय एकादशासः सत्याः सत्यस्य दद्दशे पुरस्तात् ।
अस्माकं यज्ञं सवनं जुषाणा पातं सोममश्विना दीद्यग्नी ॥२॥

अग्नि के समान तेज-सम्पन्न हे अश्विनीकुमारो ! आप हमारे यज्ञ और सवन में पधारकर सोमरस का पान करें । आपके साथ सत्य का पालन करने वाले तैंतीस देवों का समूह भी है॥२॥

पनाय्यं तदश्विना कृतं वां वृषभो दिवो रजसः पृथिव्याः ।
सहस्रं शंसा उत ये गविष्टौ सर्वाँ इत्ताँ उप याता पिबध्यै ॥३॥

हे अश्विनीकुमारो ! अन्तरिक्ष से पृथ्वी पर जल की वृष्टि करने वाला आपका कार्य अत्यन्त सराहनीय है । गौओं को खोजने जैसे सहस्रों पुण्य कार्यों के समय, सोमरस पान करने के लिए आप यहाँ पधारें॥३॥

अयं वां भागो निहितो यजत्रेमा गिरो नासत्योप यातम् ।
पिबतं सोमं मधुमन्तमस्मे प्र दाश्वांसमवतं शचीभिः ॥४॥

पूजने योग्य हे अश्विनीकुमारो ! स्तुतियों को सुनने के निमित्त आप दोनों हमारे निकट पधारें। आपके लिए यह सोम भाग रखा हुआ है । मुझ हवि-प्रदाता को अपनी सामर्थ्य से संरक्षित करें। हमारे हित के लिए मधुर सोमरस का पान करें॥४॥

## ऋग्वेद – अष्टम मंडल

## *सूक्त ५८*

ऋषि: मेध्य काण्व:
देवता – विश्वे देवा: १ ऋत्विजो । छंद: त्रिष्टुप

यमृत्विजो बहुधा कल्पयन्तः सचेतसो यज्ञमिमं वहन्ति ।
यो अनूचानो ब्राह्मणो युक्त आसीत्का स्वित्तत्र यजमानस्य संवित्
॥१॥

विद्वान् याजक ने विविध प्रकार से यज्ञ कृत्यों को सम्पादित करते हुए देवत्व को प्राप्त किया । उस (यज्ञ) में जो ज्ञानी ब्राह्मण नियुक्त किये गये थे, इस सम्बन्ध में उनका ज्ञान कैसा था ?॥१॥

एक एवाग्निर्बहुधा समिद्ध एकः सूर्यो विश्वमनु प्रभूतः ।
एकैवोषाः सर्वमिदं वि भात्येकं वा इदं वि बभूव सर्वम् ॥२॥

एक ही अग्निदेव विविध रूपों में प्रज्वलित होते हैं। एक ही सूर्यदेव समस्त पदार्थों में समाहित होकर अनेक रूपों में प्रतिभासित होते हैं तथा देवी उषा अकेली ही सम्पूर्ण जगत् को आलोकित करती हैं। ये सब मिलकर वस्तुत: एक ही हैं॥२॥

ज्योतिष्मन्तं केतुमन्तं त्रिचक्रं सुखं रथं सुषदं भूरिवारम् ।
चित्रामघा यस्य योगेऽधिजज्ञे तं वां हुवे अति रिक्तं पिबध्यै ॥३॥

जाज्वल्यमान, सर्वज्ञ, सुखदाता अग्निदेव का हम आवाहन करते हैं। तीनों लोकों में गमनशील उनके सान्निध्य से हमें धन-ऐश्वर्य का लाभ मिलता है॥३॥

# सूक्त ५९

ऋषि: सुपर्ण काण्व:
देवता – इन्द्र वरुणौ। छंद: जगती

इमानि वां भागधेयानि सिस्रत इन्द्रावरुणा प्र महे सुतेषु वाम् ।
यज्ञेयज्ञे ह सवना भुरण्यथो यत्सुन्वते यजमानाय शिक्षथः ॥१॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! सोमाभिषव करने वाले याजकों को आप धन प्रदान करते हैं। सभी यज्ञों के प्रत्येक सवनों में सोमभाग को ग्रहण करने के लिए आप पधारते हैं। सोमरस अभिषुत करने के बाद हम आपका आवाहन करते हैं॥१॥

निष्षिध्वरीरोषधीराप आस्तामिन्द्रावरुणा महिमानमाशत ।
या सिस्रतू रजसः पारे अध्वनो ययोः शत्रुर्नकिरादेव ओहते ॥२॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! आप अन्तरिक्ष को पार करने वाले मार्ग से गमन करते हैं। कोई भी देवद्रोही व्यक्ति आपसे शत्रुता करने में

सक्षम नहीं है । आपकी महिमा से समस्त जल ओषधीय गुणों से युक्त होता है॥२॥

सत्यं तदिन्द्रावरुणा कृशस्य वां मध्व ऊर्मिं दुहते सप्त वाणीः ।
ताभिर्दाश्वांसमवतं शुभस्पती यो वामदब्धो अभि पाति चित्तिभिः ॥३॥

हे कल्याण के स्वामी इन्द्रावरुण ! सप्त छन्दों वाली ऋचाओं का गान करके, 'कृश ष का सोम आपके लिए तैयार किया जाता है । जो उपासक मन लगाकर अपनी सुरक्षा के लिए आपसे प्रार्थना करते हैं, उन हव प्रदाता यजमानों की आप रक्षा करते हैं॥३॥

घृतप्रुषः सौम्या जीरदानवः सप्त स्वसारः सदन ऋतस्य ।
या ह वामिन्द्रावरुणा घृतश्चुतस्ताभिर्धत्तं यजमानाय शिक्षतम् ॥४॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! यज्ञ-मण्ड़प में विद्यमान रहने वाली सात बहनें, (सप्त छन्दों वाली ऋचाएँ) सौम्यता से प्रवाहित होती हुई घृत-धाराओं से आपको सींचती हैं। उन्हें महण करके आप याजकों को ऐश्वर्य प्रदान करें तथा उन्हें उच्च पदों पर स्थापित करें॥४॥

अवोचाम महते सौभगाय सत्यं त्वेषाभ्यां महिमानमिन्द्रियम् ।
अस्मान्त्स्विन्द्रावरुणा घृतश्चुतस्त्रिभिः साप्तेभिरवतं शुभस्पती ॥५॥

कल्याणकारी शक्तियों के स्वामी हे इन्द्र और वरुणदेव ! अपने को सौभाग्यशाली बनाने के लिए, हम आपकी वास्तविक महानता का गुणगान करते हैं। घृत-धाराओं से सिञ्चित करने वाले हम याजकों को वे तीन और सात अथवा (तीन x सात) इक्कीस प्रकार से रक्षित करें॥५॥

इन्द्रावरुणा यदृषिभ्यो मनीषां वाचो मतिं श्रुतमदत्तमग्रे ।
यानि स्थानान्यसृजन्त धीरा यज्ञं तन्वानास्तपसाभ्यपश्यम् ॥६॥

हे इन्द्र और वरुण देव ! पुरातन कालीन ऋषियों को आपने जो ज्ञान, वाणी, विवेक तथा विचार प्रदान किया था, उसकी सहायता से उन्होंने जिन यज्ञ-मण्ड़पों का सृजन किया था, उसको हम अपनी तपश्चर्या द्वारा जानें व प्राप्त करें॥६॥

इन्द्रावरुणा सौमनसमदृप्तं रायस्पोषं यजमानेषु धत्तम् ।
प्रजां पुष्टिं भूतिमस्मासु धत्तं दीर्घायुत्वाय प्र तिरतं न आयुः ॥७॥

हे इन्द्र और वरुणदेव ! यजन करने वाले यजमानों को आप ऐसा धन प्रदान करें, जो सौम्यता, निरहंकारिता तथा पोषण देने वाला हो। हमें सन्तान, पुष्टि तथा सम्पत्ति प्रदान करते हुए आप हमारे आयुष्य की वृद्धि करें॥७॥

# सूक्त ६०

ऋषि: भर्ग: प्रागाथ:
देवता – अग्नि:। छंद: प्रगाथ:

अग्न आ याह्यग्निभिर्होतारं त्वा वृणीमहे ।
आ त्वामनक्तु प्रयता हविष्मती यजिष्ठं बर्हिरासदे ॥१॥

हे अग्निदेव ! आप देवों को बुलाने वाले हैं, हमारी प्रार्थना सुनकर अपनी (विभूतिरूप) अग्नियोंसहित यहाँ पधारें । हे पूज्य अग्निदेव ! अध्वर्यु के द्वारा प्रदत्त आसन पर आपके प्रतिष्ठित होने पर, हम आपका पूजन करें॥१॥

अच्छा हि त्वा सहसः सूनो अङ्गिरः स्रुचश्चरन्त्यध्वरे ।
ऊर्जो नपातं घृतकेशमीमहेऽग्निं यज्ञेषु पूर्व्यम् ॥२॥

बल से उत्पन्न सर्वत्र गमनशील हे अग्ने !आप तक हविष्यान्न पहुँचाने के लिए यह हवि पात्र सक्रिय है । शक्ति का ह्रास रोकने वाले

अभीष्टदाता, तेजस्वी, ज्वालाओं से युक्त आपकी हम यज्ञस्थल पर प्रार्थना करते हैं॥२॥

अग्ने कविर्वेधा असि होता पावक यक्ष्यः ।
मन्द्रो यजिष्ठो अध्वरेष्वीड्यो विप्रेभिः शुक्र मन्मभिः ॥३॥

हे अग्निदेव ! आप अत्यन्त पूज्य, विद्वान् , हर्ष प्रदान करने वाले तथा सबको शुद्ध करने वाले हैं। सबसे महान् तथा होता के रूप में आप ज्ञानियों द्वारा श्रेष्ठ स्तोत्रों से प्रशंसित होते हैं॥३॥

अद्रोघमा वहोशतो यविष्ठ्य देवाँ अजस्र वीतये ।
अभि प्रयांसि सुधिता वसो गहि मन्दस्व धीतिभिर्हितः ॥४॥

शक्तिशाली, सबको निवास प्रदान करने वाले हे अग्निदेव ! आप हमारी हवियों का सेवन करने के लिए, विद्रोहरहित तथा अभिलाषा से युक्त देवताओं को यज्ञस्थल पर ले आएँ । हमारे द्वारा भावनापूर्वक प्रदान किये गये हविष्यान्न को आप ग्रहण करें । हमारी प्रार्थनाओं द्वारा प्रशंसित होकर आनन्दित हों॥४॥

त्वमित्सप्रथा अस्यग्ने त्रातर्ऋतस्कविः ।
त्वां विप्रासः समिधान दीदिव आ विवासन्ति वेधसः ॥५॥

हे सर्वरक्षक अग्ने ! आप अपने गुणधर्म के लिए बहुत प्रसिद्ध हैं। आप सत्यरूप तथा ज्ञानी हैं । तेजस्विता के प्रतीक अग्निरूप, आपके प्रज्वलित होने पर, ज्ञानी-श्रेष्ठ याज्ञिक आपकी स्तुति करते हैं तथा सेवा के लिए तैयार रहते हैं॥५॥

शोचा शोचिष्ठ दीदिहि विशे मयो रास्व स्तोत्रे महाँ असि ।
देवानां शर्मन्मम सन्तु सूरयः शत्रूषाहः स्वग्नयः ॥६॥

अत्यन्त तेजस्वी हे अग्निदेव ! समस्त देवताओं में आप सर्वश्रेष्ठ हैं । आप भली प्रकार से प्रज्वलित होकर प्रार्थना करने वाले मनुष्यों को सुख प्रदान करें। आप रिपुओं को पराजित करने वाले बनें॥६॥

यथा चिद्वृद्धमतसमग्ने संजूर्वसि क्षमि ।
एवा दह मित्रमहो यो अस्मध्रुग्दुर्मन्मा कश्च वेनति ॥७॥

मित्रों में महान् हे अग्निदेव ! जिस प्रकार आप सूखी लकड़ी को भस्म कर देते हैं, उसी प्रकार आप हमारे उन विद्रोहियों तथा दुर्बुद्धिग्रस्त लोगों को जलाकर भस्म कर दें, जो हमारे पतन की कामना करते हैं॥७॥

मा नो मर्ताय रिपवे रक्षस्विने माघशंसाय रीरधः ।
अस्रेधद्भिस्तरणिभिर्यविष्ठ्य शिवेभिः पाहि पायुभिः ॥८॥

अत्यन्त शक्तिशाली हे अग्निदेव ! आप हमें रिपुओं, पापियों तथा दुष्कर्म का उपदेश देने वाले मनुष्यों के आश्रित करके कष्ट न दें। आप अपने हिंसारहित तथा विपत्तियों से पार लगाने वाले रक्षण-साधनों से हमारी सुरक्षा करें॥८॥

पाहि नो अग्न एकया पाह्युत द्वितीयया ।
पाहि गीर्भिस्तिसृभिरूर्जां पते पाहि चतसृभिर्वसो ॥९॥

सबको स्थापित करने वाले हे अग्ने ! आप प्रथम स्तुति से हमारी रक्षा करें, द्वितीय स्तुति से अभय प्रदान करें, तृतीय से भी संरक्षण प्रदान करें । हे ऊर्जाओं के स्वामी ! आप चतुर्थ स्तुति से हम सबका पालन करें॥९॥

पाहि विश्वस्माद्रक्षसो अराव्णः प्र स्म वाजेषु नोऽव ।
त्वामिद्धि नेदिष्ठं देवतातय आपिं नक्षामहे वृधे ॥१०॥

हे अग्निदेव ! रणक्षेत्र में आप समस्त असुरों तथा दान न करने वाले रिपुओं से हमारी सुरक्षा करें । यजन करने तथा सम्पत्ति प्राप्त करने के निमित्त हम आपको निकटतम सखा के रूप में ग्रहण करते हैं॥१०॥

आ नो अग्ने वयोवृधं रयिं पावक शंस्यम् ।
रास्वा च न उपमाते पुरुस्पृहं सुनीती स्वयशस्तरम् ॥११॥

पवित्र करने वाले हे अग्निदेव ! आप धन की वृद्धि करते हैं। हमें आप प्रशंसनीय धन प्रदान करें, जो उत्तम नीति के मार्ग से प्राप्त हुआ हो । वह हमारे लिए यशदायी हो॥११॥

येन वंसाम पृतनासु शर्धतस्तरन्तो अर्य आदिशः ।
स त्वं नो वर्ध प्रयसा शचीवसो जिन्वा धियो वसुविदः ॥१२॥

हे बलशाली अग्निदेव ! आप हमें धन तथा अन्न से समृद्ध करके सद्‌बुद्धि प्रदान करें । हम रणक्षेत्र में पराक्रम प्रदर्शित करते हुए, हथियारों द्वारा प्रहार करके, रिपुओं को लाँघकर उनका विनाश कर सकें॥१२॥

शिशानो वृषभो यथाग्निः शृङ्गे दविध्वत् ।
तिग्मा अस्य हनवो न प्रतिधृषे सुजम्भः सहसो यहुः ॥१३॥

जिस प्रकार वृषभ अपने सींग को नुकीला करने के लिए अपने सिर को घुमाते हैं, उसी प्रकार अग्निदेव अपनी लपटों को घुमाते हैं । इनके

नुकीले हथियारों को रोकने में कोई भी सक्षम नहीं है । वे शक्ति के पुत्र और श्रेष्ठ दन्त वाले हैं॥१३॥

नहि ते अग्ने वृषभ प्रतिधृषे जम्भासो यद्वितिष्ठसे ।
स त्वं नो होतः सुहुतं हविष्कृधि वंस्वा नो वार्या पुरु ॥१४॥

वृष्टिकारक हे अग्निदेव ! आप यज्ञ का सम्पादन करने वाले हैं। आपकी लपटों को कोई भी रोकने में समर्थ नहीं है, क्योंकि आप अपनी ज्वालाओं को विविध प्रकार से संवर्धित करते हैं। आप हमारी आहुतियों को स्वीकार करके हमें वरणीय ऐश्वर्य प्रदान करें॥१४॥

शेषे वनेषु मात्रोः सं त्वा मर्तास इन्धते ।
अतन्द्रो हव्या वहसि हविष्कृत आदिद्देवेषु राजसि ॥१५॥

हे अग्ने ! आप वनों में, माता के गर्भ में तथा भूमि में अदृश्यरूप से व्याप्त हैं। याज्ञिक आपको बड़ी श्रद्धापूर्वक (समिधाओं द्वारा) जाग्रत् करते हैं । हे अग्निदेव ! आप आलस्यहीन होताओं के हव्य को देवताओं तक पहुँचाते हैं और स्वयं भी उनके मध्य सुशोभित होते हैं॥१५॥

सप्त होतारस्तमिदीळते त्वाग्ने सुत्यजमह्रयम् ।
भिनत्स्यद्रिं तपसा वि शोचिषा प्राग्ने तिष्ठ जनाँ अति ॥१६॥

हे अग्निदेव ! आप श्रेष्ठ दानी और प्रदीप्त हैं। सात याजक आपकी प्रार्थना करते हैं। आप अपनी (ऊर्जा) तपःशक्ति से मेघों को विदीर्ण करते हैं। हे अग्निदेव ! आप हव्य धारण करके देवताओं तक पहुँचाएँ॥१६॥

अग्निमग्निं वो अध्रिगुं हुवेम वृक्तबर्हिषः ।
अग्निं हितप्रयसः शश्वतीष्वा होतारं चर्षणीनाम् ॥१७॥

हे याजको ! हम कुश निर्मित पवित्र आसन फैलाकर पृथ्वीलोक में विद्यमान अग्निदेव को आपके लिए आहूत करते हैं । वे समस्त प्रजाओं तथा यजमानों के कल्याण के लिए आहुति धारण करते हैं॥१७॥

केतेन शर्मन्त्सचते सुषामण्यग्ने तुभ्यं चिकित्वना ।
इषण्यया नः पुरुरूपमा भर वाजं नेदिष्ठमूतये ॥१८॥

हे अग्निदेव ! सुन्दर साम वाले हर्ष प्रदायक यज्ञों में विद्वान याजक आपकी प्रार्थना करते हैं। आप अनेकों प्रकार के धनों को प्रदान करने के लिए हमारे समीप पधार॥१८॥

अग्ने जरितर्विश्पतिस्तेपानो देव रक्षसः ।
अप्रोषिवान्गृहपतिर्महाँ असि दिवस्पायुर्दुरोणयुः ॥१९॥

हे ज्ञानस्वरूप अग्निदेव ! आप प्रजाओं का रक्षण और पोषण करने वाले तथा आसुरी प्रकृति के लोगों को संताप देने वाले हैं । आप घरों के स्वामी सदा घरों में विद्यमान रहते हैं। हे द्युलोक के रक्षक ! आप वन्दनीय हैं॥१९॥

मा नो रक्ष आ वेशीदाघृणीवसो मा यातुर्यातुमावताम् ।
परोगव्यूत्यनिरामप क्षुधमग्ने सेध रक्षस्विनः ॥२०॥

उत्तम ऐश्वर्य से सम्पन्न हे अग्निदेव ! हमारे अन्दर (प्रवृत्तिरूपी) असुर, कष्टदायक बीमारियाँ तथा पिशाचों की पीड़ा प्रवेश न कर पाएँ । हे अग्ने ! भुखमरी तथा असुरों को आप हमारे पास मत आने दें॥२०॥

# ऋग्वेद – अष्टम मंडल

## सूक्त ६१

ऋषि: भर्ग: प्रागाथ:
देवता – इन्द्र:। छंद: प्रगाथ:

उभयं शृणवच्च न इन्द्रो अर्वागिदं वचः ।
सत्राच्या मघवा सोमपीतये धिया शविष्ठ आ गमत् ॥१॥

धनवान् और बलवान् हे इन्द्रदेव ! दोनों प्रकार की हमारी प्रार्थना को समीप आकर सुनें । सामूहिक उपासना से प्रसन्न होकर आप सोमपान के लिए यहाँ उपस्थित हों॥१॥

तं हि स्वराजं वृषभं तमोजसे धिषणे निष्टतक्षतुः ।
उतोपमानां प्रथमो नि षीदसि सोमकामं हि ते मनः ॥२॥

आकाश और पृथ्वी ने वृष्टिकर्ता समर्थ और तेजस्वी इन्द्रदेव को (महत्ता प्रदर्शित करने के लिए संस्कारित किया। हे इन्द्रदेव ! आप उपमानों में सर्वश्रेष्ठ । आप सोमपान की इच्छा से यज्ञवेदी पर विराजमान होते हैं॥२॥

आ वृषस्व पुरूवसो सुतस्येन्द्रान्धसः ।
विद्मा हि त्वा हरिवः पृत्सु सासहिमधृष्टं चिद्दधृष्वणिम् ॥३॥

महान् ऐश्वर्य से सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! आप सोमरूप अन्न की वृष्टि करें । आप रणक्षेत्र में अश्वों से सम्पन्न होकर रिपुओं को पराजित करने वाले हैं। हमें ज्ञात है कि आप स्वयं पराजित न होकर औरों का विनाश करने वाले हैं॥३॥

अप्रामिसत्य मघवन्तथेदसदिन्द्र क्रत्वा यथा वशः ।
सनेम वाजं तव शिप्रिन्नवसा मक्षू चिद्यन्तो अद्रिवः ॥४॥

सदैव सत्य का आचरण करने वाले हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप जिस प्रकार की इच्छा करते हैं, वह पूर्ण हो जाती है । हे वज्रधारी तथा मुकुटधारी इन्द्रदेव ! आपके द्वारा संरक्षित होकर विजयी होते हुए हम अन्न प्राप्त करें॥४॥

शग्ध्यू षु शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
भगं न हि त्वा यशसं वसुविदमनु शूर चरामसि ॥५॥

शचीपति, शूरवीर हे इन्द्रदेव ! सब प्रकार के रक्षा-साधनों के साथ आप हमें अभीष्ट फल प्रदान करे । सौ भाग्येयुक्त धन प्रदान करने वाले आपकी हम आराधना करते हैं॥५॥

पौरो अश्वस्य पुरुकृद्गवामस्युत्सो देव हिरण्ययः ।
नकिर्हि दानं परिमर्धिषत्त्वे यद्यद्यामि तदा भर ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! आप गौओं (गायो, इन्द्रियों, पोषक-प्रवाहों) तथा अश्वों (घोड़ों, पुरुषार्थ एवं शक्ति प्रवाह) को बढ़ाने वाले हैं। आप स्वर्ण (सम्पदा) के स्रोत हैं । आपके अनुदानों को विस्मृत करने की सामर्थ्य किसी में नहीं, अत: हमें अभीष्ट फलों से परिपूर्ण करें॥६॥

त्वं ह्येहि चेरवे विदा भगं वसुत्तये ।
उद्वावृषस्व मघवन्गविष्टय उदिन्द्राश्वमिष्टये ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! हम उत्तम आचरण से युक्त होकर आपका आवाहन करते हैं । हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! गों, अश्व तथा श्रेष्ठ धन प्राप्ति की हमारी कामनाओं की पूर्ति करें॥७॥

त्वं पुरू सहस्राणि शतानि च यूथा दानाय मंहसे ।
आ पुरंदरं चकृम विप्रवचस इन्द्रं गायन्तोऽवसे ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आप हविर्दाता को सैकड़ों-हजारों गौओं के समूह देने की सामर्थ्य से युक्त हैं । शत्रुनगरों को विध्वंस करने में समर्थ आपको हम अपनी रक्षा के निमित्त सामगान करते हुए बुलाते हैं॥८॥

अविप्रो वा यदविधद्विप्रो वेन्द्र ते वचः ।
स प्र ममन्दत्त्वाया शतक्रतो प्राचामन्यो अहंसन ॥९॥

मन्यु शक्ति से सम्पन्न हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! कोई भी व्यक्ति, चाहे वह ज्ञानी हो या मूर्ख हो, यदि आपकी प्रार्थना करता हैं, तो आपकी अनुकम्पा से हर्षित होता है॥९॥

उग्रबाहुर्म्रक्षकृत्वा पुरंदरो यदि मे शृणवद्धवम् ।
वसूयवो वसुपतिं शतक्रतुं स्तोमैरिन्द्रं हवामहे ॥१०॥

रिपुओं का संहार करने वाले तथा विशाल भुजाओं वाले हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! आप ऐश्वर्य के स्वामी तथा रिपुओं की पुरियों को नष्ट करने वाले हैं, आप हमारी स्तुतियों का श्रवण करें । हम ऐश्वर्य की कामना करने वाले याजक आपका आवाहन करते हैं॥१०॥

न पापासो मनामहे नारायासो न जळ्हवः ।
यदिन्न्विन्द्रं वृषणं सचा सुते सखायं कृणवामहै ॥११॥

इन्द्रदेव को हम पाप-प्रवृत्ति का नहीं मानते। उन्हें ऐश्वर्य एवं यज्ञ कर्म से हीन भी नहीं मानते । अस्तु, हम उन बलशाली को सोमयज्ञ में अपना सखा बनाते हैं॥११॥

उग्रं युयुज्म पृतनासु सासहिमृणकातिमदाभ्यम् ।
वेदा भृमं चित्सनिता रथीतमो वाजिनं यमिदू नशत् ॥१२॥

जिनकी स्तुति ऋण के समान सुनिश्चित फल प्रदायक है, जो अनेकों गतिशील अश्वों और रथो के स्वामी एवं उनके ज्ञाता हैं, जो अनेकों यजमानों के मध्य समाये रहते हैं-ऐसे अदम्य साहस के धनी, अजेय वीर इन्द्रदेव को हम (यज्ञस्थल पर) प्रतिष्ठित करते हैं॥१२॥

यत इन्द्र भयामहे ततो नो अभयं कृधि ।
मघवञ्छग्धि तव तन्न ऊतिभिर्वि द्विषो वि मृधो जहि ॥१३॥

हे इन्द्रदेव ! हम भयभीत हैं , हमें भयरहित करें । हे धनवान् देव ! आप सर्वसामर्थ्यवान् हैं, अतः अपनी सामर्थ्य से हमारे शत्रुओं तथा हिंसक वृत्ति वालों को नष्ट कर हमारा संरक्षण करें॥१३॥

त्वं हि राधस्पते राधसो महः क्षयस्यासि विधतः ।
तं त्वा वयं मघवन्निन्द्र गिर्वणः सुतावन्तो हवामहे ॥१४॥

हे ऐश्वर्यशाली इन्द्रदेव ! हमें देने के लिए आप असंख्य धनों को धारण करते हैं । हे स्तुति करने योग्य धनवान् देव ! शुद्ध सोमरसे का आस्वादन करने के निमित्त, हम साधक आपको बुलाते हैं॥१४॥

इन्द्रः स्पळुत वृत्रहा परस्पा नो वरेण्यः ।
स नो रक्षिषच्चरमं स मध्यमं स पश्चात्पातु नः पुरः ॥१५॥

हे सर्वज्ञ इन्द्रदेव ! आप वृत्र का संहार करने वाले तथा सज्जनों का पोषण करने वाले हैं। आप हमारे वरणीय होकर हमारी श्रेष्ठतम तथा मध्यम प्रवृत्तियों को संरक्षण प्रदान करें (हीन भावों को नष्ट होने दें। आप आगे और पीछे की ओर से हमारी सुरक्षा करें॥१५॥

त्वं नः पश्चादधरादुत्तरात्पुर इन्द्र नि पाहि विश्वतः ।
आरे अस्मत्कृणुहि दैव्यं भयमारे हेतीरदेवीः ॥१६॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें असुरों और देवताओं के डर से रहित करें तथा ऊपर-नीचे, आगे-पीछे सब तरफ से हमारी सुरक्षा करें॥१६॥

अद्याद्या श्वःश्व इन्द्र त्रास्व परे च नः ।
विश्वा च नो जरितृन्त्सत्पते अहा दिवा नक्तं च रक्षिषः ॥१७॥

हे इन्द्रदेव ! वर्तमान और भविष्य में हमें आपका संरक्षण प्राप्त हो । हे सज्जनों के पालक इन्द्रदेव ! आप सर्वदा दिन और रात हम याजकों के रक्षक बने रहें॥१७॥

प्रभङ्गी शूरो मघवा तुवीमघः सम्मिश्लो विर्याय कम् ।
उभा ते बाहू वृषणा शतक्रतो नि या वज्रं मिमिक्षतुः ॥१८॥

ये इन्द्रदेव अपने पराक्रम से शत्रुओं की सामर्थ्य को चूर-चूर करने वाले हैं। ये सब में व्याप्त होने वाले और ऐश्वर्यवान् हैं । हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! आपकी दोनों भुजाएँ, जो वज्र को धारण करती हैं, विशिष्ट सामर्थ्य से युक्त हैं॥१८॥

# सूक्त ६२

ऋषि: प्रगाथो घौर काण्व
देवता – इन्द्र:। छंद: पंक्ति, ७-९ वृहती

प्रो अस्मा उपस्तुतिं भरता यज्जुजोषति ।
उक्थैरिन्द्रस्य माहिनं वयो वर्धन्ति सोमिनो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥१॥

हे याजको ! आप इन्द्रदेव की प्रार्थना करें तथा उनके सामरूप अन्न को अपने स्तोत्रों द्वारा समृद्ध करें । उनके द्वारा दिया गया दान हितकारी होता है॥१॥

अयुजो असमो नृभिरेकः कृष्टीरयास्यः ।
पूर्वीरति प्र वावृधे विश्वा जातान्योजसा भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥२॥

वे इन्द्रदेव समस्त देवताओं में प्रमुख, सर्वश्रेष्ठ तथा अनश्वर हैं । वे अपने ओज से समस्त प्राणियों तथा पुरातन लोगों को समृद्ध करते हैं। उनका ऐश्वर्य कल्याण करने वाला है॥२॥

अहितेन चिदर्वता जीरदानुः सिषासति ।
प्रवाच्यमिन्द्र तत्तव वीर्याणि करिष्यतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥३॥

शीघ्रता से दान करने वाले, द्रुतगामी अश्वों द्वारा गमन के इच्छुक हे इन्द्रदेव ! वीरता प्रदर्शित करने वाला आपका प्रसिद्ध कार्य सराहनीय है । आपका ऐश्वर्य हित करने वाला है॥३॥

आ याहि कृणवाम त इन्द्र ब्रह्माणि वर्धना ।
येभिः शविष्ठ चाकनो भद्रमिह श्रवस्यते भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥४॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! हम आपके जोश को बढ़ाने वाले स्तोत्रों का गायन करते हैं, अत: आप पधारें । आप कीर्ति की कामना करने वाले याजकों का हित करना चाहते हैं, क्योंकि आपका ऐश्वर्य हित करने वाला है॥४॥

धृषतश्चिद्धृषन्मनः कृणोषीन्द्र यत्त्वम् ।
तीव्रैः सोमैः सपर्यतो नमोभिः प्रतिभूषतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥५॥

जो यजमान परिष्कृत सोमरस समर्पित करके वन्दनापूर्वक आपका सत्कार करते हैं, आप उनको उच्च मनोबल प्रदान करते हैं। आपका ऐश्वर्य सभी के लिए हितकारी होता है॥५॥

अव चष्ट ऋचीषमोऽवताँ इव मानुषः ।
जुष्ट्वी दक्षस्य सोमिनः सखायं कृणुते युजं भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार मनुष्य प्यास से व्याकुल होकर जलकुण्ड को देखते हैं, उसी प्रकार आप हमारी स्तुतियों से प्रसन्न होकर हम सबको देखते हैं। सोम अभिषव करने वालों से आप मित्रता करते हैं। आपका ऐश्वर्य कल्याण करने वाला है॥६॥

विश्वे त इन्द्र वीर्यं देवा अनु क्रतुं ददुः ।
भुवो विश्वस्य गोपतिः पुरुष्टुत भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! समस्त देवता आपका अनुगमन करके शक्ति तथा बुद्धि को धारण करते हैं । हे बहुप्रशंसित इन्द्रदेव ! आप समस्त लोकों तथा गौओं के अधिष्ठाता हैं । आपका दान कल्याण करने वाला है॥७॥

गृणे तदिन्द्र ते शव उपमं देवतातये ।
यद्धंसि वृत्रमोजसा शचीपते भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥८॥

हे शचीपते इन्द्रदेव ! हम निकट ही सम्पन्न होने वाले उस यज्ञ में आपके सामर्थ्य की स्तुति करते हैं, जिसके कारण आप वृत्र का वध करने में सक्षम हैं। आपका दान कल्याणकारी हैं ॥८॥

समनेव वपुष्यतः कृणवन्मानुषा युगा ।
विदे तदिन्द्रश्चेतनमध श्रुतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥९॥

जिस प्रकार समान विचार वाली पत्नी सामर्थ्यवान् पति को अपने वश में कर लेती है, उसी प्रकार समस्त जीवों और सम्वत्सर को इन्द्रदेव अपने वश में कर लेते हैं । वे उस विवेकपूर्ण कार्य के द्वारा विख्यात होते हैं । उनका दान कल्याण करने वाला है॥९॥

उज्जातमिन्द्र ते शव उत्त्वामुत्तव क्रतुम् ।
भूरिगो भूरि वावृधुर्मघवन्तव शर्मणि भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥१०॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! अनेक गौओं से सम्पन्न यजमान आपके द्वारा प्रदान किये गये सुख का उपभोग करते हैं वे आपकी सामर्थ्य और कर्म को बढ़ाते हुए समृद्धिशाली बनाते हैं। आपका दान कल्याण करने वाला है॥१०॥

अहं च त्वं च वृत्रहन्त्सं युज्याव सनिभ्य आ ।
अरातीवा चिदद्रिवोऽनु नौ शूर मंसते भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥११॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप वृत्र का वध करने वाले हैं। ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिए हम आपको समर्पित हो जाएँ । हे शूरवीर इन्द्रदेव ! दान न देने वाले भी आपके ऐश्वर्य की प्रशंसा करते हैं। आपका दान कल्याण करने वाला हैं॥११॥

सत्यमिद्वा उ तं वयमिन्द्रं स्तवाम नानृतम् ।
महाँ असुन्वतो वधो भूरि ज्योतींषि सुन्वतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः
॥१२॥

हम उन इन्द्रदेव की सच्चे मन से प्रार्थना करते हैं, यह सत्य है । सोम अभिषव न करने वाले व्यक्ति को वे नष्ट कर देते हैं तथा अभिषव करने वाले के लिए उनका दान हितकारी होता हैं॥१२॥

# सूक्त ६३

ऋषि: प्रगाथ: काण्व:
देवता – इन्द्रः, १२ देवा:। छंद: गायत्री:, १, ४-५, ७ अनुष्टुप, १२ त्रिष्टुप

स पूर्व्यो महानां वेनः क्रतुभिरानजे ।
यस्य द्वारा मनुष्पिता देवेषु धिय आनजे ॥१॥

जिन इन्द्र के द्वारा, देवताओं के सान्निध्य में पिता (पालक) मनु ने बुद्धि (अथवा कर्म के प्रेरक सूत्र) प्राप्त किये, वे (इन्द्र) तेजस्वी (श्रेष्ठ) यजमानों की हवि की कामना करते हुए (यज्ञ में) पहुँचते हैं॥१॥

दिवो मानं नोत्सदन्त्सोमपृष्ठासो अद्रयः ।
उक्था ब्रह्म च शंस्या ॥२॥

सोमाभिषव करने वाले सराहनीय स्तोत्र तथा पाषाण कभी भी उन इन्द्रदेव का त्याग न करें, जिन्होंने दिव्यलोक का सृजन किया हैं॥२॥

स विद्वाँ अङ्गिरोभ्य इन्द्रो गा अवृणोदप ।
स्तुषे तदस्य पौंस्यम् ॥३॥

ज्ञानी इन्द्रदेव ने ऋषि अंगिरा के निमित्त गौओं को प्रदान किया। अत: हम उन इन्द्रदेव के सामर्थ्य की सराहना करते हैं॥३॥

स प्रत्नथा कविवृध इन्द्रो वाकस्य वक्षणिः ।
शिवो अर्कस्य होमन्यस्मत्रा गन्त्ववसे ॥४॥

वे इन्द्रदेव मेधावियों की वृद्धि करने वाले तथा स्त्रोताओं को सुख प्रदान करने वाले हैं। हमारी सुरक्षा के लिए सोमयाग करते समय वे यज्ञशाला में पधारे॥४॥

आदू नु ते अनु क्रतुं स्वाहा वरस्य यज्यवः ।
श्वात्रमर्का अनूषतेन्द्र गोत्रस्य दावने ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! स्वाहा उच्चारण के साथ यज्ञकर्म सम्पन्न करने वाले तथा स्तुति करने वाले याजकगण ऐश्वर्य प्राप्ति के निमित्त आपके कृत्यों का गुणगान करते हैं॥५॥

इन्द्रे विश्वानि वीर्या कृतानि कर्त्वानि च ।

यमर्का अध्वरं विदुः ॥६॥

स्तुति करने वाले, उन इन्द्रदेव को हिंसारहित मानते हैं । सभी शौर्यपूर्ण कार्य इन्द्रदेव के अन्दर समाहित हैं॥६॥

यत्पाञ्चजन्यया विशेन्द्रे घोषा असृक्षत ।
अस्तृणाद्बर्हणा विपोऽर्यो मानस्य स क्षयः ॥७॥

जब पाँची प्रज्ञाएँ (पांची वर्ग के मनुष्य अथवा पंचतत्व, पंच प्राण आदि) एक साथ मिलकर इन्द्रदेव की प्रार्थना करती हैं, तन्त्र ने इन्द्रदेव अपने पराक्रम से शत्रुओं का संहार करते हैं। ऐसे महान इन्द्रदेव हम विप्रों द्वारा सम्मान-प्राप्ति के अधिकारी हैं॥७॥

इयमु ते अनुष्टुतिश्चकृषे तानि पौंस्या ।
प्रावश्चक्रस्य वर्तनिम् ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आपने जो शौर्य प्रदर्शित किया है, उसके लिए हम प्रार्थना करते हैं। आप हमारे रथ के मार्ग को संरक्षित करें॥८॥

अस्य वृष्णो व्योदन उरु क्रमिष्ट जीवसे ।
यवं न पश्व आ ददे ॥९॥

पशुओं के सदृश मनुष्य भी उन शक्तिशाली इन्द्रदेव से जौ आदि अन्न प्राप्त करके जीवित रहने के लिए उत्कृष्ट कर्म करते हैं॥९॥

तद्दधाना अवस्यवो युष्माभिर्दक्षपितरः ।
स्याम मरुत्वतो वृधे ॥१०॥

हे याजको ! रक्षण की कामना करने वाले हम योजक, मरुत्वान् इन्द्रदेव की कीर्ति में वृद्धि करते हुए आप सबके सहयोग से धन-धान्य से परिपूर्ण हो जाएँ॥१०॥

बळृत्वियाय धाम्न ऋक्वभिः शूर नोनुमः ।
जेषामेन्द्र त्वया युजा ॥११॥

हे पराक्रमी इन्द्रदेव ! आप यज्ञों के (सत्कर्म के) पालन करने वाले तथा ओजस्वी हैं । हम आपके सहयोग से विजयी हो॥११॥

अस्मे रुद्रा मेहना पर्वतासो वृत्रहत्ये भरहूतौ सजोषाः ।
यः शंसते स्तुवते धायि पज्र इन्द्रज्येष्ठा अस्माँ अवन्तु देवाः ॥१२॥

समस्त देवताओं में वृत्रहन्ता इन्द्रदेव प्रमुख तथा शक्तिशाली हैं। वे रस्तोताओं के समीप पधारते हैं। वर्षा कारक मेघों द्वारा रुद्रों के साथ रणक्षेत्र में वे हमारा संरक्षण करें॥१२॥

# सूक्त ६४

ऋषि: प्रगाथ: काण्व:
देवता – इन्द्र: । छंद: गायत्री:

उत्त्वा मन्दन्तु स्तोमाः कृणुष्व राधो अद्रिवः ।
अव ब्रह्मद्विषो जहि ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! आपको यह सोमरस आनन्द प्रदान करने वाला हो । हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप हमें ऐश्वर्य प्रदान करें तथा ज्ञान के साथ द्वेष रखने वालों का संहार करें॥१॥

पदा पणीँरराधसो नि बाधस्व महाँ असि ।
नहि त्वा कश्चन प्रति ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आप महान् हैं। आपके समान समर्थता किसी में नहीं है । आप यज्ञादि कर्म न करने वाले कृपणों को पीड़ित करें॥२॥

त्वमीशिषे सुतानामिन्द्र त्वमसुतानाम् ।
त्वं राजा जनानाम् ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आप सिद्ध रस युक्त (सोमरस) पदार्थों एवं निषिद्ध पदार्थों के स्वामी हैं। आप समस्त प्राणियों के शासक हैं॥३॥

एहि प्रेहि क्षयो दिव्याघोषञ्चर्षणीनाम् ।
ओभे पृणासि रोदसी ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आप यज्ञस्थल पर पधारें और उद्घोष करते हुए स्वर्गलोक की ओर गमन करें । आप अपने ओज से धरती और आकाश को तुष्ट करते हैं॥४॥

त्यं चित्पर्वतं गिरिं शतवन्तं सहस्रिणम् ।
वि स्तोतृभ्यो रुरोजिथ ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आप उस पहाड़ के समान वज्र से सैकड़ों, सहस्रों मेघों को विदीर्ण करें, हम स्तुति करने वालों का आप कल्याण करें॥५॥

वयमु त्वा दिवा सुते वयं नक्तं हवामहे ।
अस्माकं काममा पृण ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! सोम अभिषव करते समय हम आपको अपनी सहायता के लिए आहूत करते हैं। आप हमारी अभिलाषाओं की पूर्ति करें॥६॥

क्व स्य वृषभो युवा तुविग्रीवो अनानतः ।
ब्रह्मा कस्तं सपर्यति ॥७॥

युवा, सशक्त ग्रीवा वाले एवं किसी के सामने न झुकने वाले वे देवेन्द्र इस समय कहाँ हैं? कौन याजक उनका पूजन करता है?॥७॥

कस्य स्वित्सवनं वृषा जुजुष्वाँ अव गच्छति ।
इन्द्रं क उ स्विदा चके ॥८॥

वे शक्तिशाली इन्द्रदेव किन मनुष्यों के यज्ञ की हवियों को ग्रहण करने के लिए पधारते हैं। उन इन्द्रदेव के विषय में किस याजक को ज्ञान है ?॥८॥

कं ते दाना असक्षत वृत्रहन्कं सुवीर्या ।
उक्थे क उ स्विदन्तमः ॥९॥

हे वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ! आप किस व्यक्ति को ऐश्वर्य प्रदान करते हैं? और किस व्यक्ति को सामर्थ्य प्रदान करते हैं तथा किसके समीप यज्ञ में आसीन होते हैं ?॥९॥

अयं ते मानुषे जने सोमः पूरुषु सूयते ।
तस्येहि प्र द्रवा पिब ॥१०॥

हे इन्द्रदेव !आपके निमित्त हम मनुष्य सोम निचोड़ते हैं । आप यथाशीघ्र पधार कर सोमरस का पान करें॥१०॥

अयं ते शर्यणावति सुषोमायामधि प्रियः ।
आर्जीकीये मदिन्तमः ॥११॥

यह 'शर्यणावत् सुषोमा' एवं 'आर्जीकीया' (क्षेत्र या नदी के समीप) में तैयार अथवा उपलब्ध; यह सोम आपको आनन्दित करने वाला हो॥११॥

तमद्य राधसे महे चारुं मदाय घृष्वये ।
एहीमिन्द्र द्रवा पिब ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करने के लिए तथा रिपुओं का संहार करने के लिए यथाशीघ्र पधारकर श्रेष्ठ सोमरस का पान करें॥१२॥

# सूक्त ६५

ऋषि: प्रगाथ: काण्व:
देवता – इन्द्र: । छंद: गायत्री:

यदिन्द्र प्रागपागुदङ्न्यग्वा हूयसे नृभिः ।
आ याहि तूयमाशुभिः ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! यज्ञादि श्रेष्ठ कर्मों में निरत साधनों द्वारा सभी दिशाओं से जिनका आवाहन किया जाता हैं, वे आप यथाशीघ्र अपने द्रुतगामी अश्वों द्वारा पधारें॥१॥

यद्वा प्रस्रवणे दिवो मादयासे स्वर्णरे ।
यद्वा समुद्रे अन्धसः ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आप दिव्यलोक की अमृत रूपी शक्ति धाराओं, अन्तरिक्ष की रस धाराओं तथा पृथ्वी पर यज्ञादि के समय प्रवाहित होने वाली सोमरस की धाराओं से पुष्ट एवं हर्षित होते हैं॥२॥

आ त्वा गीर्भिर्महामुरुं हुवे गामिव भोजसे ।
इन्द्र सोमस्य पीतये ॥३॥

हे महान् इन्द्रदेव ! जिस प्रकार गौओं को भोजन देने के लिए आहूत करते हैं, उसी प्रकार हम अपनी स्तुतियों द्वारा सोमरस पीने के लिए आपका आवाहन करते हैं॥३॥

आ त इन्द्र महिमानं हरयो देव ते महः ।
रथे वहन्तु बिभ्रतः ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! महान् महिमा वाले आपके अश्व, रथ को वहन करते हुए यहाँ (यज्ञस्थल) तक ले आएँ॥४॥

इन्द्र गृणीष उ स्तुषे महाँ उग्र ईशानकृत् ।
एहि नः सुतं पिब ॥५॥

पराक्रमी तथा सबके अधिष्ठाता हे इन्द्रदेव ! आप अत्यन्त महान् हैं। हम प्रार्थनाओं द्वारा आपका गुणगान करते हैं। आप हमारे निकट पधार कर सोमरस का पान करें॥५॥

सुतावन्तस्त्वा वयं प्रयस्वन्तो हवामहे ।

इदं नो बर्हिरासदे ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! हविष्यान्न से युक्त हम सोम अभिषव करने वाले याजक, कुश निर्मित पवित्र आसन पर आसीन होने के लिए आपका आवाहन करते हैं॥६॥

यच्चिद्धि शश्वतामसीन्द्र साधारणस्त्वम् ।
तं त्वा वयं हवामहे ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आप अनेकों मनुष्यों के लिए सामान्यत: उपलब्ध रहते हैं, इसी कारण हम आपका आवाहन करते हैं॥७॥

इदं ते सोम्यं मध्वधुक्षन्नद्रिभिर्नरः ।
जुषाण इन्द्र तत्पिब ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! हम याजक पाषाणों द्वारा पीसकर सोम को तैयार करते हैं । आप हर्षित होकर उस मधुर सोमरस का पान करें॥८॥

विश्वाँ अर्यो विपश्चितोऽति ख्यस्तूयमा गहि ।
अस्मे धेहि श्रवो बृहत् ॥९॥

हे महान् इन्द्रदेव ! आप शीघ्र ही पधारें और (मार्ग के) समस्त विप्रजनों को पार करके हमें ऐश्वर्ग प्रदान करें॥९॥

दाता मे पृषतीनां राजा हिरण्यवीनाम् ।
मा देवा मघवा रिषत् ॥१०॥

स्वर्ण और गौओं के स्वामी हे इन्द्रदेव ! आप हमें ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं। हे देवताओ ! उन इन्द्रदेव को कोई बाधा न पहुँचाए॥१०॥

सहस्रे पृषतीनामधि श्चन्द्रं बृहत्पृथु ।
शुक्रं हिरण्यमा ददे ॥११॥

इन्द्रदेव द्वारा प्रदत्त हर्ष प्रदान करने वाले सहस्रों गौओं के रूप में श्रेष्ठ, प्रचुर तथा तेजपूर्ण ऐश्वर्य को हम ग्रहण करते हैं॥११॥

नपातो दुर्गहस्य मे सहस्रेण सुराधसः ।
श्रवो देवेष्वक्रत ॥१२॥

हम अरक्षित एवं पीड़ित हैं । (हम एवं) हमारे सम्बन्धी जन सहस्रों प्रकार के ऐश्वर्य के स्वामी हो और देवताओं के बीच में यशस्वी बने॥१२॥

# सूक्त ६६

ऋषि: काली: प्रगाथ:
देवता – इन्द्र: । छंद: प्रगाथ:, १५ अनुष्टुप

तरोभिर्वो विदद्वसुमिन्द्रं सबाध ऊतये ।
बृहद्गायन्तः सुतसोमे अध्वरे हुवे भरं न कारिणम् ॥१॥

जैसे बालक अभिभावक को पुकारता है, वैसे ही हम अपने हितैषी इन्द्रदेव को सहायता के लिए बुलाते हैं। हे त्विजो ! अपनी रक्षा के लिए सोमयज्ञ में ऐश्वर्य देने वाले वेगवान् अश्वों से युक्त इन्द्रदेव की आराधना करें॥१॥

न यं दुध्रा वरन्ते न स्थिरा मुरो मदे सुशिप्रमन्धसः ।
य आदृत्या शशमानाय सुन्वते दाता जरित्र उक्थ्यम् ॥२॥

सुन्दर आकृति वाले इन्द्रदेव को प्राणों की बाजी लगाने वाले असुर भी नहीं हरा सकते । ऐश्वर्य दाता, सोमरस पीकर आनन्दित होने वाले

इन्द्रदेव की हम स्तुति करते हैं । वे सोमयज्ञ करने वाले, भावपूर्ण स्तुतियाँ करने वाले याजकों को श्रेयस्कर अनुदान प्रदान करते हैं॥२॥

यः शक्रो मृक्षो अश्व्यो यो वा कीजो हिरण्ययः ।
स ऊर्वस्य रेजयत्यपावृतिमिन्द्रो गव्यस्य वृत्रहा ॥३॥

वे इन्द्रदेव अत्यन्त शक्तिशाली तथा ऐश्वर्यवान् हैं। वे अश्वों से सम्पन्न, अद्‌भुत तथा वृत्ररूपी शत्रुओं का संहार करने वाले हैं। गौओं (किरणों) के अवरोधक को वे भय से प्रकम्पित कर देते हैं॥३॥

निखातं चिद्यः पुरुसम्भृतं वसूदिद्वपति दाशुषे ।
वज्री सुशिप्रो हर्यश्व इत्करदिन्द्रः क्रत्वा यथा वशत् ॥४॥

मुकुटधारी तथा वज्र को धारण करने वाले अश्ववान् इन्द्रदेव अपनी इच्छानुसार कर्म करते हैं। वे संगृहीत किये गये प्रचुर ऐश्वर्य को दानी याजकों के लिए बाहर निकालते हैं॥४॥

यद्वावन्थ पुरुष्टुत पुरा चिच्छूर नृणाम् ।
वयं तत्त इन्द्र सं भरामसि यज्ञमुक्थं तुरं वचः ॥५॥

बहुप्रशंसित तथा पराक्रमी हे इन्द्रदेव! आपने पुराने अनुभवी याजकों से जो कामना की थी, उसको हम पूर्ति करते हैं। हम आपके सामने यज्ञों, उक्थों तथा प्रार्थनाओं को समर्पित करते हैं॥५॥

सचा सोमेषु पुरुहूत वज्रिवो मदाय द्युक्ष सोमपाः ।
त्वमिद्धि ब्रह्मकृते काम्यं वसु देष्ठः सुन्वते भुवः ॥६॥

अनेकों द्वारा आहूत किये जाने वाले तथा वज्र धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप तेज से सम्पन्न तथा सोमपान करने वाले हैं। सोम अभिषव करते समय आप हर्षित होने के लिए सम्मिलित होते हैं । स्तोताओं तथा सोम यज्ञ करने वालों को आप इच्छित ऐश्वर्य प्रदान करते हैं॥६॥

वयमेनमिदा ह्योऽपीपेमेह वज्रिणम् ।
तस्मा उ अद्य समना सुतं भरा नूनं भूषत श्रुते ॥७॥

हम याजकों ने इन्द्रदेव को कल सोमरस से तृप्त किया था। उन्हें आज के यज्ञ में भी सोमरस प्रदान करते हैं । हे याजको ! इस समय स्तोत्रों का गान करके इन्द्रदेव को अलंकृत करें॥७॥

वृकश्चिदस्य वारण उरामथिरा वयुनेषु भूषति ।
सेमं नः स्तोमं जुजुषाण आ गहीन्द्र प्र चित्रया धिया ॥८॥

भेड़िये जैसे क्रूर शत्रु भी इन्द्रदेव के समक्ष अनुकूल हो जाते हैं, ऐसे वे (इन्द्रदेव) हमारी प्रार्थनाओं को स्वीकार करते हुए हमें उत्कृष्ट चिन्तन, संयुक्त विवेक-बुद्धि प्रदान करें॥८॥

कदू न्वस्याकृतमिन्द्रस्यास्ति पौंस्यम् ।
केनो नु कं श्रोमतेन न शुश्रुवे जनुषः परि वृत्रहा ॥९॥

ऐसा कौन सा पुरुषार्थ है, जिसको इन्द्रदेव ने नहीं किया हो तथा उनकी वीरता की गाथाएँ किसने नहीं सुनीं ? वृत्र का संहार करने वाले इन्द्रदेव बचपन से ही विख्यात हैं॥९॥

कदू महीरधृष्टा अस्य तविषीः कदु वृत्रघ्नो अस्तृतम् ।
इन्द्रो विश्वान्बेकनाटाँ अहर्दृश उत क्रत्वा पणीँरभि ॥१०॥

उन इन्द्रदेव ने अपने महान् पराक्रम से रिपुओं का कब संहार नहीं किया ? उनको रिपु वृत्र, उनके द्वारा कब अवध्य रहा? वे अपने कर्मों के द्वारा समस्त लोभियों तथा कृपणों को नष्ट करते हैं॥१०॥

वयं घा ते अपूर्व्येन्द्र ब्रह्माणि वृत्रहन् ।
पुरूतमासः पुरुहूत वज्रिवो भृतिं न प्र भरामसि ॥११॥

अनेकों द्वारा आहूत किये जाने वाले तथा वृत्र का संहार करने वाले हैं इन्द्रदेव ! आप वज्र को धारण करने वाले हैं। अभिनव स्तोत्रों के द्वारा हम सेवकों की भाँति आपकी स्तुति करते हैं॥११॥

पूर्वीश्चिद्धि त्वे तुविकूर्मिन्नाशसो हवन्त इन्द्रोतयः ।
तिरश्चिदर्यः सवना वसो गहि शविष्ठ श्रुधि मे हवम् ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! आप अनेकों श्रेष्ठ कर्मों को करने वाले हैं। आपके पास अनेकों संरक्षण-साधन उपलब्ध हैं, इसलिए हम आपको आहूत करते हैं। शक्तिशाली तथा सबको निवास प्रदान करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप हमारी स्तुतियों को सुनने के बाद अन्यों को लाँघकर हमारे यज्ञ-मण्डप में पधारें॥१२॥

वयं घा ते त्वे इद्विन्द्र विप्रा अपि ष्मसि ।
नहि त्वदन्यः पुरुहूत कश्चन मघवन्नस्ति मर्डिता ॥१३॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप अनेकों द्वारा आहूत किये जाने वाले हैं। हम याजकगण आपके ही आश्रय में रहें । हमें आपके अलावा कोई अन्य सुख प्रदान करने वाला नहीं दिखाई देता॥१३॥

त्वं नो अस्या अमतेरुत क्षुधोऽभिशस्तेरव स्पृधि ।
त्वं न ऊती तव चित्रया धिया शिक्षा शचिष्ठ गातुवित् ॥१४॥

हे बलशाली इन्द्रदेव ! आप सत्यमार्ग के ज्ञाता हैं । आप हमें निर्धनता तथा क्षुधा के अभिशाप से मुक्त करें। आप अपने वीरतापूर्ण विचित्र कार्यों तथा संरक्षण-साधनों से हमें समर्थ बनाएँ॥१४॥

सोम इद्वः सुतो अस्तु कलयो मा बिभीतन ।
अपेदेष ध्वस्मायति स्वयं घैषो अपायति ॥१५॥

हे कलि वंशियो ! आपके द्वारा अभिषुत सोम इन्द्रदेव के निमित्त प्रस्तुत हो । आप भयभीत न हों, क्योंकि हिंसा करने वाले लोग स्वयं दूर भाग रहे हैं॥१५॥

# सूक्त ६७

ऋषि: मतस्य: साम्मद, मैत्रावारुणिर्मान्य, मत्स्या  जाल नद्धा:
देवता –  आदित्या, १०-१२ अदिति। छंद:  गायत्री:

त्यान्नु क्षत्रियाँ अव आदित्यान्याचिषामहे ।
सुमृळीकाँ अभिष्टये ॥१॥

श्रेष्ठ सुख प्रदान करने वाले तथा रिपुओं के आक्रमणों से बचाने वाले उन आदित्यगणों से अपने अभीष्ट की पूर्ति के निमित्त हम सुरक्षा की याचना करते हैं॥१॥

मित्रो नो अत्यंहतिं वरुणः पर्षदर्यमा ।
आदित्यासो यथा विदुः ॥२॥

मित्र, वरुण, अर्यमा तथा आदित्यगण जिस प्रकार भी उचित समझें, (उसी प्रकार) वे हमें दुष्कर्मों से॥२॥

तेषां हि चित्रमुक्थ्यं वरूथमस्ति दाशुषे ।
आदित्यानामरंकृते ॥३॥

उन आदित्यों के पास वरण करने योग्य तथा प्रशंसा करने योग्य प्रचुर ऐश्वर्य है । वे हवि प्रदान करने वाले बलशाली यज्ञमान को महान् ऐश्वर्य प्रदान करते हैं॥३॥

महि वो महतामवो वरुण मित्रार्यमन् ।
अवांस्या वृणीमहे ॥४॥

हे मित्रावरुण और अर्यमा देवो ! आप और आपकी सुरक्षा-प्रक्रिया दोनों महान् हैं । हम आपसे सुरक्षा की कामना करते हैं ॥४॥

जीवान्नो अभि धेतनादित्यासः पुरा हथात् ।
कद्ध स्थ हवनश्रुतः ॥५॥

हे आदित्यो ! आप हमारी स्तुतियों को सुनने वाले हैं। आप चाहे जहाँ हों, हमारी मृत्यु के पहले ही (हमारी रक्षार्थ) यथाशीघ्र पधारें॥५॥

यद्वः श्रान्ताय सुन्वते वरूथमस्ति यच्छर्दिः ।
तेना नो अधि वोचत ॥६॥

अस्ति देवा अंहोरुर्वस्ति

हे देव !सोमयाग करने वाले याजकों को आप जो ऐश्वर्य तथा धर प्रदान करते हैं, उससे हमें भी सम्पन्न करें ॥६॥

रत्नमनागसः ।
आदित्या अद्भुतैनसः ॥७॥

दुष्कर्म करने वाले मनुष्य पाप के भागीदार होते हैं । सत्कर्म करने वालों का पुण्य बहुत रमणीक होता हैं । हे आदित्यगण ! आप हमें पापों से मुक्त करें तथा सन्मार्ग का पथ-प्रशस्त करें॥७॥

मा नः सेतुः सिषेदयं महे वृणक्तु नस्परि ।
इन्द्र इद्धि श्रुतो वशी ॥८॥

विख्यात इन्द्रदेव सबको वशीभूत करने वाले हैं। वे महान् कर्म करने में रुकावट न डालकर हमें बन्धनमुक्त करें॥८॥

मा नो मृचा रिपूणां वृजिनानामविष्यवः ।
देवा अभि प्र मृक्षत ॥९॥

रक्षा करने के इच्छुक हे देवताओ ! कपटीं रिपुओं का हिंसक कार्य हमें पीड़ित न करे। उनके हिंसक काय से हमें मुक्त करें॥९॥

उत त्वामदिते मह्यहं देव्युप ब्रुवे ।
सुमृळीकामभिष्टये ॥१०॥

हे महान् अदिति देवि ! आप श्रेष्ठ सुख प्रदान करने वाली हैं। अभीष्ट कामना की पूर्ति के लिए हम आपकी प्रार्थना करते हैं॥१०॥

पर्षि दीने गभीर आँ उग्रपुत्रे जिघांसतः ।
माकिस्तोकस्य नो रिषत् ॥११॥

पराक्रमी सन्तानों में सम्पन्न हे अदिति देवि ! हिंसक प्रवृत्ति के लोग दीन या अच्छी (कैसी भी) परिस्थितियों में हमारी सन्तानों की हत्या न करें॥११॥

अनेहो न उरुव्रज उरूचि वि प्रसर्तवे ।
कृधि तोकाय जीवसे ॥१२॥

हे महान् आदित्यगण ! हिंसारहित, श्रेष्ठ गमन करने योग्य हमारे पथ हर प्रकार से सुरक्षित हों । हमारी सन्तानों को आप दीर्घायुष्य प्रदान करें॥१२॥

ये मूर्धानः क्षितीनामदब्धासः स्वयशसः ।

व्रता रक्षन्ते अद्रुहः ॥१३॥

हे आदित्यो ! आप अत्यन्त कीर्तिमान् हैं । आप प्रमाद और विद्रोहरहित होकर हम मनुष्यों के कर्मों को संरक्षण प्रदान करते हैं॥१३॥

ते न आस्नो वृकाणामादित्यासो मुमोचत ।
स्तेनं बद्धमिवादिते ॥१४॥

हे अदितिमाता तथा आदित्यगण ! चोरों की भाँति (छल से ) बाँधे गये हम लोगों को आप हिंसक दुष्टों के मुखों से बचायें॥१४॥

अपो षु ण इयं शरुरादित्या अप दुर्मतिः ।
अस्मदेत्वजघ्नुषी ॥१५॥

हे आदित्यगण ! मारक साधन हमारी हिंसा न करके हमसे दूर हट जायें । दुर्बुद्धि भी हमसे दूर हो जाये॥१५॥

शश्वद्धि वः सुदानव आदित्या ऊतिभिर्वयम् ।
पुरा नूनं बुभुज्महे ॥१६॥

श्रेष्ठ, दानी हे आदित्यो ! आपके रक्षण-साधनों द्वारा संरक्षित होकर हम सदैव श्रेष्ठ सुखों का सेवन करते रहें॥१६॥

शश्वन्तं हि प्रचेतसः प्रतियन्तं चिदेनसः ।
देवाः कृणुथ जीवसे ॥१७॥

हे विद्वान् देवताओ ! हमको मारने वाले पापी को दूर करके हमें दीर्घ आयुष्य प्रदान करें॥१७॥

तत्सु नो नव्यं सन्यस आदित्या यन्मुमोचति ।
बन्धाद्बद्धमिवादिते ॥१८॥

हे अदितिदेवि और आदित्यगण ! जिस प्रकार आप बँधे हुए व्यक्तियों को बन्धन से छुड़ाते हैं, उसी प्रकार आपका बले हमें भी बन्धन से मुक्त करे । आपका वह बल प्रार्थना के योग्य हैं॥१८॥

नास्माकमस्ति तत्तर आदित्यासो अतिष्कदे ।
यूयमस्मभ्यं मृळत ॥१९॥

हे आदित्यो ! हम आपके सदृश वेगवान् नहीं हैं। आपका वह वेग हमें संकटों से मुक्त कर सकता है, अतः आप हमें सुख प्रदान करें॥१९॥

मा नो हेतिर्विवस्वत आदित्याः कृत्रिमा शरुः ।
पुरा नु जरसो वधीत् ॥२०॥

हे आदित्यो ! यम के मारक आयुध हमको वृद्धावस्था से पूर्व विनष्ट न करें॥२०॥

वि षु द्वेषो व्यंहतिमादित्यासो वि संहितम् ।
विष्वग्वि वृहता रपः ॥२१॥

हे आदित्यो ! आप विद्वेषियों, पापियों तथा उनके संगठनों का विनाश करके, पापों को समस्त स्थानों से दूर करें॥२१॥

# सूक्त ६८

ऋषि: प्रियमेध अंगिरस
देवता – इन्द्र:, १४-१९ ऋक्षाश्वमेधौ छंद: गायत्री:, अनुष्टुम्मुख:, प्रगाथ

आ त्वा रथं यथोतये सुम्नाय वर्तयामसि ।
तुविकूर्मिमृतीषहमिन्द्र शविष्ठ सत्पते ॥१॥

शत्रुओं को पराजित करने वाले, शौर्ययुक्त यजमानों के पोषक, हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! संरक्षण एवं सुख के निमित्त, गतिशील रथ के समान, आपको हम (यजमान गण) यज्ञस्थल पर ले आते हैं॥१॥

तुविशुष्म तुविक्रतो शचीवो विश्वया मते ।
आ पप्राथ महित्वना ॥२॥

महान् शक्तिमान, बहुत से उत्तम कर्म करने वाले पूज्य हे इन्द्रदेव ! आप सब प्रकार की महिमा से युक्त होकर संसार भर में व्याप्त रहते हैं॥२॥

यस्य ते महिना महः परि ज्मायन्तमीयतुः ।
हस्ता वज्रं हिरण्ययम् ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आपके महान् हाथ सर्वत्र व्यापक और गतिशील हैं । आप स्वर्णयुक्त (सोने की तरह देदीप्यमान) वज्र को धारण करने वाले हैं॥३॥

विश्वानरस्य वस्पतिमनानतस्य शवसः ।
एवैश्च चर्षणीनामूती हुवे रथानाम् ॥४॥

हे मरुतो ! आपके सैनिकों पर होने वाले आक्रमण के समय रथों की सुरक्षा के लिए हम शत्रु सैनिकों पर आक्रमण करने वाले, शत्रुओं के लिए अजेय, बलशाली इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं॥४॥

अभिष्टये सदावृधं स्वर्मीळ्हेषु यं नरः ।
नाना हवन्त ऊतये ॥५॥

सभी लोग संग्राम में अपनी सुरक्षा के लिए तथा अभीष्ट प्राप्ति के लिए जिनका आवाहन करते हैं, हमेशा विकासमान उन इन्द्रदेव का हम भी आवाहन करते हैं॥५॥

परोमात्रमृचीषममिन्द्रमुग्रं सुराधसम् ।
ईशानं चिद्वसूनाम् ॥६॥

जो इन्द्रदेव अत्यन्त पराक्रमी, सम्पत्तिवान्, असीम, प्रार्थनाओं के इच्छुक तथा ऐश्वर्यों के स्वामी हैं, उन्हें हम आवाहित करते हैं॥६॥

तंतमिद्राधसे मह इन्द्रं चोदामि पीतये ।
यः पूर्व्यामनुष्टुतिमीशे कृष्टीनां नृतुः ॥७॥

जो सबके नायक हैं तथा स्तोताओं की पुरातन प्रार्थनाओं को सुनने वाले हैं, उन इन्द्रदेव का हम श्रेष्ठ सम्पत्ति की प्राप्ति हेतु, सोमपान के लिए आवाहन करते हैं॥७॥

न यस्य ते शवसान सख्यमानंश मर्त्यः ।
नकिः शवांसि ते नशत् ॥८॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! कोई भी व्यक्ति आपको मित्रता तथा सामर्थ्य की प्रतिद्वन्द्वता नहीं कर सकता॥८॥

त्वोतासस्त्वा युजाप्सु सूर्ये महद्धनम् ।
जयेम पृत्सु वज्रिवः ॥९॥

वज्र धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! आपके द्वारा संरक्षित होकर तथा आपकी कृपा प्राप्त करके हम सूर्योदय काल के यज्ञ को सम्पन्न करें । हम युद्धों में जीतकर प्रचुर सम्पत्ति प्राप्त करें॥९॥

तं त्वा यज्ञेभिरीमहे तं गीर्भिर्गिर्वणस्तम ।
इन्द्र यथा चिदाविथ वाजेषु पुरुमाय्यम् ॥१०॥

हे वंदनीय इन्द्रदेव ! हम यज्ञों तथा प्रार्थनाओं द्वारा आपका आवाहन करते हैं, जिससे संग्राम में आप हमें संरक्षण प्रदान करें॥१०॥

यस्य ते स्वादु सख्यं स्वाद्वी प्रणीतिरद्रिवः ।
यज्ञो वितन्तसाय्यः ॥११॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आपकी मित्रता तथा प्रीति मधुर एवं सुस्वादु है; अतः सभी लोग आपके निमित्त यजन करते हैं॥११॥

उरु णस्तन्वे तन उरु क्षयाय नस्कृधि ।
उरु णो यन्धि जीवसे ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारी सन्तानों के निमित्त प्रचुर ऐश्वर्य, हमारे आवास के निमित्त विशाल भवन तथा जीवन के लिए दीर्घ आयुष्य प्रदान करें॥१२॥

उरुं नृभ्य उरुं गव उरुं रथाय पन्थाम् ।
देववीतिं मनामहे ॥१३॥

हे इन्द्रदेव ! अपने परिजनों के निमित्त हम आपसे विशाल ऐश्वर्य, गौओं के निमित्त विस्तृत स्थान तथा रथों के निमित्त विस्तृत मार्ग की कामना करते हैं ! इस हेतु हम यज्ञन करते हैं॥१३॥

उप मा षड्द्वाद्वा नरः सोमस्य हर्ष्या ।
तिष्ठन्ति स्वादुरातयः ॥१४॥

सोमरस पान से आनन्दित होकर श्रेष्ठ सम्पत्ति के साथ छः नायक दो-दो की जोड़ी में हमारी ओर पधार रहे हैं॥१४॥

ऋज्राविन्द्रोत आ ददे हरी ऋक्षस्य सूनवि ।
आश्वमेधस्य रोहिता ॥१५॥

(अतिथिग्व पुत्र) इन्द्रोत से उजु (सरल प्रकृति वाले)क्ष पुत्र से प्रेरक तथा अश्वमेध के पुत्र से रोहित (लाल अथवा आरोहणशील)अश्व अथवा बल प्रवाह प्राप्त हुए॥१५॥

सुरथाँ आतिथिग्वे स्वभीशूँरार्क्षे ।

आश्वमेधे सुपेशसः ॥१६॥

अतिथिग्व के पुत्र से श्रेष्ठ रथ युक्त अक्ष पुत्र से सुन्दर लगाम (नियंत्रण तंत्र) युक्त तथा अश्वमेध के पुत्र से सुन्दर स्वरूप वाले (अश्व या प्राण प्रवाह) प्राप्त हुए॥१६॥

षळश्वाँ आतिथिग्व इन्द्रोते वधूमतः ।
सचा पूतक्रतौ सनम् ॥१७॥

अतिथिग्व के पुत्र इन्द्रोत के पवित्र कर्मानुष्ठान (यज्ञ) में हमने मादा सहित छः अश्वों को (यज्ञ) में एक साथ ग्रहण किया॥१७॥

ऐषु चेतद्वृषण्वत्यन्तर्ऋज्रेष्वरुषी ।
स्वभीशुः कशावती ॥१८॥

आसानी से चलने वाले अश्वों के मध्य में शक्तिशाली तेजस्वी तथा लगाम से युक्त (घोड़ी) भी दिखायी दे रहीं हैं॥१८॥

न युष्मे वाजबन्धवो निनित्सुश्चन मर्त्यः ।
अवद्यमधि दीधरत् ॥१९॥

अन्नदान करने वाले है बन्धुओ ! निन्दक व्यक्ति भी आपकी निन्दा करने में सक्षम नहीं हो सकता॥१९॥

# सूक्त ६९

ऋषि: प्रियमेध अंगिरस
देवता – इन्द्र:, ११ विश्वेदेवा, वरुण। छंद: अनुष्टुप, २ उष्णिक, ४-६ गायत्री, १६ पंक्ति, १७, १८ वृहती

प्रप्र वस्त्रिष्टुभमिषं मन्दद्वीरायेन्दवे ।
धिया वो मेधसातये पुरंध्या विवासति ॥१॥

हे याजको ! तीन स्तोत्रों से तैयार किये गये हविरूप अन्न (भोज्य पदार्थ) को श्रेष्ठ वीर इन्द्रदेव के लिए प्रदान करें । यज्ञ-सम्पादन के लिए विवेकपूर्वक किये गये सत्कर्मों का अभीष्ट फल प्रदान करके वे इन्द्रदेव यजमानों को सम्मानित करते हैं॥१॥

नदं व ओदतीनां नदं योयुवतीनाम् ।
पतिं वो अघ्न्यानां धेनूनामिषुध्यसि ॥२॥

हे यजमानो ! आपके लिए हम उषा को उत्पन्न करने वाले, चन्द्रकिरणों को उत्पन्न करने वाले गौओं को पालने वाले इन्द्रदेव को

बुलाते हैं; (क्योंकि आप गोदुग्ध को पोषक अन्न के रूप में प्राप्त करने की इच्छा करते हैं॥२॥

ता अस्य सूददोहसः सोमं श्रीणन्ति पृश्नयः ।
जन्मन्देवानां विशस्त्रिष्वा रोचने दिवः ॥३॥

सूर्योदय होने पर जो गौएँ (किरणे) देवताओं के जन्म स्थान (द्युलोक ) से तीनों सवनों में प्रचुर दुग्ध (रस) प्रदान करती हैं। वे अपने दुग्ध को इन्ददेव के निमित्त सोमरस में मिलाती हैं॥३॥

अभि प्र गोपतिं गिरेन्द्रमर्च यथा विदे ।
सूनुं सत्यस्य सत्पतिम् ॥४॥

हे याजको ! गोपालक, सत्यनिष्ठ, सज्जनों के संरक्षक इन्द्रदेव की मन्त्रोच्चारण सहित प्रार्थना करें, जिससे उनकी शक्तियों का आभास हो सके॥४॥

आ हरयः ससृज्रिरेऽरुषीरधि बर्हिषि ।
यत्राभि संनवामहे ॥५॥

जिन इन्द्रदेव की हम अपने यज्ञमण्डप में प्रार्थना करते हैं, उनको उत्तम अश्व यज्ञशाला में ले आएँ॥५॥

इन्द्राय गाव आशिरं दुदुह्रे वज्रिणे मधु ।
यत्सीमुपह्वरे विदत् ॥६॥

जब यज्ञस्थल के समीप ही इन्द्रदेव मधुर रस का पान करते हैं, तब गौएँ वज्रहस्त इन्द्रदेव के (पान करने के लिए मधुर दुग्ध प्रदान करती हैं॥६॥

उद्यद्ब्रध्नस्य विष्टपं गृहमिन्द्रश्च गन्वहि ।
मध्वः पीत्वा सचेवहि त्रिः सप्त सख्युः पदे ॥७॥

जब हम इन्द्रदेव के साथ सूर्यलोक में गमन करें, तब अपने सखा उन इन्द्रदेव के श्रेष्ठतम इक्कीसवें स्थान पर मीठे सोमरस का पान करके एक-दूसरे से मिलें॥७॥

अर्चत प्रार्चत प्रियमेधासो अर्चत ।
अर्चन्तु पुत्रका उत पुरं न धृष्ण्वर्चत ॥८॥

है प्रियमेध के वंशज मनुष्यो ! यज्ञ-प्रिय, सन्तान एवं साधकों की कामना को पूर्ण करने वाले तथा शत्रुओं को पराजित करने वाले इन्द्रदेव का आप सभी (श्रद्धापूरित होकर) सम्मान करें ॥८॥

अव स्वराति गर्गरो गोधा परि सनिष्वणत् ।
पिङ्गा परि चनिष्कददिन्द्राय ब्रह्मोद्यतम् ॥९॥

गर्गर स्वर ( रणवाद्यों अथवा मेघों से ) उभर रहे हैं। गोधा (हस्तरक्षक आवरण अथवा किरणों के धारणकर्ता अवरोधक) सब ओर शब्द कर रहे हैं । पिंगा ( धनुष की प्रत्यंचा अथवा विद्युत् ) की ध्वनि (टंकार या कड़क) सब ओर सुनाई देती है। ऐसे में इन्द्रदेव (पराक्रमी संरक्षक अथवा वर्षा के देवता) के लिए स्तोत्र बोलें॥९॥

आ यत्पतन्त्येन्यः सुदुघा अनपस्फुरः ।
अपस्फुरं गृभायत सोममिन्द्राय पातवे ॥१०॥

जब उज्ज्वल जल से समृद्ध नदियाँ प्रवाहित होती हैं। उस समय इन्द्रदेव के पीने के लिए श्रेष्ठ गुणों से युक्त मधुर सोमरस लेकर उपस्थित हों॥१०॥

अपादिन्द्रो अपादग्निर्विश्वे देवा अमत्सत ।
वरुण इदिह क्षयत्तमापो अभ्यनूषत वत्सं संशिश्वरीरिव ॥११॥

अग्नि, इन्द्र तथा विश्वेदेवा सोमपान करके हर्षित हुए । वरुणदेव भी यहाँ उपस्थित रहे । जिस प्रकार गौएँ अपने बच्चे को प्राप्त करने के

लिए शब्द करती हैं, उसी प्रकार हमारे स्तोत्र उन वरुणदेव की प्रार्थना करते हैं॥११॥

सुदेवो असि वरुण यस्य ते सप्त सिन्धवः ।
अनुक्षरन्ति काकुदं सूर्म्यं सुषिरामिव ॥१२॥

हे वरुणदेव ! जिस प्रकार किरणें सूर्य की ओर गमन करती हैं, उसी प्रकार आपके ओज से सातों सरिताएँ समुद्र की ओर प्रवाहित होती हैं॥१२॥

यो व्यतीँरफाणयत्सुयुक्ताँ उप दाशुषे ।
तक्वो नेता तदिद्वपुरुपमा यो अमुच्यत ॥१३॥

जो इन्द्रदेव द्रुतगामी अश्वों को रथ में नियोजित करके हविप्रदाता यजमान के पास जाते हैं, वे विशाल शरीर वाले नायक इन्द्रदेव यज्ञशाला में प्रमुख स्थान प्राप्त करते हैं॥१३॥

अतीदु शक्र ओहत इन्द्रो विश्वा अति द्विषः ।
भिनत्कनीन ओदनं पच्यमानं परो गिरा ॥१४॥

वे इन्द्रदेव अत्यन्त सौन्दर्ययुक्त तथा शक्तिशाली हैं। वे समस्त रिपुओं तथा स्तुतियों से भी परे हैं। वे जल से युक्त बादलों को नष्ट कर डालते हैं॥१४॥

अर्भको न कुमारकोऽधि तिष्ठन्नवं रथम् ।
स पक्षन्महिषं मृगं पित्रे मात्रे विभुक्रतुम् ॥१५॥

ये इन्द्रदेव अपने विशाल शरीर से नूतन रथ पर सुशोभित होते हैं। वे विविध श्रेष्ठ कर्मों को सम्पन्न करते हुए बादलों को जल बरसाने के लिए प्रेरित करते हैं॥१५॥

आ तू सुशिप्र दम्पते रथं तिष्ठा हिरण्ययम् ।
अध द्युक्षं सचेवहि सहस्रपादमरुषं स्वस्तिगामनेहसम् ॥१६॥

हे सुन्दर आकृति वाले दम्पते (इन्द्रदेव) ! सहस्रों रश्मियों से आलोकित, द्रुतगामी स्वर्णिम रथ पर आप भली प्रकार आरूढ़ हों (यहाँ आयें), तब हम दोनों एक साथ मिलेंगे॥१६॥

तं घेमित्था नमस्विन उप स्वराजमासते ।
अर्थं चिदस्य सुधितं यदेतव आवर्तयन्ति दावने ॥१७॥

उन स्वप्रकाशित इन्द्रदेव की वंदना करने वाले याजक साधना करते हैं। उसके बाद वे श्रेष्ठ सम्पत्ति तथा सद्बुद्धि ग्रहण करते हैं॥१७॥

अनु प्रत्नस्यौकसः प्रियमेधास एषाम् ।
पूर्वामनु प्रयतिं वृक्तबर्हिषो हितप्रयस आशत ॥१८॥

कुश-आसन फैलाने वाले तथा यज्ञों में हविष्यान्न प्रदान करने वाले 'प्रियमेध'अघि की सन्तानों ने उन इन्द्रदेव के शाश्वत निवासस्थल (स्वर्ग) को प्राप्त किया॥१८॥

# सूक्त ७०

ऋषि: पुरुष्टन्मा अंगिरस
देवता – इन्द्र । छंद: वृहती, १-६ प्रगाथ:

यो राजा चर्षणीनां याता रथेभिरध्रिगुः ।
विश्वासां तरुता पृतनानां ज्येष्ठो यो वृत्रहा गृणे ॥१॥

मानवों के अधिपति, वेगवान् , शत्रु-सेना के संहारक, वृत्रहन्ता, श्रेष्ठ इन्द्रदेव की हम स्तुति करते हैं॥१॥

इन्द्रं तं शुम्भ पुरुहन्मन्नवसे यस्य द्विता विधर्तरि ।
हस्ताय वज्रः प्रति धायि दर्शतो महो दिवे न सूर्यः ॥२॥

हे साधक ! अपनी रक्षा के लिए देवराज इन्द्र की उपासना करो। जिनके संरक्षण में (देवत्व की) रक्षा एवं ( असुरता के) विनाश की दोहरी शक्ति है । वे इन्द्रदेव, सूर्य के समान तेजस्वीं वज्र को हाथ में धारण करते हैं॥२॥

नकिष्टं कर्मणा नशद्यश्चकार सदावृधम् ।
इन्द्रं न यज्ञैर्विश्वगूर्तमृभ्वसमधृष्टं धृष्ण्वोजसम् ॥३॥

स्तुत्य, महाबलशाली, समृद्ध, अपराजित, शत्रुओं का दमन करने वाले इन्द्रदेव को जो साधक यज्ञादि कर्मा द्वारा अपना सहचर (अनुकूल) बना लेता है, उसके कर्मों को कोई नष्ट नहीं कर सकती॥३॥

अषाळ्हमुग्रं पृतनासु सासहिं यस्मिन्महीरुरुज्रयः ।
सं धेनवो जायमाने अनोनवुर्द्यावः क्षामो अनोनवुः ॥४॥

जिन इन्द्रदेव के प्राकट्य पर महान् वेगवाली गौएँ ( किरणें ) और पृथ्वी तथा आकाश भी उनके समक्ष झुककर अभिवादन करते हैं, उन उग्र, शत्रु विजेता और पराक्रमी इन्द्रदेव की हम स्तुति करते हैं॥४॥

यद्द्याव इन्द्र ते शतं शतं भूमीरुत स्युः ।
न त्वा वज्रिन्त्सहस्रं सूर्या अनु न जातमष्ट रोदसी ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! सैकड़ों देवलोक, सैकड़ों भूमियाँ तथा हजारों सूर्य भी यदि उत्पन्न हो जाएँ, तो भी आपकी समानता नहीं कर सकते । द्यावा-पृथिवी में (कोई भी) आपकी बराबरी करने वाला नहीं है॥५॥

आ पप्राथ महिना वृष्ण्या वृषन्विश्वा शविष्ठ शवसा ।
अस्माँ अव मघवन्गोमति व्रजे वज्रिञ्चित्राभिरूतिभिः ॥६॥

हे बलशाली इन्द्रदेव ! आप अपनी सामर्थ्य से सभी की इच्छा पूरी करते हैं । हे बलवान्, धनवान्, वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप गौयुक्त (पोषण साधनों सहित) हमें संरक्षण प्रदान करे॥६॥

न सीमदेव आपदिषं दीर्घायो मर्त्यः ।
एतग्वा चिद्य एतशा युयोजते हरी इन्द्रो युयोजते ॥७॥

हे दीर्घजीवी इन्द्रदेव ! (जो व्यक्ति) शुभवर्ण वाले दो अश्वों (उज्ज्वल चिंतन-चरित्र) को अपने जीवन के) साथ जोड़ता है, उसी के साथ हर्यांश्व ( इन्द्र के दोनों हरित अश्व ) भी जुड़ जाते हैं॥७॥

तं वो महो महाय्यमिन्द्रं दानाय सक्षणिम् ।
यो गाधेषु य आरणेषु हव्यो वाजेष्वस्ति हव्यः ॥८॥

हे याजको ! मित्रवत् जो इन्द्रदेव सामान्य स्थानों, निवास स्थानों तथा संग्रामों में आवाहनीय हैं। आप उनकी धन-ऐश्वर्य प्राप्त करने के निमित्त प्रार्थना करें॥८॥

उदू षु णो वसो महे मृशस्व शूर राधसे ।
उदू षु मह्यै मघवन्मघत्तय उदिन्द्र श्रवसे महे ॥९॥

पराक्रमी तथा सम्पत्तिवान् हे इन्द्रदेव ! आप हमें श्रेष्ठ सम्पत्ति प्रदान करने के लिए विकसित करें । आप हमें इस योग्य बनाएँ, जिससे हम श्रेष्ठ अन्न ग्रहण कर सकें॥९॥

त्वं न इन्द्र ऋतयुस्त्वानिदो नि तृम्पसि ।
मध्ये वसिष्व तुविनृम्णोर्वोर्नि दासं शिश्नथो हथैः ॥१०॥

अति पराक्रमी हे इन्द्रदेव ! आप यज्ञ की रक्षा करने वाले हैं। आप निन्दकों के ऐश्वर्य को छीनकर हमें सन्तुष्ट करें । आप शस्त्रों के द्वारा दस्युओं का संहार करके हमें अपना महान् आश्रय प्रदान करें॥१०॥

अन्यव्रतममानुषमयज्वानमदेवयुम् ।
अव स्वः सखा दुधुवीत पर्वतः सुघ्नाय दस्युं पर्वतः ॥११॥

(इन्द्रदेव के) सखारूप पर्वत-ऋषि देवताओं के निन्दक, मानवता से शून्य अयाज्ञिकों तथा धार्मिक कृत्य न करने वालों को स्वर्ग से पतित कर देते हैं । ऐसे दुष्टों को पर्वत ऋषि वध करने वाले योद्धाओं को सौंप देते हैं॥११॥

त्वं न इन्द्रासां हस्ते शविष्ठ दावने ।
धानानां न सं गृभायास्मयुर्द्विः सं गृभायास्मयुः ॥१२॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! आप हमारी अभिलाषाओं की पूर्ति करने वाले हैं। जिस प्रकार याजक धान की खील (लाजा) को यज्ञार्थ हाथ में लेते हैं, उसी प्रकार आप हमारे लिए अपने हाथ में (दानार्थ) गौएँ लें, पुनः पुत्र लें ( अर्थात् गौएँ एवं पुत्र प्रदान करें )॥१२॥

सखायः क्रतुमिच्छत कथा राधाम शरस्य ।
उपस्तुतिं भोजः सूरिर्यो अह्रयः ॥१३॥

हे मित्रो ! हम उन अन्न प्रदाता, कपटरहित तथा ज्ञानी इन्द्रदेव की किस तरह से प्रार्थना करें, जो शौर्य प्रकट करने की अभिलाषा से शत्रुओं का संहार करने वाले हैं ?॥१३॥

भूरिभिः समह ऋषिभिर्बर्हिष्मद्भिः स्तविष्यसे ।
यदित्थमेकमेकमिच्छर वत्सान्पराददः ॥१४॥

शत्रुओं के विनाशक हे इन्द्रदेव ! आप वन्दनीय हैं, जब आप हमें अनेकों बछड़ों सहित गौएँ प्रदान करते हैं, तब अनेकों षि तथा याज्ञिक आपकी सराहना करते हैं॥१४॥

कर्णगृह्या मघवा शौरदेव्यो वत्सं नस्त्रिभ्य आनयत् ।
अजां सूरिर्न धातवे ॥१५॥

हे सम्पत्तिवान् इन्द्रदेव ! जिस प्रकार समझदार मालिक बकरी को कान पकड़कर लाते हैं, उसी प्रकार आप पराक्रम से प्राप्त होने वाली दिव्य गौओं ( यो शक्तियों) को हमारे लिए ले आएँ॥१५॥

# सूक्त ७१

ऋषि: सुदीती पुरमीलहावांगिरसौ, त्योर्वान्तर:
देवता – इन्द्र । छंद: गायत्री

त्वं नो अग्ने महोभिः पाहि विश्वस्या अरातेः ।
उत द्विषो मर्त्यस्य ॥१॥

हे अग्ने ! संसार से द्वेष करने वाले व्यक्तियों एवं शत्रुओं से हमारी रक्षा करें और विषम परिस्थितियों में हमें धैर्यवान् बनाएँ॥१॥

नहि मन्युः पौरुषेय ईशे हि वः प्रियजात ।
त्वमिदसि क्षपावान् ॥२॥

जन्म से ही प्रिय लगने वाले हे अग्निदेव ! किसी पापी का क्रोध आपके भक्तों पर शासन नहीं कर सकता। आप रात्रि में भी आलोकित होते हैं॥२॥

स नो विश्वेभिर्देवेभिरूर्जो नपाद्भद्रशोचे ।
रयिं देहि विश्ववारम् ॥३॥

शक्ति को क्षीण न होने देने वाले हे अग्निदेव ! आप कल्याणकारी आलोक से सम्पन्न हैं । आप समस्त देवताओं के द्वारा हमें वरणीय ऐश्वर्य प्रदान कराएँ॥३॥

न तमग्ने अरातयो मर्तं युवन्त रायः ।
यं त्रायसे दाश्वांसम् ॥४॥

हे अग्निदेव ! आप जिन हवि प्रदाता मनुष्यों को संरक्षण प्रदान करते हैं, उनको कोई दुराचारी व्यक्ति ऐश्वर्य से वंचित नहीं कर सकता॥४॥

यं त्वं विप्र मेधसातावग्ने हिनोषि धनाय ।
स तवोती गोषु गन्ता ॥५॥

हे ज्ञानी अग्निदेव ! आप जिन याज्ञकों को ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिए यज्ञ-कृत्यों में प्रेरित करते हैं, वे आपके संरक्षण में गौओं से युक्त होते हैं॥५॥

त्वं रयिं पुरुवीरमग्ने दाशुषे मर्ताय ।
प्र णो नय वस्यो अच्छ ॥६॥

हे अग्निदेव ! आप आहुति प्रदाताओं को योद्धाओं से युक्त श्रेष्ठ ऐश्वर्य प्रदान करते हैं । अत: हमें भी प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करें॥६॥

उरुष्या णो मा परा दा अघायते जातवेदः ।
दुराध्ये मर्ताय ॥७॥

समस्त पदार्थों के ज्ञाता हे अग्निदेव ! आप हमें संरक्षण प्रदान करें। आप हमें पापी तथा हिंसक मनुष्यों के अधीन न होने दें॥७॥

अग्ने माकिष्टे देवस्य रातिमदेवो युयोत ।
त्वमीशिषे वसूनाम् ॥८॥

हे तेजस्वी अग्निदेव ! आप ही समस्त ऐश्वर्यों के स्वामी हैं। कोई दुराचारी व्यक्ति आपके द्वारा प्रदत्त दान से हमें वंचित न करे॥८॥

स नो वस्व उप मास्यूर्जो नपान्माहिनस्य ।
सखे वसो जरितृभ्यः ॥९॥

शक्ति के पुत्र तथा अनेकों को निवास प्रदान करने वाले हे अग्निदेव ! हम स्तुति करने वालों को आप महानता से सम्पन्न श्रेष्ठ ऐश्वर्य प्रदान करें॥९॥

अच्छा नः शीरशोचिषं गिरो यन्तु दर्शतम् ।
अच्छा यज्ञासो नमसा पुरूवसुं पुरुप्रशस्तमूतये ॥१०॥

हमारी प्रार्थनाएँ भली प्रकार से प्रज्वलित ज्वालाओं से सुशोभित और दर्शन योग्य अग्निदेव के समीप सहजता से जाएँ । हमारी रक्षा के लिए घृतयुक्त हवियों से सम्पन्न यज्ञ, प्रचुर सम्पदा से युक्त और अति प्रशंसनीय अग्निदेव को प्राप्त हों॥१०॥

अग्निं सूनुं सहसो जातवेदसं दानाय वार्याणाम् ।
द्विता यो भूदमृतो मर्त्येष्वा होता मन्द्रतमो विशि ॥११॥

हम दान की प्राप्ति की कामना से बल के पुत्र जातवेदा अग्निदेव का आवाहन करते हैं । वे दो रूपों वाले हैं, मरणधर्मा प्रजाओं ( मनुष्यों ) में वे 'होता' तथा अमरदेवों के लिए वे 'आनन्दरूप ' हैं॥११॥

अग्निं वो देवयज्ययाग्निं प्रयत्यध्वरे ।
अग्निं धीषु प्रथममग्निमर्वत्यग्निं क्षैत्राय साधसे ॥१२॥

हे याजको ! यज्ञ के लिए हम अग्निदेव की प्रार्थना करते हैं । यज्ञाग्नि के प्रदीप्त होने पर समस्त विवेकपूर्ण कार्यों में संलग्न रहते हुए तथा क्षेत्रीय लाभ के लिए सर्वप्रथम उन अग्निदेव की हम उपासना करते हैं॥१२॥

अग्निरिषां सख्ये ददातु न ईशे यो वार्याणाम् ।
अग्निं तोके तनये शश्वदीमहे वसुं सन्तं तनूपाम् ॥१३॥

वे अविनाशी अग्निदेव समस्त प्राणियों के पालन करने वाले तथा सभी के अन्दर निवास करने वाले हैं। वे श्रेष्ठ ऐश्वर्यों के अधिष्ठाता तथा हमारे सखा हैं । हम अपनी सन्तानों के निमित्त उनसे प्रचुर ऐश्वर्य एवं अन्न की कामना करते हैं॥१३॥

अग्निमीळिष्वावसे गाथाभिः शीरशोचिषम् ।
अग्निं राये पुरुमीळ्ह श्रुतं नरोऽग्निं सुदीतये छर्दिः ॥१४॥

हे स्तोताओ ! विस्तृत-विकराल ज्वालाओं वाले अग्निदेव की स्तुति करो। उद्गातागण उन प्रसिद्ध अग्निदेव से धन तथा श्रेष्ठ प्रकाशयुक्त आवास-प्राप्ति हेतु प्रार्थना करते हैं॥१४॥

अग्निं द्वेषो योतवै नो गृणीमस्यग्निं शं योश्च दातवे ।
विश्वासु विक्ष्ववितेव हव्यो भुवद्वस्तुर्ऋषूणाम् ॥१५॥

वे अग्निदेव शासक के सदृश सम्पूर्ण प्रजाओं के संरक्षक तथा ऋषियों को निवास प्रदान करने वाले हैं। अपने रिपुओं को दूर हटाने, हर्ष तथा अभय प्राप्त करने के लिए हम उन स्तुत्य अग्निदेव की साधना करते हैं॥१५॥

# सूक्त ७२

ऋषि: हर्यत: प्रागाथ:
देवता – अग्नि: हवींषि । छंद: गायत्री

हविष्कृणुध्वमा गमदध्वर्युर्वनते पुनः ।
विद्वाँ अस्य प्रशासनम् ॥१॥

हे याजको ! आप सब आहुतियाँ प्रदान करें, (क्योंकि अग्निदेव प्रकट हो गए हैं। ये (याजक) आहुतियाँ प्रदान करने में कुशल हैं, पुन:-पुन: आहुतियाँ प्रदान करते हैं॥१॥

नि तिग्ममभ्यंशुं सीदद्धोता मनावधि ।
जुषाणो अस्य सख्यम् ॥२॥

तीक्ष्ण लपटों वाले अग्निदेव के समीप जो याजकगण आसीन होते हैं, उनका सम्बन्ध अग्निदेव से मित्रवत् होता है॥२॥

अन्तरिच्छन्ति तं जने रुद्रं परो मनीषया ।
गृभ्णन्ति जिह्वया ससम् ॥३॥

याजकगण, रुद्र के समान अग्निदेव को प्रतिष्ठित करने की आकांक्षा करते हैं । वे सुप्त अग्नि को जिह्वा (मन्त्रों) द्वारा प्रदीप्त करते हैं॥३॥

जाम्यतीतपे धनुर्वयोधा अरुहद्वनम् ।
दृषदं जिह्वयावधीत् ॥४॥

अन्न प्रदान करने वाले अग्निदेव प्रदीप्त होकर अन्तरिक्ष का अतिक्रमण कर जाते हैं । वे वनसमूह या जलसमूह ( मेघों ) पर भी ( विद्युत् रूप में) आरूढ़ हो जाते हैं। वे अपनी जिह्वा ( लपटों) से मेघों ( या शिलाओं हिमशिलाओं) को विदीर्ण कर देते हैं॥४॥

चरन्वत्सो रुशन्निह निदातारं न विन्दते ।
वेति स्तोतव अम्ब्यम् ॥५॥

बच्चे के सदृश उछलने वाले अग्निदेव जाज्वल्यमान होकर, प्रार्थना करने वाले स्तोताओं की कामना करते हैं। कोई भी निन्दा करने वाला व्यक्ति उनको नहीं प्राप्त कर सकता ॥५॥

उतो न्वस्य यन्महदश्वावद्योजनं बृहद् ।

दामा रथस्य दद्दशे ॥६॥

उन अग्निदेव के महिमामय तथा विशाल रथ अश्वों से सम्पन्न हैं उन रथों की लगाम भी दिखने लगी है॥६॥

दुहन्ति सप्तैकामुप द्वा पञ्च सृजतः ।
तीर्थे सिन्धोरधि स्वरे ॥७॥

सिन्धु तट पर, स्व प्रकाशित तीर्थ में, सात मिलकर एक का दोहन करते हैं। उनमें से दो, पाँच को प्रेरित करते हैं॥७॥

आ दशभिर्विवस्वत इन्द्रः कोशमचुच्यवीत् ।
खेदया त्रिवृता दिवः ॥८॥

अग्निदेव दस विवस्वतों एवं त्रिविध दीप्तियों के द्वारा दिव्य (अथवा द्युलोक के) कोष को विदीर्ण (उपयोग के लिए खोल देते हैं॥८॥

परि त्रिधातुरध्वरं जूर्णिरेति नवीयसी ।
मध्वा होतारो अञ्जते ॥९॥

तीन रंगों वाले (काला, लाल, सफेद) द्रुतगामी अग्निदेव, अपनी अभिनव ज्वालाओं के द्वारा यज्ञ की ओर गमन करते हैं । होतागण उनको घृत की हवियों से सिंचित करते हैं॥९॥

सिञ्चन्ति नमसावतमुच्चाचक्रं परिज्मानम् ।
नीचीनबारमक्षितम् ॥१०॥

जिसका चक्र ऊपर (अंतरिक्ष में स्थित है । चारों ओर से नीचे झुकता हुआ जिसका निचला द्वार क्षीण नहीं है। उस महान् को नमन करते हुए यज्ञकर्ता हवन करते हैं॥१०॥

अभ्यारमिदद्रयो निषिक्तं पुष्करे मधु ।
अवतस्य विसर्जने ॥११॥

सम्मानित अध्वर्युगण यज्ञ के समीप पधारकर, शेष मधुर सोमरस को महावीर (पात्र या महान् पराक्रमी इन्द्रदेव) के विसर्जन के अवसर पर स्थापित करते हैं॥११॥

गाव उपावतावतं मही यज्ञस्य रप्सुदा ।
उभा कर्णा हिरण्यया ॥१२॥

सूर्य-रश्मियाँ यज्ञार्थ आएँ, वे पृथ्वी को (उर्वर बनाकर) यज्ञीय रूप प्रदान करने वाली हैं, जिनके दोनों छोर चमकीले हैं॥१२॥

आ सुते सिञ्चत श्रियं रोदस्योरभिश्रियम् ।
रसा दधीत वृषभम् ॥१३॥

हे अध्वर्यो ! आकाश और पृथ्वी में देदीप्यमान दुग्ध ( धवल किरणों) से सोम का मिश्रण करो; ( क्योंकि बाद में वह दुग्ध बलशाली सोम को आत्मसात् कर लेता है और स्वयं अत्यधिक बलशाली बन जाता है)॥१३॥

ते जानत स्वमोक्यं सं वत्सासो न मातृभिः ।
मिथो नसन्त जामिभिः ॥१४॥

वे गौएँ ( पोषक किरणें ) अपने स्थानों को जानती हैं, जिस प्रकार बछड़े भीड़ में विद्यमान होते हुए भी अपनी माताओं के पास चले जाते हैं, उसी प्रकार ये गौएँ (दिव्य किरणे) भी अपने बन्धुओं (समान गुण-धर्म वालों) के पास चली जाती हैं॥१४॥

उप स्रक्केषु बप्सतः कृण्वते धरुणं दिवि ।
इन्द्रे अग्ना नमः स्वः ॥१५॥

भक्षण करने वाली ज्वालाओं से प्राप्त अन्न और दुग्ध को इन्द्रदेव और अग्निदेव यज्ञ (यज्ञीय प्रक्रिया) द्वारा आकाश में विकीर्ण कर देते हैं। तत्पश्चात् इन्द्रदेव और अग्निदेव को सभी (प्रकृति के अंग-अवयव या देवशक्तियाँ) दुग्ध (पोषक पदार्थ) देते हैं॥१५॥

अधुक्षत्पिप्युषीमिषमूर्जं सप्तपदीमरिः ।
सूर्यस्य सप्त रश्मिभिः ॥१६॥

वायुदेव ने सूर्यदेव की सप्त रश्मियों से पुष्ट हुए अन्न एवं रस का दोहन (यज्ञीय प्रक्रिया के अन्तर्गत) सप्त पद वाली ( वाणियों-मंत्रों) के संयोग से किया॥१६॥

सोमस्य मित्रावरुणोदिता सूर आ ददे ।
तदातुरस्य भेषजम् ॥१७॥

हे मित्र और वरुणदेव ! सूर्योदय के समय शक्तिदायक सोमरस को हम प्राप्त करते हैं, क्योंकि वह रोगियों के लिए औषधिरूप है॥१७॥

उतो न्वस्य यत्पदं हर्यतस्य निधान्यम् ।
परि द्यां जिह्वयातनत् ॥१८॥

आलोकवान् अग्निदेव अपने निर्धारित स्थल पर आसीन होकर, अपनी ज्वालाओं को सम्पूर्ण अन्तरिक्ष में फैलाते हैं॥१८॥

# सूक्त ७३

ऋषि: गोपवन  आत्रेय: सप्तवाध्रिर्वा
देवता –  आश्विनौ । छंद:  गायत्री

उदीराथामृतायते युञ्जाथामश्विना रथम् ।
अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप अपने रथ को नियोजित करके सुगम मार्गों से गमन करते हुए पधारें । आपका संरक्षण सदा हमारे पास रहे॥१॥

निमिषश्चिज्जवीयसा रथेना यातमश्विना ।
अन्ति षद्भूतु वामवः ॥२॥

हे अश्विनीकुमारो !आप अत्यन्त द्रुतगामी रथ द्वारा पधारें । आपके संरक्षण-साधन हमेशा हमारे समीप रहें॥२॥

उप स्तृणीतमत्रये हिमेन घर्ममश्विना ।

अन्ति षद्भूतु वामवः ॥३॥

हे अश्विनीकुमारो ! अग्निदेव की ज्वलनशीलता को आप 'अत्रि ऋषि के निमित्त बर्फ द्वारा रोके । आपके संरक्षण-साधन सदैव हमारे पास रहें॥३॥

कुह स्थः कुह जग्मथुः कुह श्येनेव पेतथुः ।
अन्ति षद्भूतु वामवः ॥४॥

हे अश्विद्वय ! आप कहाँ निवास करते हैं? आप किस जगह गये थे? आप बाज़ पक्षी के समान कहाँ से आ रहे हैं? आपका संरक्षण सदा हमारे पास रहे॥४॥

यदद्य कर्हि कर्हि चिच्छुश्रूयातमिमं हवम् ।
अन्ति षद्भूतु वामवः ॥५॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप चाहे जहाँ हों, हमारी पुकार को सुनकर आपके संरग-साधन सदैव हमारे पास रहें॥५॥

अश्विना यामहूतमा नेदिष्ठं याम्याप्यम् ।
अन्ति षद्भूतु वामवः ॥६॥

आवाहन करने योग्य दोनों अश्विनीकुमारों को हम अपना आत्मीय मित्र जानकर उनके समीप जाते हैं। उनके संरक्षण-साधन सदैव हमारे पास रहें॥६॥

अवन्तमत्रये गृहं कृणुतं युवमश्विना ।
अन्ति षद्भूतु वामवः ॥७॥

हे अश्विनीकुमारो ! 'अत्रि ऋषि के निमित्त आपने संरक्षणयुक्त आवास विनिर्मित किया था। अत: आपके रक्षण-साधन हमेशा हमारे समीप रहें॥७॥

वरेथे अग्निमातपो वदते वल्ग्वत्रये ।
अन्ति षद्भूतु वामवः ॥८॥

हे अश्विनीकुमारो ! श्रेष्ठ वाणी से आपके निमित्त स्तोत्र उच्चरित करने वाले 'अत्रि ऋषि को आप अग्नि की ज्वलनशीलता से सुरक्षित करें। आपके संरक्षण-साधन सदैव हमारे पास रहें॥८॥

प्र सप्तवध्रिराशसा धारामग्नेरशायत ।
अन्ति षद्भूतु वामवः ॥९॥

हे अश्विनीकुमारो ! सप्तवधि (एक ऋषि अथवा सप्त किरणों या अश्वों) को नियोजित करने वाले सूर्यदेव ने, आशा भरे स्तोत्रों से प्रेरित होकर अग्नि की ज्वालाओं को मंजूषा से बाहर करके धरती पर फैला दिया। आपके संरक्षण-साधन सदैव हमारे पास रहें॥९॥

इहा गतं वृषण्वसू शृणुतं म इमं हवम् ।
अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१०॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप ऐश्वर्य की वर्षा करने वाले हैं। आप स्तुतियों को सुनकर हमारे समीप पधारें । आपके रक्षण-साधन सदैव हमारे समीप रहें॥१०॥

किमिदं वां पुराणवज्जरतोरिव शस्यते ।
अन्ति षद्भूतु वामवः ॥११॥

हे अश्विनीकुमारो ! वृद्ध पुरुषों की भाँति आपको बार-बार क्यों आवाहित करना पड़ता हैं? आपके रक्षण-साधन सदैव हमारे समीप रहें॥११॥

समानं वां सजात्यं समानो बन्धुरश्विना ।
अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१२॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप दोनों का पैदा होना समान है तथा भातृत्व-भाव भी समान है । आपके रक्षण-साधन सदैव हमारे समीप रहें॥१२॥

यो वां रजांस्यश्विना रथो वियाति रोदसी ।
अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१३॥

हे अश्विनीकुमारो ! आपका रथ धरती, आकाश तथा अन्य समस्त भुवनों को लाँघकर गमन करता हैं । आपके रक्षण-साधन सदैव हमारे समीप रहें॥१३॥

आ नो गव्येभिरश्व्यैः सहस्रैरुप गच्छतम् ।
अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१४॥

हे अश्विनीकुमारो ! सहस्रों अश्वों तथा गौओं के समूह के साथ हमारे निकट पधारें । आपके रक्षण-साधन सदैव हमारे समीप रहें॥१४॥

मा नो गव्येभिरश्व्यैः सहस्रेभिरति ख्यतम् ।
अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१५॥

हे अश्विनीकुमारो ! सहस्रों अश्वों तथा गौओं के समूह से आप हमें वंचित न करें । आपके रक्षण-साधन सदैव हमारे समीप रहें॥१५॥

अरुणप्सुरुषा अभूदकर्ज्योतिर्ऋतावरी ।
अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१६॥

हे अश्विनीकुमारो ! प्रात: अरुणोदय के समय आकाश लालिमायुक्त हो गया है और यज्ञों के साथ आलोक प्रसरित होने वाला है। इसलिए आपके रक्षण-साधन सदैव हमारे समीप रहें॥१६॥

अश्विना सु विचाकशद्वृक्षं परशुमाँ इव ।
अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१७॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार कुल्हाड़ी से युक्त मनुष्य वृक्षों को काट डालते हैं, उसी प्रकार आलोकवान् सूर्यदेव, तम को नष्ट करके उदित हो गये हैं। आपके रक्षण-साधन सदैव हमारे समीप रहें॥१७॥

पुरं न धृष्णवा रुज कृष्णया बाधितो विशा ।
अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१८॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार इन्द्रदेव ने दुष्कर्मयों के नगरों को विनष्ट किया था, उसी प्रकार आप भी उन काले कर्म करने वालों (रोगों) का विनाश करें । आपके रक्षण-साधन सदैव हमारे समीप रहें॥१८॥

# सूक्त ७४

ऋषि: गोपवन आत्रेय:
देवता – अग्नि, १३-१५ आर्ष: श्रुतर्वा। छंद: १-१२ अनुष्टुम्मुख , प्रगाथ

विशोविशो वो अतिथिं वाजयन्तः पुरुप्रियम् ।
अग्निं वो दुर्यं वचः स्तुषे शूषस्य मन्मभिः ॥१॥

अन्न एवं बल चाहने वाले, हे मनुष्यो ! सर्वप्रिय एवं सर्वपूज्य अग्निदेव की स्तुति करो। हम (त्विग्गण) भी इन (गृहपति) अग्निदेव की सुखदायक स्तोत्रों से स्तुति करते हैं॥१॥

यं जनासो हविष्मन्तो मित्रं न सर्पिरासुतिम् ।
प्रशंसन्ति प्रशस्तिभिः ॥२॥

हविदाता मित्र के समान घृतादि से यज्ञ सम्पन्न करते हुए वैदिक स्तोत्रों से अग्निदेव का धन करते हैं॥२॥

पन्यांसं जातवेदसं यो देवतात्युद्यता ।
हव्यान्यैरयद्दिवि ॥३॥

स्तुत्य, सर्वज्ञान युक्त अग्निदेव की हम प्रशंसा करते हैं । अग्निदेव यज्ञ में प्रदत्त हविष्यान्न को देवलोक तक पहुँचाने में सहायक हैं॥३॥

आगन्म वृत्रहन्तमं ज्येष्ठमग्निमानवम् ।
यस्य श्रुतर्वा बृहन्नार्क्षो अनीक एधते ॥४॥

ऋक्षपुत्र श्रुतर्वा की (वृद्धि) हेतु, प्रचण्ड ज्वालाओं वाले, वृत्र संहारक, श्रेष्ठ, मनुष्यों के लिए हितकारी अग्निदेव का हम वरण (उपासना करते हैं॥४॥

अमृतं जातवेदसं तिरस्तमांसि दर्शतम् ।
घृताहवनमीड्यम् ॥५॥

वे अविनाशी अग्निदेव समस्त पदार्थों के ज्ञाता तथा अन्धकार को नष्ट करके दिखने वाले हैं। घृत से आहुतियाँ देने योग्य (उन) की हम स्तुति करते हैं॥५॥

सबाधो यं जना इमेऽग्निं हव्येभिरीळते ।

जुह्वानासो यतस्रुचः ॥६॥

कामना करने वाले याजकगण अपने यज्ञों में सुवा-पात्र को लेकर जिन अग्निदेव को आहुतियाँ समर्पित करते हैं, हम उनकी स्तुति करते हैं॥६॥

इयं ते नव्यसी मतिरग्ने अधाय्यस्मदा ।
मन्द्र सुजात सुक्रतोऽमूर दस्मातिथे ॥७॥

दर्शनीय तथा अतिथि के समान वन्दनीय हे अग्निदेव ! आप अत्यन्त प्रज्ञावान्, हर्षदायक तथा सत्कर्म करने वाले हैं । आपकी प्रशंसनीय मेधा हमारे अन्दर स्थापित हो॥७॥

सा ते अग्ने शंतमा चनिष्ठा भवतु प्रिया ।
तया वर्धस्व सुष्टुतः ॥८॥

हे अग्निदेव ! हमारे द्वारा सम्पन्न की गयी प्रार्थनाएँ आपके लिए हर्षदायक, अन्नप्रदायक तथा प्रिय हों । उसे ग्रहण करके आप समृद्ध हों॥८॥

सा द्युम्नैर्द्युम्निनी बृहदुपोप श्रवसि श्रवः ।
दधीत वृत्रतूर्ये ॥९॥

हे अग्निदेव ! आप हमारी तेजस्वी प्रार्थनाओं को ग्रहण करके हमें ऐसी शक्ति प्रदान करें, जिससे हम संग्राम में रिपुओं को परास्त कर श्रेष्ठ कीर्ति प्राप्त कर सकें॥९॥

अश्वमिद्गां रथप्रां त्वेषमिन्द्रं न सत्पतिम् ।
यस्य श्रवांसि तूर्वथ पन्यम्पन्यं च कृष्टयः ॥१०॥

जो अग्निदेव अपनी शक्ति के द्वारा मनुष्यों को श्रेष्ठ सम्पत्ति तथा अन्न प्रदान करते हैं, सत्पुरुषों का पालन करने वाले प्रकाशमान उन अग्निदेव की सभी लोग सेवा करते हैं । वे गौओं, अश्वों, महारथियों तथा इन्द्रदेव के समान हैं॥१०॥

यं त्वा गोपवनो गिरा चनिष्ठदग्ने अङ्गिरः ।
स पावक श्रुधी हवम् ॥११॥

गोपवन (इस नाम के ऋषि, पवित्र इन्द्रियों वाले साधक) की स्तुति द्वारा प्रकट हुए, शरीरावयवों में सूक्ष्म रूप से विद्यमान, सबको पवित्र करने वाले हे अग्निदेव ! आप हमारी प्रार्थना ध्यान से सुनें॥११॥

यं त्वा जनास ईळते सबाधो वाजसातये ।

स बोधि वृत्रतूर्ये ॥१२॥

हे अग्निदेव ! सामर्थ्य प्राप्त करने के लिए विपित्तग्रस्त लोग आपकी प्रार्थना करते हैं। रिपुओं का संहार करने के लिए आप जागरूक हों॥१२॥

अहं हुवान आर्क्षे श्रुतर्वणि मदच्युति ।
शर्धांसीव स्तुकाविनां मृक्षा शीर्षा चतुर्णाम् ॥१३॥

ऋक्ष (पराक्रमी) के पुत्र श्रुतर्वा (अश्वों-गतिशीलों के स्वामी) रिषुओं के अभिमान को नष्ट करने वाले हैं। उनके यज्ञ में हमने चार अश्वों के सिर को भेड़ों के बालों के सदृश साफ किया॥१३॥

मां चत्वार आशवः शविष्ठस्य द्रवित्नवः ।
सुरथासो अभि प्रयो वक्षन्वयो न तुग्र्यम् ॥१४॥

जिस प्रकार तुम पुत्र 'भुज्यु' को अश्विनीकुमारों के यानों ने उनके लक्ष्य तक पहुँचाया था, उसी प्रकार शक्तिशाली ( श्रुतर्वा) के चार द्रुतगामी घोड़े उनके रथ में नियोजित होकर हमें गन्तव्य स्थान तक पहुँचाते हैं॥१४॥

सत्यमित्त्वा महेनदि परुष्ण्यव देदिशम् ।
नेमापो अश्वदातरः शविष्ठादस्ति मर्त्यः ॥१५॥

हे महान् सरिता परुष्णि तथा जल-समूह ! हम आपसे, वास्तविक रूप से निवेदन करते हैं कि इस शक्तिशाली ( श्रुतर्वा) से श्रेष्ठ, अश्वों (पराक्रम) का दान करने वाला कोई अन्य नहीं है॥१५॥

# सूक्त ७५

ऋषि: विरूप अंगिरस
देवता – अग्नि। छंद: गायत्री

युक्ष्वा हि देवहूतमाँ अश्वाँ अग्ने रथीरिव ।
नि होता पूर्व्यः सदः ॥१॥

हे अग्ने ! देवों का आवाहन करने वाले अश्वों को सारथी के समान अपने रथ में नियोजित करें । सर्वप्रथम हविदाता होने से आप हमारे इस यज्ञानुष्ठान में प्रतिष्ठित हों॥१॥

उत नो देव देवाँ अच्छा वोचो विदुष्टरः ।
श्रद्विश्वा वार्या कृधि ॥२॥

हे अग्निदेव ! देवताओं के बीच में सर्वश्रेष्ठ विद्वान् के रूप में हमें प्रतिष्ठित करें । वरणीय हव्य को सार्थक रूप प्रदान करें॥२॥

त्वं ह यद्यविष्ठ्य सहसः सूनवाहुत ।
ऋतावा यज्ञियो भुवः ॥३॥

शक्ति के पुत्र तथा सत्य का पालन करने वाले हे अग्निदेव ! आप यजनीय हैं तथा हवियों के द्वारा प्रदीप्त होते हैं॥३॥

अयमग्निः सहस्रिणो वाजस्य शतिनस्पतिः ।
मूर्धा कवी रयीणाम् ॥४॥

ज्ञानी अग्निदेव सैकड़ों-हजारों प्रकार के अन्नों तथा धनों के सर्वोच्च अधिष्ठाता हैं॥४॥

तं नेमिमृभवो यथा नमस्व सहूतिभिः ।
नेदीयो यज्ञमङ्गिरः ॥५॥

हे (अङ्गिरा) अग्निदेव ! जिस प्रकार कुशल शिल्पकार रथ की नेमि को श्रेष्ठ बनाते हैं, उसी प्रकार देवताओं के साथ आप भी उपस्थित होकर हमारे यज्ञों को श्रेष्ठ तथा वंदनीय बनाएँ॥५॥

तस्मै नूनमभिद्यवे वाचा विरूप नित्यया ।
वृष्णे चोदस्व सुष्टुतिम् ॥६॥

हे महर्षि विरूप शक्तिशाली तथा प्रखर तेज सम्पन्न अग्निदेव की आप अपने अमृत वचनों द्वारा प्रार्थना करें॥६॥

कमु ष्विदस्य सेनयाग्नेरपाकचक्षसः ।
पणिं गोषु स्तरामहे ॥७॥

सूक्ष्म दृष्टि-सम्पन्न अग्निदेव की सेना (ज्वाला-ऊर्जा) द्वारा, गौएँ (पोषक किरणे या वर्षा) प्राप्त करने के निमित्त किस पणि (आसुरी बाधा) का हनन करें ?॥७॥

मा नो देवानां विशः प्रस्नातीरिवोस्राः ।
कृशं न हासुरघ्न्याः ॥८॥

हे अग्निदेव ! जिस प्रकार दूध देने वाली गौएँ अपने दुर्बल बछड़े का त्याग नहीं करतीं, उसी प्रकार आप भी हमारा परित्याग न करें, क्योंकि हम देवों की प्रजा (संतान) हैं॥८॥

मा नः समस्य दूढ्यः परिद्वेषसो अंहतिः ।
ऊर्मिर्न नावमा वधीत् ॥९॥

जिस तरह समुद्र की लहरें नौका को बाधा पहुँचाती हैं, उसी तरह समस्त विद्वेषियों की दुर्बुद्धि हमें ,ट न पहुँचाए॥९॥

नमस्ते अग्न ओजसे गृणन्ति देव कृष्टयः ।
अमैरमित्रमर्दय ॥१०॥

हे दिव्य क्षमता-सम्पन्न अग्ने ! समस्त साधकजन आपको नमस्कार करते हैं। आप अहितकारियों का संहार करें॥१०॥

कुवित्सु नो गविष्टयेऽग्ने संवेषिषो रयिम् ।
उरुकृदुरु णस्कृधि ॥११॥

हे अग्निदेव ! आप हमें प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करें, जिससे हम गौओं को प्राप्त कर सकें । आप हमें समृद्ध करें, क्योंकि आप उन्नत करने वाले हैं॥११॥

मा नो अस्मिन्महाधने परा वर्ग्भारभृद्यथा ।
संवर्गं सं रयिं जय ॥१२॥

हे अग्निदेव ! भारवाहक व्यक्ति की भाँति (थककर या ऊबकर) युद्ध में आप हमारा परित्याग न करें। आप हमारे लिये रिपुओं के ऐश्वर्य को जीतें॥१२॥

अन्यमस्मद्भिया इयमग्ने सिषक्तु दुच्छुना ।

वर्धा नो अमवच्छवः ॥१३॥

हे अग्निदेव ! आपकी कष्ट देने वाली सामर्थ्य, हमको छोड़कर अन्यों को भयाक्रान्त करे । आप हमारी शक्ति तथा वेग को बढ़ाएँ॥१३॥

यस्याजुषन्नमस्विनः शमीमदुर्मखस्य वा ।
तं घेदग्निर्वृधावति ॥१४॥

जिन स्तोताओं तथा याज्ञिकों के त्रुटिपूर्ण यज्ञ-कृत्यों को भी आप स्वीकार कर लेते हैं, उनकी बढ़ने वाली सम्पत्ति को संरक्षण प्रदान करते हैं॥१४॥

परस्या अधि संवतोऽवराँ अभ्या तर ।
यत्राहमस्मि ताँ अव ॥१५॥

हे अग्निदेव ! आप शत्रु-सेना के स्थान पर हमारी सेना को विजयी बनाएँ । जिस सेना के मध्य हम स्थित हैं, उसे संरक्षण प्रदान करें॥१५॥

विद्मा हि ते पुरा वयमग्ने पितुर्यथावसः ।
अधा ते सुम्नमीमहे ॥१६॥

हे अग्निदेव ! जैसे पुत्र अपने संरक्षक पिता के श्रेष्ठ सुख की कामना करते हैं, वैसे ही हे रक्षक ! प्राचीनकाल से ही प्राप्त आपके सुख को हम जानते हैं तथा उसकी कामना करते हैं॥१६॥

# सूक्त ७६

ऋषि: कुरुसुति: काण्व:
देवता – अग्नि। छंद: गायत्री

इमं नु मायिनं हुव इन्द्रमीशानमोजसा ।
मरुत्वन्तं न वृञ्जसे ॥१॥

जो इन्द्रदेव विवेकपूर्वक अपनी सामर्थ्य के द्वारा सबको नियन्त्रित करते हैं। उन मरुत्वान् इन्द्रदेव को हम रिपुओं का संहार करने के लिए आवाहन करते हैं॥१॥

अयमिन्द्रो मरुत्सखा वि वृत्रस्याभिनच्छिरः ।
वज्रेण शतपर्वणा ॥२॥

इन इन्द्रदेव ने मरुद्गणों के साथ मिलकर, सैकड़ों पर्वो वाले (गाँठों वाले) वज्र का प्रहार करके वृत्र के सिर को विदीर्ण किया॥२॥

वावृधानो मरुत्सखेन्द्रो वि वृत्रमैरयत् ।
सृजन्त्समुद्रिया अपः ॥३॥

उन इन्द्रदेव ने मरुतों की सहायता से वृत्र का संहार करके अन्तरिक्ष में स्थित जल को प्रवाहित किया॥३॥

अयं ह येन वा इदं स्वर्मरुत्वता जितम् ।
इन्द्रेण सोमपीतये ॥४॥

जिन्होंने मरुतों के सहयोग से सोमपान करने के लिए, स्वर्ग को भी जीत लिया था; ये वही इन्द्रदेव हैं ॥४॥

मरुत्वन्तमृजीषिणमोजस्वन्तं विरप्शिनम् ।
इन्द्रं गीर्भिर्हवामहे ॥५॥

हम उन मरुत्वान् इन्द्रदेव को अपनी प्रार्थनाओं द्वारा आहूत करते हैं, जो अत्यन्त ओजस्वी तथा महान् हैं॥५॥

इन्द्रं प्रत्नेन मन्मना मरुत्वन्तं हवामहे ।
अस्य सोमस्य पीतये ॥६॥

उन मरुत्वान् इन्द्रदेव को, हम अपनी पुरातन स्तुतियों द्वारा, सोमपान के निमित्त आवाहन करते हैं॥६॥

मरुत्वाँ इन्द्र मीढ्वः पिबा सोमं शतक्रतो ।
अस्मिन्यज्ञे पुरुष्टुत ॥७॥

हुर्ष की वर्षा करने वाले हे मरुत्वान् इन्द्रदेव ! आप सैकड़ों यज्ञादि सत्कर्म करने वाले हैं। अत: आप इस यज्ञ में (पधारकर) सोमरस का पान करें॥७॥

तुभ्येदिन्द्र मरुत्वते सुताः सोमासो अद्रिवः ।
हृदा हूयन्त उक्थिनः ॥८॥

वज्र धारण करने वाले हे मरुत्वान् इन्द्रदेव ! जिन स्तोताओं ने आपके निमित्त सोमरस संस्कारित किया है, वे श्रद्धापूर्वक अन्त:करण से आपका आवाहन करते हैं॥८॥

पिबेदिन्द्र मरुत्सखा सुतं सोमं दिविष्टिषु ।
वज्रं शिशान ओजसा ॥९॥

मरुतों के सखा हे इन्द्रदेव ! आप हमारे स्वर्ग प्रदायक यज्ञों में सोमपान करके, अपनी शक्ति के द्वारा वज्र की धार को तीक्ष्ण बनाएँ॥९॥

उत्तिष्ठन्नोजसा सह पीत्वी शिप्रे अवेपयः ।
सोममिन्द्र चमू सुतम् ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! पात्र में रखे हुए सोमरस को ग्रहण करें तथा सामर्थ्यशाली होकर उठे और अपनी ठोड़ी ( जबड़ों ) को चलाएँ॥१०॥

अनु त्वा रोदसी उभे क्रक्षमाणमकृपेताम् ।
इन्द्र यद्दस्युहाभवः ॥११॥

शत्रुओं के प्रति स्पर्धा का भाव रखने वाले है इन्द्रदेव ! आपके द्वारा शत्रुओं का नाश किये जाने पर द्युलोक एवं पृथ्वीलोक दोनों ही आनन्द को प्राप्त करते हैं॥११॥

वाचमष्टापदीमहं नवस्रक्तिमृतस्पृशम् ।
इन्द्रात्परि तन्वं ममे ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! सत्य को बढ़ाने वाली, नवीन कल्पनाओं वाली तथा आठ पदों वाली, आपको हम छोटी-सी स्तुति करते हैं॥१२॥

## सूक्त ७७

ऋषि: कुरुसुति: काण्व:
देवता – इन्द्र छंद: गायत्री, १०-११ प्रगाथ

जज्ञानो नु शतक्रतुर्वि पृच्छदिति मातरम् ।
क उग्राः के ह शृण्विरे ॥१॥

पैदा होते ही शतक्रतु (इन्द्रदेव) ने अपनी माता से पूछा कि कौन-कौन से विख्यात योद्धा हैं ?॥१॥

आदीं शवस्यब्रवीदौर्णवाभमहीशुवम् ।
ते पुत्र सन्तु निष्टुरः ॥२॥

इसके बाद शक्तिशाली माता ने जवाब दिया कि हे वत्स ! 'और्णवाभ' तथा 'अहीशुव' नामक राक्षस हैं, जिनका आपके द्वारा वध किया जाना चाहिए॥२॥

समित्तान्वृत्रहाखिदत्खे अराँ इव खेदया ।
प्रवृद्धो दस्युहाभवत् ॥३॥

उसके बाद वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ने रथ में अरों को बाँधने के सदृश, उन राक्षसों को रस्से से कस कर बाँध दिया । तब दस्युहन्ता इन्द्रदेव ने अपना विस्तार किया॥३॥

एकया प्रतिधापिबत्साकं सरांसि त्रिंशतम् ।
इन्द्रः सोमस्य काणुका ॥४॥

उन इन्द्रदेव ने सोमरस से परिपूर्ण तीस पात्रों का एक साथ ही पान कर लिया॥४॥

अभि गन्धर्वमतृणदबुध्नेषु रजःस्वा ।
इन्द्रो ब्रह्मभ्य इद्वृधे ॥५॥

उन इन्द्रदेव ने विद्वानों को समृद्ध करने के लिए आकाश में स्थित आधाररहित मेघों को विदीर्ण किया॥५॥

निराविध्यद्गिरिभ्य आ धारयत्पक्वमोदनम् ।
इन्द्रो बुन्दं स्वाततम् ॥६॥

इन्द्रदेव ने अस्त्रों से मेघोंको नष्ट करके जल प्रवाहित किया। इस प्रकार पृथ्वी ने परिपक्व अन्न धारण किया॥६॥

शतब्रध्न इषुस्तव सहस्रपर्ण एक इत् ।
यमिन्द्र चकृषे युजम् ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! धनुष में नियोजित होने वाला एक ही बाण है, जिसमें सैकड़ों फल तथा सहस्रों पंख हैं॥७॥

तेन स्तोतृभ्य आ भर नृभ्यो नारिभ्यो अत्तवे ।
सद्यो जात ऋभुष्ठिर ॥८॥

युद्ध में अविचल रहने वाले हे इन्द्रदेव ! शीघ्र ही प्रकट होकर आप उस बाण की सहायता से पुरुषों, नारियों तथा स्तुति करने वालों के लिए प्रचुर अन्न प्रदान करें॥८॥

एता च्यौत्नानि ते कृता वर्षिष्ठानि परीणसा ।
हृदा वीड्वधारयः ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! आप इन सेनाओं को अपने अविचल तथा मृदुल अंतःकरण से धारण करें, क्योंकि ये आपके द्वारा संघबद्ध की गई हैं॥९॥

विश्वेत्ता विष्णुराभरदुरुक्रमस्त्वेषितः ।
शतं महिषान्क्षीरपाकमोदनं वराहमिन्द्र एमुषम् ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! आपके द्वारा प्रेरणा प्राप्त कर बलशाली विष्णुदेव (पोषण प्रदायक देव) सैंकड़ों सामर्थ्यवान् बैल, जल से पूर्ण मेघ, परिपक्व क्षीर तथा समस्त पदार्थों को प्रदान करते हैं॥१०॥

तुविक्षं ते सुकृतं सूमयं धनुः साधुर्बुन्दो हिरण्ययः ।
उभा ते बाहू रण्या सुसंस्कृत ऋदूपे चिद्दृवृधा ॥११॥

हे इन्द्रदेव ! आपका बाण सोने से बना है और आपके दोनों बाहु रिपुओं के विनाशक तथा यज्ञों को समृद्ध करने वाले हैं। आपके धनुष अनेकों बाणों को छोड़ने वाले हैं तथा अच्छे ढंग से निर्मित होने के कारण अत्यधिक हर्षकारी हैं॥११॥

# सूक्त ७८

ऋषि: कुरुसुति: काण्व:
देवता – इन्द्र छंद: गायत्री, १० वृहती

पुरोळाशं नो अन्धस इन्द्र सहस्रमा भर ।
शता च शूर गोनाम् ॥१॥

हे शूरवीर इन्द्रदेव ! आप सैकड़ों गौओं के समूह, सोमरस तथा श्रेष्ठ आहार के रूप में हजारों पुरोडाश हमारे लिए प्रदान करें॥१॥

आ नो भर व्यञ्जनं गामश्वमभ्यञ्जनम् ।
सचा मना हिरण्यया ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमें सुसंस्कृत व्यञ्जन, गौ, अश्व, तेल तथा स्वर्णिम आभूषण प्रदान करें॥२॥

उत नः कर्णशोभना पुरूणि धृष्णवा भर ।

त्वं हि शृण्विषे वसो ॥३॥

श्रेष्ठ धनों से सम्पन्न, उदार हे इन्द्रदेव ! आप हमारे लिए अनेक प्रकार के कर्णाभूषण आदि प्रदान करें॥३॥

नकीं वृधीक इन्द्र ते न सुषा न सुदा उत ।
नान्यस्त्वच्छूर वाघतः ॥४॥

हे शूरवीर इन्द्रदेव ! आप सबसे महान् हैं। सभी को ऐश्वर्य आदि देने वाले हैं । याजकों को कोई नेतृत्व प्रदान करने वाला भी आपसे भिन्न नहीं है॥४॥

नकीमिन्द्रो निकर्तवे न शक्रः परिशक्तवे ।
विश्वं शृणोति पश्यति ॥५॥

उन बलशाली इन्द्रदेव को कोई परास्त नहीं कर सकता और न ही कोई उनको नष्ट कर सकता है । वे समस्त पदार्थों को देखने-सुनने वाले हैं॥५॥

स मन्युं मर्त्यानामदब्धो नि चिकीषते ।
पुरा निदश्चिकीषते ॥६॥

किसी भी व्यक्ति द्वारा पराभूत न होने वाले इन्द्रदेव, पापी लोगों के निकृष्ट क्रोध को निन्दा करने के पहले ही शान्त कर देते हैं॥६॥

क्रत्व इत्पूर्णमुदरं तुरस्यास्ति विधतः ।
वृत्रघ्नः सोमपाव्नः ॥७॥

वे कर्मशील इन्द्रदेव, वृत्र का संहार करने वाले हैं। वे सोमरस पान करने वाले हैं। मनुष्यों की इच्छाओं को तुरन्त पूर्ण करने वाले इन्द्रदेव का उदर निश्चितरूप से (सोमरस से) परिपूर्ण है॥७॥

त्वे वसूनि संगता विश्वा च सोम सौभगा ।
सुदात्वपरिह्वृता ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! कपटरहित, श्रेष्ठ ऐश्वर्य तथा समस्त सौभाग्य आप में सन्निहित हैं॥८॥

त्वामिद्यवयुर्मम कामो गव्युर्हिरण्ययुः ।
त्वामश्वयुरेषते ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! अन्न, स्वर्ण, गौ तथा अश्वों की कामना करने वाला हमारा मन आपकी ही उपासना करता है॥९॥

तवेदिन्द्राहमाशसा हस्ते दात्रं चना ददे ।
दिनस्य वा मघवन्त्सम्भृतस्य वा पूर्धि यवस्य काशिना ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! आप ऐश्वर्य से सम्पन्न हैं । आपके ही आश्रय में हम अपने हाथ में दराँती (फसल काटने वाला औजार) ग्रहण करते हैं। हमारे द्वारा तैयार किए हुए जौ की मुट्ठी द्वारा हमारे भवनों (भंडारों ) को परिपूर्ण करें॥१०॥

## ऋग्वेद – अष्टम मंडल

## *सूक्त ७९*

ऋषिः कृत्नुभार्गव
देवता – सोम। छंदः गायत्री, ९ अनुष्टुप

अयं कृत्नुरगृभीतो विश्वजिदुद्भिदित्सोमः ।
ऋषिर्विप्रः काव्येन ॥१॥

यह सोम समस्त कर्मों के कर्ता, सबको जीतने वाले, दूसरों के द्वारा अग्रहणीय तथा विश्वजित् एवं उभिद नामक सोमयज्ञों को सम्पन्न करने वाले हैं। विद्वान् ऋषि के काव्यों ( स्तोत्रों) द्वारा' ये स्तुत्य हैं॥१॥

अभ्यूर्णोति यन्नग्नं भिषक्ति विश्वं यत्तुरम् ।
प्रेमन्धः ख्यन्निः श्रोणो भूत् ॥२॥

(ये सोमदेव) वस्त्रहीनों को आच्छादित करते हैं, रोगियों के समस्त रोगों की चिकित्सा करते हैं, अन्धों को दृष्टि प्रदान करते हैं तथा लँगड़ों को गति प्रदान करते हैं॥२॥

त्वं सोम तनूकृद्भ्यो द्वेषोभ्योऽन्यकृतेभ्यः ।
उरु यन्तासि वरूथम् ॥३॥

हे सोमदेव ! आप, शरीर को कमजोर बनाने वाले (रोगरूपी) रिपुओं से सुरक्षा करने के लिए श्रेष्ठ कवच के समान हैं॥३॥

त्वं चित्ती तव दक्षैर्दिव आ पृथिव्या ऋजीषिन् ।
यावीरघस्य चिद्द्वेषः ॥४॥

हे सरल गति वाले सोमदेव ! आप अपने विवेक तथा कुशलता द्वारा हमारे विनाशकारी रिपुओं को द्यावा-पृथिवी से दूर भगाएँ॥४॥

अर्थिनो यन्ति चेदर्थं गच्छानिद्ददुषो रातिम् ।
ववृज्युस्तृष्यतः कामम् ॥५॥

ऐश्वर्य की कामना करने वाले लोग, ऐश्वर्य प्रदाता के पास जाकर अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति कर लेते हैं॥५॥

विदद्यत्पूर्व्यं नष्टमुदीमृतायुमीरयत् ।
प्रेमायुस्तारीदतीर्णम् ॥६॥

जब व्यक्ति नष्ट हुई अपनी पुरानी सम्पत्ति को पुन: प्राप्त करते हैं, उस समय वह धन उन्हें यज्ञ करने के लिए प्रेरित करता है, तभी दीर्घायु की प्राप्ति होती है॥६॥

सुशेवो नो मृळयाकुरदृप्तक्रतुरवातः ।
भवा नः सोम शं हृदे ॥७॥

हे सोमदेव ! आप हमारे हृदय के लिए हर्षकारी तथा उन्माद को दूर करने वाले हों । आप हमारे वात आदि रोगों को दूरकर हमें शान्ति प्रदान करें॥७॥

मा नः सोम सं वीविजो मा वि बीभिषथा राजन् ।

मा नो हार्दि त्विषा वधीः ॥८॥

हे ओजस्वी सोमदेव ! आप अपने ओज से हमें प्रकम्पित तथा भयाक्रान्त न करें। हमारे अन्तःकरण को पीड़ित न होने दें॥८॥

अव यत्स्वे सधस्थे देवानां दुर्मतीरीक्षे ।
राजन्नप द्विषः सेध मीढ्वो अप स्रिधः सेध ॥९॥

हर्षप्रदायक तथा तेजस्वी हे सोमदेव ! हमारे गृहों में देवताओं का अभिशाप न आए । आप हमारे रिपुओं तथा हिंसा करने वाले मनुष्यों को देखते ही, हमसे दूर भगाएँ॥९॥

# सूक्त ८०

ऋषि: एकद्यूनौघस: ।
देवता – इन्द्र , १० देवा। छंद: गायत्री, १० त्रिष्टुप

नह्यन्यं बळाकरं मर्डितारं शतक्रतो ।
त्वं न इन्द्र मृळय ॥१॥

हे शतक्रतो !हमने आपके अतिरिक्त किसी को सुख देने वाला नहीं माना, अत: आप हमें सुख प्रदान करें॥१॥

यो नः शश्वत्पुराविथामृध्रो वाजसातये ।
स त्वं न इन्द्र मृळय ॥२॥

हे अहिसित इन्द्रदेव ! पहले आपने अन्न प्राप्त करने के लिए हमें संरक्षित किया था। अब आप हमें हर प्रकार से सुख प्रदान करें॥२॥

किमङ्ग रध्रचोदनः सुन्वानस्यावितेदसि ।

कुविस्त्विन्द्र णः शकः ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आप धन दाताओं को प्रेरणा देने वाले हैं तथा याज्ञिकों के संरक्षक हैं । अतः आप हमें प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करें॥३॥

इन्द्र प्र णो रथमव पश्चाच्चित्सन्तमद्रिवः ।
पुरस्तादेनं मे कृधि ॥४॥

वज्र धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! हमारे पिछड़े हुए रथ को-आप संरक्षित करें तथा उसे आगे लाएँ॥४॥

हन्तो नु किमाससे प्रथमं नो रथं कृधि ।
उपमं वाजयु श्रवः ॥५॥

रिपुओं का संहार करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप मौन होकर क्यों बैठे हैं ? आप हमारे रथ को सबसे आगे कर दें, क्योंकि शक्ति प्रदान करने वाला अन्न आपके पास विद्यमान है॥५॥

अवा नो वाजयुं रथं सुकरं ते किमित्परि ।
अस्मान्त्सु जिग्युषस्कृधि ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! आपके लिए सभी कार्य हर तरह से आसान हैं । अन्न से सम्पन्न हमारे रथ का आप संरक्षण करें तथा संग्राम में विजयी बनाएँ॥६॥

इन्द्र दृह्यस्व पूरसि भद्रा त एति निष्कृतम् ।
इयं धीर्ऋत्वियावती ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आप इच्छाओं को पूर्ण करने वाले हैं, इसलिए आप समृद्ध हों । आप यज्ञ-कर्म को सम्पादित करने वाले हैं। हमारी हितकारी स्तुतियाँ आपके लिए किये गये सत्कर्मों की ओर गमन करती हैं ॥७॥

मा सीमवद्य आ भागुर्वी काष्ठा हितं धनम् ।
अपावृक्ता अरत्नयः ॥८॥

प्रिय न लगने वाले रिपु, हमारे समीप न आएँ । विराट् रणक्षेत्र में विद्यमान ऐश्वर्य को, वे इन्द्रदेव निन्दकों में वितरित न करें॥८॥

तुरीयं नाम यज्ञियं यदा करस्तदुश्मसि ।
आदित्पतिर्न ओहसे ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपके यज्ञ सम्बन्धी चौथे नाम की कामना करते हैं, जिसको आपने स्वयं निर्धारित किया है । आप इसी यज्ञरूप से ही सभी को ऐश्वर्य प्रदान करते हैं॥९॥

अवीवृधद्वो अमृता अमन्दीदेकद्यूर्देवा उत याश्च देवीः ।
तस्मा उ राधः कृणुत प्रशस्तं प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् ॥१०॥

हे देवियो तथा देवताओ ! स्तुतिपूर्वक सोम समर्पित करके हम 'एकचू' अषि आपको तृप्त करते हैं। तथा महानता की वृद्धि करते हैं। आप हमें उत्तम धन प्रदान करें । विवेक द्वारा ऐश्वर्य प्रदान करने वाले इन्द्रदेव उषाकाल में ही पधारें॥१०॥

# सूक्त ८१

ऋषि: कुसीदी काण्व:
देवता – इन्द्र छंद: गायत्री,

आ तू न इन्द्र क्षुमन्तं चित्रं ग्राभं सं गृभाय ।
महाहस्ती दक्षिणेन ॥१॥

महान् भुजाओं वाले हे इन्द्रदेव ! आप हमें न्यायोपार्जित, प्रशंसनीय ऐश्वर्य दाहिने हाथ से प्रदान करें॥१॥

विद्मा हि त्वा तुविकूर्मिं तुविदेष्णं तुवीमघम् ।
तुविमात्रमवोभिः ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! हम आपको ऐश्वर्यशाली, बहुमुखी पराक्रम प्रकट करने वाले, व्यापक आकारयुक्त संरक्षणकर्ता के रूप में जानते हैं॥२॥

नहि त्वा शूर देवा न मर्तासो दित्सन्तम् ।
भीमं न गां वारयन्ते ॥३॥

हे पराक्रमी इन्द्रदेव ! आप बलशाली वृषभ जैसे हैं। दान देने में प्रवृत्त आपको देवता या मनुष्य, कोई भी नहीं डिगा सकता॥३॥

एतो न्विन्द्रं स्तवामेशानं वस्वः स्वराजम् ।
न राधसा मर्धिषन्नः ॥४॥

हे स्तोताओ ! ऐश्वर्य के स्वामी तथा स्वयं प्रकाशित होने वाले इन्द्रदेव की; हम यहाँ उपस्थित होकर प्रार्थना करें, जिससे ऐश्वर्य के क्षेत्र में हमारी प्रतिद्वन्द्विता करने वाला कोई अन्य न रहे॥४॥

प्र स्तोषदुप गासिषच्छ्रवत्साम गीयमानम् ।
अभि राधसा जुगुरत् ॥५॥

हे स्तोताओ ! वे इन्द्रदेव इन स्तोत्रों की प्रशंसा करें, छन्दों को जाने तथा गाने योग्य सामगान का श्रवण करें । वे ऐश्वर्य प्रदान करके हमारे ऊपर अनुकम्पा करें॥५॥

आ नो भर दक्षिणेनाभि सव्येन प्र मृश ।

इन्द्र मा नो वसोर्निर्भाक् ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! आप अपने दोनों हाथों द्वारा हमें ऐश्वर्य प्रदान करें । हमें धन से वंचित न करें॥६॥

उप क्रमस्वा भर धृषता धृष्णो जनानाम् ।
अदाशूष्टरस्य वेदः ॥७॥

रिपुओं के संहारक हे इन्द्रदेव ! आप ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए गमन करें । अपनी शक्ति द्वारा स्वार्थी मनुष्यों के ऐश्वर्य का अपहरण करके हमें (यज्ञार्थ) प्रदान करें॥७॥

इन्द्र य उ नु ते अस्ति वाजो विप्रेभिः सनित्वः ।
अस्माभिः सु तं सनुहि ॥८॥

हे इन्द्रदेव !विप्रों के बीच में वितरित करने योग्य जो आपकी सम्पत्ति है, उसे हमारे बीच में भी वितरित करें॥८॥

सद्योजुवस्ते वाजा अस्मभ्यं विश्वश्चन्द्राः ।
वशैश्च मक्षू जरन्ते ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! आपका ऐश्वर्य सबको शीतलता देने वाला तथा तत्काल प्राप्त होने वाला हैं । आप उस ऐश्वर्य को हमें तथा अपने अधीन रहने वाले दूसरे लोगों को प्रदान करें॥९॥

# सूक्त ८२

ऋषि: कुसीदी काण्व:
देवता – इन्द्र । छंद: गायत्री,

आ प्र द्रव परावतोऽर्वावतश्च वृत्रहन् ।
मध्वः प्रति प्रभर्मणि ॥१॥

हे वृत्र-संहारक इन्द्रदेव ! आप चाहे दूर हों या पास, हमारे यज्ञ मण्डप में (मधुर) सोमरस को पीने के लिए अवश्य पधारें॥१॥

तीव्राः सोमास आ गहि सुतासो मादयिष्णवः ।
पिबा दधृग्यथोचिषे ॥२॥

हे इन्द्रदेव !आनन्ददायी सोम अभिषुत किया गया है, अत: आप यहाँ तीव्र गति से पधारकर सोमपान करें॥२॥

इषा मन्दस्वादु तेऽरं वराय मन्यवे ।

भुवत्त इन्द्र शं हृदे ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आप सोमरूप अन्न से हर्षित हों तथा वह आपके हृदय के लिए हर्षकारी हो । सेवन करने के बाद वह आपके हृदय में मन्यु पैदा करे॥३॥

आ त्वशत्रवा गहि न्युक्थानि च हूयसे ।
उपमे रोचने दिवः ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आप रिपुओं से रहित हैं । आप तेज से सम्पन्न हैं । आप यज्ञों में स्तुतियों द्वारा आहूत किये जाते हैं। इसलिए दिव्यलोक से आप यहाँ पधारें॥४॥

तुभ्यायमद्रिभिः सुतो गोभिः श्रीतो मदाय कम् ।
प्र सोम इन्द्र हूयते ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! पत्थरों द्वारा कूटकर अभिषुत किये गये सोमरस को हम गोदुग्ध में मिलाकर आपकी प्रसन्नता के लिए आपको प्रदान करते हैं॥५॥

इन्द्र श्रुधि सु मे हवमस्मे सुतस्य गोमतः ।
वि पीतिं तृप्तिमश्नुहि ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे आवाहन का भली प्रकार श्रवण करें । हमारे द्वारा समर्पित, गो-दुग्ध मिलाए हुए अभिषुत सोमरस को पीकर, आप आनन्दित हों॥६॥

य इन्द्र चमसेष्वा सोमश्चमूषु ते सुतः ।
पिबेदस्य त्वमीशिषे ॥७॥

हे सामर्थ्यशाली इन्द्रदेव ! आपके लिए शुद्ध सोमरस चमस (छोटे-बड़े) पात्रों में भरकर रखा हुआ है। आप इस दिव्य रस का पान करें॥७॥

यो अप्सु चन्द्रमा इव सोमश्चमूषु ददृशे ।
पिबेदस्य त्वमीशिषे ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! अन्तरिक्ष (या जल) में चन्द्रमा के सदृश प्रतीत होने वाले ग्रहों में विद्यमान सोमरस के आप स्वामी हैं । इसलिए आप इसका पान करें॥८॥

यं ते श्येनः पदाभरत्तिरो रजांस्यस्पृतम् ।
पिबेदस्य त्वमीशिषे ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! श्येन (प्रशंसनीय) पक्षी ने आपके लिए अस्पृष्ट (जिसे किसी ने उपयोग के लिए छुआ भी नहीं है) सोमरस को स्वर्ग से ला दिया है । अस्तु, पदों (दोनों सवनों) में आप इस सोम का पान करें॥९॥

# सूक्त ८३

ऋषि: कुसीदी काण्व:
देवता – विश्वे देवा । छंद: गायत्री,

देवानामिदवो महत्तदा वृणीमहे वयम् ।
वृष्णामस्मभ्यमूतये ॥१॥

हे बलशाली देवो ! हम अपनी रक्षा के लिए आपके महिमामय संरक्षण की याचना करते हैं ॥१॥

ते नः सन्तु युजः सदा वरुणो मित्रो अर्यमा ।
वृधासश्च प्रचेतसः ॥२॥

मित्र, वरुण और अर्यमा देवता सदैव हमारे सहायक बनें। वे धन की अभिवृद्धि करने वाले बनें॥२॥

अति नो विष्पिता पुरु नौभिरपो न पर्षथ ।

यूयमृतस्य रथ्यः ॥३॥

यज्ञों में अग्रणी हे देवो ! जिस प्रकार सरिताओं को नावों द्वारा पार किया जाता है, उसी प्रकार आप हमें अनेकों विपत्तियों से पार करें॥३॥

वामं नो अस्त्वर्यमन्वामं वरुण शंस्यम् ।
वामं ह्यावृणीमहे ॥४॥

हे वरुणदेव तथा अर्यमादेव ! हम आपसे श्रेष्ठ ऐश्वर्य की याचना करते हैं; आपके द्वारा हमें श्रेष्ठ तथा सराहनीय ऐश्वर्य प्राप्त हो॥४॥

वामस्य हि प्रचेतस ईशानाशो रिशादसः ।
नेमादित्या अघस्य यत् ॥५॥

रिपुओं के संहारक, विद्वान् हे देवताओ ! आप श्रेष्ठ ऐश्वर्यों के अधिष्ठाता हैं । हे आदित्यगण ! दुष्कर्मियों के पास विद्यमान ऐश्वर्य को हमें प्रदान करें॥५॥

वयमिद्वः सुदानवः क्षियन्तो यान्तो अध्वन्ना ।
देवा वृधाय हूमहे ॥६॥

हे श्रेष्ठ दानी देवो हम घर में हों अथवा रास्ते में हों, अपनी प्रगति के लिए आपका ही आवाहन करते हैं॥६॥

अधि न इन्द्रैषां विष्णो सजात्यानाम् ।
इता मरुतो अश्विना ॥७॥

हे इन्द्रदेव,मरुत्व, विष्णुदेव तथा अश्विनीकुमारो !अपने परिजनों के मध्य में आप हमें सर्वश्रेष्ठ बनाएँ॥७॥

प्र भ्रातृत्वं सुदानवोऽध द्विता समान्या ।
मातुर्गर्भे भरामहे ॥८॥

हे श्रेष्ठ दानी देवताओ ! माँ के गर्भ में, समानता से तथा भ्रातृ-भाव सहित दो प्रकार से रहने वाले (अथवा दो-दो करके जन्म लेने वाले) आपका हम (स्तोतागण) वर्णन करते हैं॥८॥

यूयं हि ष्ठा सुदानव इन्द्रज्येष्ठा अभिद्यवः ।
अधा चिद्व उत ब्रुवे ॥९॥

हे श्रेष्ठ दानी देवताओ ! आप सब ओज से सम्पन्न हैं। आप इन्द्रदेव को अपने से ज्येष्ठ स्वीकार करते हैं; इसलिए हम आपकी प्रार्थना करते हैं॥९॥

# सूक्त ८४

ऋषि: उशना काण्व:
देवता – अग्नि । छंद: गायत्री,

प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तुषे मित्रमिव प्रियम् ।
अग्निं रथं न वेद्यम् ॥१॥

हे अग्ने ! उपासकों की अभिलाषा पूरी करने वाले, सदा सब पर कृपा करने वाले, मित्र के समान व्यवहार करने वाले आप हमारी प्रार्थना से प्रसन्न हों॥१॥

कविमिव प्रचेतसं यं देवासो अध द्विता ।
नि मर्त्येष्वादधुः ॥२॥

देवो ने प्रशंसनीय ज्ञानियों की भाँति अग्नि को दोनों रूपों में मनुष्यों के बीच स्थापित किया॥२॥

त्वं यविष्ठ दाशुषो नॄँः पाहि शृणुधी गिरः ।
रक्षा तोकमुत त्मना ॥३॥

सदा युवा (अजर) रहने वाले हे अग्ने ! आप दानशीलों की रक्षा के लिए उनकी स्तुतियों पर ध्यान दें । अपने पुत्रों की रक्षा के लिए प्रयत्नशील हों॥३॥

कया ते अग्ने अङ्गिर ऊर्जो नपादुपस्तुतिम् ।
वराय देव मन्यवे ॥४॥

हे अग्निदेव ! आप अंगिरा (अंगों में रस संचरित करने वाले) एवं ऊर्जा न गिरने देने वाले हैं । वरण योग्य और विरोधियों को पीड़ित करने वाले आपकी हम किस वाणी से स्तुति करें ?॥४॥

दाशेम कस्य मनसा यज्ञस्य सहसो यहो ।
कदु वोच इदं नमः ॥५॥

(अरणि मंथन रूप) पुरुषार्थ से उत्पन्न हे अग्ने ! किस यजमान के यजन कर्म द्वारा हम आपके निमित्त आहुति अर्पित करें। ये हवि (अथवा ये स्तुतियाँ) आपको प्राप्त हों, ऐसी प्रार्थना हम कब करें ?॥५॥

अधा त्वं हि नस्करो विश्वा अस्मभ्यं सुक्षितीः ।
वाजद्रविणसो गिरः ॥६॥

हे अग्ने ! आपकी हम पर ऐसी कृपा हो, जिससे अपनी स्तुतियों के प्रभाव से हम श्रेष्ठ स्थानों के अधिपति और श्रेष्ठ पोषक धन-धान्य से युक्त हो जाएँ॥६॥

कस्य नूनं परीणसो धियो जिन्वसि दम्पते ।
गोषाता यस्य ते गिरः ॥७॥

हे सत्य के रक्षक अग्ने ! आप किस प्रकार की बुद्धि (स्तुतियों) से प्रसन्न होते हैं? आपकी किस प्रकार से और कौन सी स्तुतियाँ करके ज्ञान का साक्षात्कार हो सकता है॥७॥

तं मर्जयन्त सुक्रतुं पुरोयावानमाजिषु ।
स्वेषु क्षयेषु वाजिनम् ॥८॥

जो अग्निदेव सत्कर्म करने वाले हैं तथा युद्ध में रिपुओं का संहार करने के लिए आगे बढ़ने वाले हैं, ऐसे शक्तिशाली अग्निदेव को लोग अपने गृहों में स्थापित करके उनकी उपासना करते हैं॥८॥

क्षेति क्षेमेभिः साधुभिर्नकिर्यं घ्नन्ति हन्ति यः ।
अग्ने सुवीर एधते ॥९॥

हे अग्निदेव ! जो व्यक्ति आपके द्वारा संरक्षित होकर अपने घरों में सज्जनों के साथ निवास करते हैं, उनका संहार कोई रिपु नहीं कर सकता। वे अपने रिपुओं का संहार करते हुए श्रेष्ठ सन्तानों से समृद्ध होते हैं॥९॥

# सूक्त ८५

ऋषि: कृष्ण अंगिरस:
देवता – आश्विनौ । छंद: गायत्री,

आ मे हवं नासत्याश्विना गच्छतं युवम् ।
मध्वः सोमस्य पीतये ॥१॥

सत्यपालक हे अश्विनीकुमारो !आप हमारे आवाहन को सुनकर मधुर सोमरस पान करने के निमित्त पधारें॥१॥

इमं मे स्तोममश्विनेमं मे शृणुतं हवम् ।
मध्वः सोमस्य पीतये ॥२॥

हे अश्विनीकुमारो ! मीठे सोमरस का पान करने के निमित्त आप हमारे आवाहन तथा स्तोत्रों को सुनें॥२॥

अयं वां कृष्णो अश्विना हवते वाजिनीवसू ।

मध्वः सोमस्य पीतये ॥३॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप अन्नरूप ऐश्वर्य से युक्त हैं । हम 'कृष्ण' ऋषि मधुर सोमरस पान के निमित्त आपका आवाहन करते हैं॥३॥

शृणुतं जरितुर्हवं कृष्णस्य स्तुवतो नरा ।
मध्वः सोमस्य पीतये ॥४॥

हे अश्विनीकुमारो !स्तुति करने वाले हम, 'कृष्ण' ऋषि के आवाहन को आप मीठे सोमपान के निमित्त सुनें॥४॥

छर्दिर्यन्तमदाभ्यं विप्राय स्तुवते नरा ।
मध्वः सोमस्य पीतये ॥५॥

हे अश्विनीकुमारो ! मधुर सोमपान के निमित्त आप विद्वान् स्तोताओं को नष्ट न होने वाला आवास प्रदान करें॥५॥

गच्छतं दाशुषो गृहमित्था स्तुवतो अश्विना ।
मध्वः सोमस्य पीतये ॥६॥

हे अश्विनीकुमारो !मधुर सोमपाने के निमित्त, आप आहुति प्रदान करने वाले याज्ञिक के घर पधारें॥६॥

युञ्जाथां रासभं रथे वीड्वङ्गे वृषण्वसू ।
मध्वः सोमस्य पीतये ॥७॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप ऐश्वर्य की वर्षा करने वाले हैं। मजबूत रथ में आवाज करने वाले अश्वों को आप मीठे सोमरस पीने के निमित्त नियोजित करें॥७॥

त्रिवन्धुरेण त्रिवृता रथेना यातमश्विना ।
मध्वः सोमस्य पीतये ॥८॥

हे अश्विनीकुमारो ! तिकोने आकार के तीन फलकों वाले रथ द्वारा मधुर सोमपान के निमित्त आप पधारें॥८॥

नू मे गिरो नासत्याश्विना प्रावतं युवम् ।
मध्वः सोमस्य पीतये ॥९॥

सत्यपालक हे अश्विनकुमारो ! आप मधुर सोमपान करने के निमित्त हमारी स्तुतियों का श्रवण करें॥९॥

# सूक्त ८६

ऋषि: कृष्ण अंगिरस, विश्वको
देवता – आश्विनौ । छंद: जगती

उभा हि दस्रा भिषजा मयोभुवोभा दक्षस्य वचसो बभूवथुः ।
ता वां विश्वको हवते तनूकृथे मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥१॥

देखने योग्य हे अश्वनीकुमारो ! आप हर्षप्रदायक भेषज रूप हैं तथा कुशलतापूर्वक किये गये स्तुति वचनों के योग्य हैं। अपने शारीरिक संरक्षण के निमित्त हम 'विश्वक' ऋषि आपका आवाहन करते हैं । आप हमें अपनी मित्रता से वञ्चित न करके हमारे कष्टों को दूर करें॥१॥

कथा नूनं वां विमना उप स्तवद्युवं धियं ददथुर्वस्यइष्टये ।
ता वां विश्वको हवते तनूकृथे मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥२॥

हे अश्वनीकुमारो ! 'विमना' अघि ने पुरातन काल में आपकी किस प्रकार स्तुति की थी ? उत्तम ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिए आपने 'विमना'

को विवेक प्रदान किया है। शारीरिक संरक्षण के निमित्त हम 'विश्वक' ऋषि आपका आवाहन करते हैं। आप हमें अपनी मित्रता से वञ्चित न करके हमारे कष्टों को दूर करें॥२॥

युवं हि ष्मा पुरुभुजेममेधतुं विष्णाप्वे ददथुर्वस्यइष्टये ।
ता वां विश्वको हवते तनूकृथे मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥३॥

अनेकों का पालन करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! विष्णु आदि की अभिलाषाओं को पूर्ण करने के लिए आपने उन्हें ऐश्वर्य प्रदान किया था; इसलिए शारीरिक संरक्षण के निमित्त हम 'विश्वक' अषि आपका आवाहन करते हैं। आप हमें अपनी मित्रता से वञ्चित न करके हमारे कष्टों को दूर करें॥३॥

उत त्यं वीरं धनसामृजीषिणं दूरे चित्सन्तमवसे हवामहे ।
यस्य स्वादिष्ठा सुमतिः पितुर्यथा मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम्
॥४॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप ऐश्वर्य का दान करने वाले तथा सोमरस पान करने वाले हैं। आप अपनी श्रेष्ठ बुद्धि द्वारा पिता के सदृश हमारा पालन करने वाले हैं। हम अपने संरक्षण के निमित्त, दूर देश में रहने पर भी आपका आवाहन करते हैं। आप हमें अपनी मित्रता से वञ्चित न करके हमारे कष्टों को दूर करें॥४॥

ऋतेन देवः सविता शमायत ऋतस्य शृङ्गमुर्विया वि पप्रथे ।
ऋतं सासाह महि चित्पृतन्यतो मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥५॥

ऋत के द्वारा आदित्य अपनी रश्मियों को बटोरते हैं तथा ऋत के द्वारा वे पुनः रश्मियों को फैलाते हैं। विशाल सेनायुक्त रिपुओं को वे परास्त करते हैं । वे हमें अपनी मित्रता से वञ्चित न करके हमारे कष्टों को दूर करें॥५॥

# सूक्त ८७

ऋषि: कृष्ण अंगिरस, वासिष्ठो, द्यूम्नीक, प्रियमेघ, अंगिरस
देवता – आश्विनौ । छंद: प्रगाथ

द्युम्नी वां स्तोमो अश्विना क्रिविर्न सेक आ गतम् ।
मध्वः सुतस्य स दिवि प्रियो नरा पातं गौराविवेरिणे ॥१॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार बरसात में जलकुण्ड भरा रहता है, उसी प्रकार आप हमारी स्तुतियों द्वारा परिपूर्ण होकर पधारें । जैसे हिरण जलकुण्ड में पानी पीते हैं, उसी प्रकार आप 'द्युम्नीक' ऋषि द्वारा अभिषुत किये गये आनन्ददायक सोमरस का पान करें॥१॥

पिबतं घर्मं मधुमन्तमश्विना बर्हिः सीदतं नरा ।
ता मन्दसाना मनुषो दुरोण आ नि पातं वेदसा वयः ॥२॥

हे अश्विनीकुमारो ! आप हम मनुष्यों के द्वारा तैयार किये गये यज्ञ मण्डप में पधारकर कुश-आसन पर आसीन हों । आप मधुर सोमरस

का पान करके आनन्दित हों । अपने ऐश्वर्य के द्वारा आप हमारे आयुष्य (जीवन) का संरक्षण करें॥२॥

आ वां विश्वाभिरूतिभिः प्रियमेधा अहूषत ।
ता वर्तिर्यातमुप वृक्तबर्हिषो जुष्टं यज्ञं दिविष्टिषु ॥३॥

हे अश्विनीकुमारो ! हम 'प्रियमेध' ऋषि समस्त रक्षण-साधनों सहित आपका आवाहन करते हैं । हम अपने यज्ञमण्डप में कुश-आशन बिछाकर तैयार किये हैं, अत: आप दोनों पधारकर हमारी श्रेष्ठ आहुतियों को ग्रहण करें॥३॥

पिबतं सोमं मधुमन्तमश्विना बर्हिः सीदतं सुमत् ।
ता वावृधाना उप सुष्टुतिं दिवो गन्तं गौराविवेरिणम् ॥४॥

हे अश्विनीकुमारो ! जिस प्रकार हिरण जलकुण्ड़ के पास जाते हैं, उसी प्रकार आप हमारी प्रार्थनाओं द्वारा तृप्त हों । आप दिव्य लोक में पधारकर सुखदायक आसन ग्रहण करें तथा मधुर सोमरस का पान करें॥४॥

आ नूनं यातमश्विनाश्वेभिः प्रुषितप्सुभिः ।
दस्रा हिरण्यवर्तनी शुभस्पती पातं सोममृतावृधा ॥५॥

सत्पात्रों का पालन करने वाले तथा ऋत (यज्ञ) का संवर्धन करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! आप स्वर्णिम रथ से सम्पन्न हैं तथा रिपुओं का विनाश करने वाले हैं। आप अपने तेजस्वी अश्वों द्वारा पधारकर सोमरस का पान करें॥५॥

वयं हि वां हवामहे विपन्यवो विप्रासो वाजसातये ।
ता वल्गू दस्रा पुरुदंससा धियाश्विना श्रुष्ट्या गतम् ॥६॥

हे अश्विनीकुमारो ! हम प्रार्थना करने वाले विप्र लोग अन्न वितरण के निमित्त आपका आवाहन करते हैं। आप विभिन्न कर्म करने वाले तथा रिपुओं का विनाश करने वाले हैं। श्रेष्ठ सौन्दर्ययुक्त तथा विवेकवान् , आप दोनों शीघ्र पधारें॥६॥

# सूक्त ८८

ऋषिः नोघा गौतम
देवता – इन्द्र । छंदः प्रगाथ

तं वो दस्ममृतीषहं वसोर्मन्दानमन्धसः ।
अभि वत्सं न स्वसरेषु धेनव इन्द्रं गीर्भिर्नवामहे ॥१॥

है ऋत्विजो ! शत्रुओं से रक्षा करने वाले, तेजस्वी सोमरस से तृप्त होने वाले इन्द्रदेव की हम उसी प्रकार स्तुति करते हैं, जैसे गोशाला में अपने बछड़ों के पास जाने के लिए गौएँ उल्लसित रहती हैं॥१॥

द्युक्षं सुदानुं तविषीभिरावृतं गिरिं न पुरुभोजसम् ।
क्षुमन्तं वाजं शतिनं सहस्रिणं मक्षू गोमन्तमीमहे ॥२॥

देवलोकवासी , उत्तम दानदाता, सामर्थ्यवान् इन्द्रदेव से हम सब प्रकार के ऐश्वर्य, सैकड़ों गौएँ तथा पोषक अन्न की कामना करते हैं॥२॥

न त्वा बृहन्तो अद्रयो वरन्त इन्द्र वीळवः ।
यद्दित्ससि स्तुवते मावते वसु नकिष्टदा मिनाति ते ॥३॥

विशाल, स्थिर पर्वत के समान, कर्तव्यपथ से विचलित न होने वाले हे इन्द्रदेव ! आपके द्वारा प्रदान किया या वैभव हम यजमानों को निरन्तर प्राप्त होता रहे॥३॥

योद्धासि क्रत्वा शवसोत दंसना विश्वा जाताभि मज्मना ।
आ त्वायमर्क ऊतये ववर्तति यं गोतमा अजीजनन् ॥४॥

हे इन्द्रदेव !आप अपने कर्म और सामर्थ्य के द्वारा वीर कहलाते हैं तथा समस्त जीवों को नियन्त्रित करते हैं। अपनी सुरक्षा के लिए हम आपको बार-बार बुलाते हैं। आपको गौतमवंशियों ने उत्पन्न किया है॥४॥

प्र हि रिरिक्ष ओजसा दिवो अन्तेभ्यस्परि ।
न त्वा विव्याच रज इन्द्र पार्थिवमनु स्वधां ववक्षिथ ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आप अपने ओज से, द्युलोक से परे भी प्रतिष्ठित हैं । भू-मण्डल का तेज भी आपको व्याप्त नहीं कर सकता। आप (हमारे लिए) स्वधा (तृप्तिदायक अन्न) लाएँ ॥५॥

नकिः परिष्टिर्मघवन्मघस्य ते यद्दाशुषे दशस्यसि ।
अस्माकं बोध्युचथस्य चोदिता मंहिष्ठो वाजसातये ॥६॥

हे मघवन् (धनवान्) इन्द्रदेव ! जब आप दाताओं को धन प्रदान करना चाहते हैं, तो उसे रोकने वाला कोई नहीं होता । स्तोताओं के लिए धन के प्रेरक, सर्वश्रेष्ठ दाता आप, हमारे-उचथ के-स्तोत्रों को जानें॥६॥

# सूक्त ८९

ऋषि: नृमेध् -पुरुषमेधावांगिरसौ
देवता – इन्द्र । छंद: १-४ प्रगाथ, ५-६ अनुष्टुप, ७ वृहती

बृहदिन्द्राय गायत मरुतो वृत्रहंतमम् ।
येन ज्योतिरजनयन्नृतावृधो देवं देवाय जागृवि ॥१॥

यज्ञ के संवर्धक हे मरुतो ! जिस सोम के द्वारा समस्त देवताओं ने इन्द्रदेव को जाग्रत् । तथा ज्योति-सम्पन्न किया था; रिपुओं का संहार करने वाले उस 'बृहत् साम' को आप सब, देवराज इन्द्रदेव' के निमित्त गान करें॥१॥

अपाधमदभिशस्तीरशस्तिहाथेन्द्रो द्युम्न्याभवत् ।
देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे बृहद्भानो मरुद्गण ॥२॥

अत्यधिक तेज से सम्पन्न हे मरुतो ! वे इन्द्रदेव समस्त हिंसक रिपुओं तथा दुष्कर्मियों का संहार करने वाले हैं। इसी कारण वे ओजस्वी

हुए। हे इन्द्रदेव ! समस्त देवता, मित्रता के निमित्त आपके समीप पहुँचते हैं॥२॥

प्र व इन्द्राय बृहते मरुतो ब्रह्मार्चत ।
वृत्रं हनति वृत्रहा शतक्रतुर्वज्रेण शतपर्वणा ॥३॥

हे मरुतो ! महान् इन्द्रदेव के लिए स्तुतियाँ अर्पित करें । वे शतकर्मा सैकड़ों पर्वो (ग्रन्थियों) वाले वज्र से वृत्र को मारने वाले हैं॥३॥

अभि प्र भर धृषता धृषन्मनः श्रवश्चित्ते असद्बृहत् ।
अर्षन्त्वापो जवसा वि मातरो हनो वृत्रं जया स्वः ॥४॥

सुदृढ़ मानस वाले हे इन्द्रदेव ! समस्त श्रेष्ठ अन्न आपके ही हैं। अपने बलशाली मानस द्वारा आप हमें उस अन्न से परिपूर्ण करें । आप मातृभूत जलधारा को वेग से प्रवाहित करें । हे इन्द्रदेव ! आप वृत्र का संहार करें तथा जल को जीत लें॥४॥

यज्जायथा अपूर्व्य मघवन्वृत्रहत्याय ।
तत्पृथिवीमप्रथयस्तदस्तभ्ना उत द्याम् ॥५॥

हे अद्‌भुत वैभवशाली इन्द्रदेव ! आपने वृत्र ( असुरता ) का संहार करने के लिए प्रकट होकर पृथ्वी को विस्तृत करने के साथ-साथ द्‌युलोक को भी स्थिर किया॥५॥

तत्ते यज्ञो अजायत तदर्क उत हस्कृतिः ।
तद्विश्वमभिभूरसि यज्जातं यच्च जन्त्वम् ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! आपके प्राकट्य काल से ही श्रेष्ठ यज्ञ-कर्मों की उत्पत्ति हुई तथा दिन के नियामक सूर्यदेव स्थापित हुए। उत्पन्न हुए तथा आगे उत्पन्न होने वाले सभी प्राणी आपके द्वारा अभिभूत (संव्याप्त) हैं॥६॥

आमासु पक्वमैरय आ सूर्यं रोहयो दिवि ।
घर्मं न सामन्तपता सुवृक्तिभिर्जुष्टं गिर्वणसे बृहत् ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आपने अपरिपक्व (गौ या पृथ्वीं) से परिपक्व (दूध या पोषण पदार्थ) उत्पन्न किया तथा आकाश में सूर्यदेव को स्थापित किया। जिस प्रकार याजक यज्ञ (अग्नि) को प्रकट करते हैं, उसी प्रकार उक्त स्तुतियों से इन्द्रदेव में हर्ष उल्लास की वृद्धि होती है । हे स्तोताओ ! स्तुत्य, इन्द्रदेव की प्रसन्नता के लिए 'बृहत् साम' का गान करो॥७॥

# सूक्त ९०

ऋषि: नृमेध् -पुरुषमेधावांगिरसौ
देवता – इन्द्र । छंद: प्रगाथ

आ नो विश्वासु हव्य इन्द्रः समत्सु भूषतु ।
उप ब्रह्माणि सवनानि वृत्रहा परमज्या ऋचीषमः ॥१॥

संग्राम में रक्षा के लिए बुलाने योग्य, वृत्रहन्ता, धनुष की श्रेष्ठ प्रत्यंचा के समान, उत्तम मंत्रों से स्तुत्य हे इन्द्रदेव ! हमारे (तीनों) सवनों एवं स्तोत्रों को आप सुशोभित करें॥१॥

त्वं दाता प्रथमो राधसामस्यसि सत्य ईशानकृत् ।
तुविद्युम्नस्य युज्या वृणीमहे पुत्रस्य शवसो महः ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आप सर्वप्रथम धनदाता हैं । ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं। आपसे हम पराक्रमी एवं श्रेष्ठ सन्तानों की कामना करते हैं॥२॥

ब्रह्मा त इन्द्र गिर्वणः क्रियन्ते अनतिद्भुता ।
इमा जुषस्व हर्यश्व योजनेन्द्र या ते अमन्महि ॥३॥

प्रार्थनीय तथा अश्ववान् हे इन्द्रदेव ! आप हमारे सत्यरूप स्तोत्रों द्वारा सुसंगत होकर उनको ग्रहण करें तथा अन्यों के द्वारा बोले गये मन्त्रों को भी सेवन करें॥३॥

त्वं हि सत्यो मघवन्ननानतो वृत्रा भूरि न्यृञ्जसे ।
स त्वं शविष्ठ वज्रहस्त दाशुषेऽर्वाञ्चं रयिमा कृधि ॥४॥

हे धनवान् इन्द्रदेव ! आप अनेकों वृत्रों ( असुरों ) का संहार करने वाले हैं तथा यथार्थ रूप में किसी के अधीन न होने वाले हैं। आप अत्यन्त शक्तिशाली तथा अपने हाथ में वज्र धारण करने वाले हैं। आप आहुति प्रदान करने वाले याजकों की ओर ऐश्वर्य प्रेषित करें॥४॥

त्वमिन्द्र यशा अस्यृजीषी शवसस्पते ।
त्वं वृत्राणि हंस्यप्रतीन्येक इदनुत्ता चर्षणीधृता ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आप बलशाली, सोमपायी तथा कीर्तिवान् है । आप मानव मात्र के हित के लिए अत्यधिक बलशाली शत्रुओं को बिना किसी सहायता के अकेले ही नष्ट करने में समर्थ हैं॥५॥

तमु त्वा नूनमसुर प्रचेतसं राधो भागमिवेमहे ।
महीव कृत्तिः शरणा त इन्द्र प्र ते सुम्ना नो अश्नवन् ॥६॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! जिस प्रकार पिता से पुत्र धन का भाग माँगता है, उसी प्रकार हम आपसे श्रेष्ठ ऐश्वर्य की याचना करते हैं। आप धन तथा ज्ञान-सम्पन्न सबके आश्रयदाता हैं। आपके श्रेष्ठ सुख हमें प्राप्त हों॥६॥

# सूक्त ९१

ऋषि: आत्रेयी अपाला
देवता – इन्द्र । छंद: अनुष्टुप, १-२ पंक्ति

कन्या वारवायती सोममपि स्रुताविदत् ।
अस्तं भरन्त्यब्रवीदिन्द्राय सुनवै त्वा शक्राय सुनवै त्वा ॥१॥

जल की ओर (स्नान द्वारा पवित्र होने के लिए उन्मुख कन्या (अपाला) मार्ग में सोम (पोषक तत्व) प्राप्त करती है । घर लौटती हुई वह कहती है (हे सोम !) तुम्हें मैं इन्द्र (जीवात्मा) तथा शक्र (शक्तिशाली मन) के लिए प्रयुक्त करूंगी॥१॥

असौ य एषि वीरको गृहंगृहं विचाकशद् ।
इमं जम्भसुतं पिब धानावन्तं करम्भिणमपूपवन्तमुक्थिनम् ॥२॥

(अपाला कहती हैं) ये वीर इन्द्रदेव जो प्रकाशित होकर प्रत्येक घर (प्रकोष्ठ) में पहुँचते हैं । (वे) पीने के लिए निष्पादित इस 'धानावन्त' (खीलों युक्त या धारक क्षमता युक्त), करम्भ (क्रियाशील) तथा

अपूपवन्त (पुए की तरह या विस्तारयुक्त) प्रशंसनीय सोम का पान करें॥२॥

आ चन त्वा चिकित्सामोऽधि चन त्वा नेमसि ।
शनैरिव शनकैरिवेन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥३॥

(हे इन्द्रदेव या पुरुष !) हम (अपाला) आपको समझने (तुष्ट करने में समर्थ नहीं हैं, किन्तु समझने की इच्छुक हैं । हे सोमदेव ! आप इन्द्रदेव के लिए शनैः-शनैः ( औषधि की तरह निर्धारित मात्रा में ) प्रवाहित हों॥३॥

कुविच्छकत्कुवित्करत्कुविन्नो वस्यसस्करत् ।
कुवित्पतिद्विषो यतीरिन्द्रेण संगमामहै ॥४॥

अपने स्वामी की रुष्टता के कारण भ्रमणशील हम (अपाला) ने इन्द्रदेव (सूर्य) की बहुत उपासना की है। वे हमें बहुत प्रकार से सामर्थ्य, सक्रियता तथा साधन-सम्पन्न बनाएँ॥४॥

इमानि त्रीणि विष्टपा तानीन्द्र वि रोहय ।
शिरस्ततस्योर्वरामादिदं म उपोदरे ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आप मेरे पिता के मस्तिष्क, उर्वरा (भूमि या मनोभूमि) तथा मेरे उदर-इन तीन स्थलों को विशेष प्रयोजनों के लिए श्रेष्ठ या उपजाऊ बनाएँ ॥५॥

असौ च या न उर्वरादिमां तन्वं मम ।
अथो ततस्य यच्छिरः सर्वा ता रोमशा कृधि ॥६॥

आप हमारे इस उर्वर भूमि, हमारे इस शरीर तथा रचयिता के मस्तिष्क को अंकुरणशील या पुलकित करें॥६॥

खे रथस्य खेऽनसः खे युगस्य शतक्रतो ।
अपालामिन्द्र त्रिष्पूत्व्यकृणोः सूर्यत्वचम् ॥७॥

उन शतक्रतु (शतकर्मा-इन्द्रदेव) ने रथ (इन्द्रियों युक्त काया), अनस (शकट की तरह पोषक प्राण) तथा दोनों को जोड़ने वाले 'युग' (मन) इन तीन स्थानों या छिद्रों से अपाला को पवित्र करके उसकी त्वचा (बाहरी संरक्षक सतह) को सूर्यदेव के तेज से युक्त बना दिया॥७॥

# सूक्त ९२

ऋषि: श्रुतकक्ष: सुकक्षो, अंगिरस
देवता – इन्द्र । छंद: गायत्री, १ अनुष्टुप

पान्तमा वो अन्धस इन्द्रमभि प्र गायत ।
विश्वासाहं शतक्रतुं मंहिष्ठं चर्षणीनाम् ॥१॥

हे याजको ! सामर्थ्यवान्, सैकड़ों प्रकार के यज्ञादि कर्म करने वाले, शत्रुनाशक, सोमपायी इन्द्रदेव की विशेष स्तोत्रों से प्रार्थना करो॥१॥

पुरुहूतं पुरुष्टुतं गाथान्यं सनश्रुतम् ।
इन्द्र इति ब्रवीतन ॥२॥

हे ऋत्विजो ! सहायता के लिए बहुतों द्वारा बुलाए जाने वाले, अनेकों द्वारा स्तुति किये जाने वाले तथा सनातन काल से प्रसिद्ध उन इन्द्रदेव की वन्दना करो॥२॥

इन्द्र इन्नो महानां दाता वाजानां नृतुः ।
महाँ अभिज्ञ्वा यमत् ॥३॥

सभी को गति प्रदान करने वाले, धन-धान्य से परिपूर्ण करने वाले, महान् इन्द्रदेव हमारे सामने प्रकट हों और हमें ऐश्वर्य प्रदान करें॥३॥

अपादु शिप्र्यन्धसः सुदक्षस्य प्रहोषिणः ।
इन्दोरिन्द्रो यवाशिरः ॥४॥

किरीटधारी इन्द्रदेव ने देवताओं के लिए हवि देने में निपुण याज्ञिकों द्वारा समर्पित जौ के आटे और दूध से मिश्रित सोमरस रूपी हविष्यान्न को ग्रहण किया॥४॥

तम्वभि प्रार्चतेन्द्रं सोमस्य पीतये ।
तदिद्ध्यस्य वर्धनम् ॥५॥

उन इन्द्रदेव की सोमपान के निमित्त प्रार्थना करें । यह सोमरस उनको समृद्धिशाली बनाने वाला है॥५॥

अस्य पीत्वा मदानां देवो देवस्यौजसा ।
विश्वाभि भुवना भुवत् ॥६॥

वे इन्द्रदेव हर्षप्रदायक सोमरस पान करके अपने महान् ओज के द्वारा समस्त लोकों को नियन्त्रित करते हैं॥६॥

त्यमु वः सत्रासाहं विश्वासु गीर्ष्वायतम् ।
आ च्यावयस्यूतये ॥७॥

हे याजको ! अपनी समस्त वाणियों द्वारा उच्चारित उत्तम स्तुतियों से अपने संरक्षण के लिए असुरजयी इन्द्रदेव का आवाहन करो॥७॥

युध्मं सन्तमनर्वाणं सोमपामनपच्युतम् ।
नरमवार्यक्रतुम् ॥८॥

युद्ध में पराजित न होने वाले, शत्रुओं पर भारी पड़ने वाले तथा सोमरस का पान करने वाले, अपरिवर्तनीय निर्णय वाले तथा नायक इन्द्रदेव का सहयोग पाने के लिए हम आवाहन करते हैं॥८॥

शिक्षा ण इन्द्र राय आ पुरु विद्वाँ ऋचीषम ।
अवा नः पार्ये धने ॥९॥

दर्शनीय, सर्वज्ञ हे इन्द्रदेव ! आप हमें पर्याप्त धन प्रदान करें। शत्रुओं के पास से भी जीत कर लाये हुए धन को हमारे संरक्षण हेतु प्रयुक्त करें॥९॥

अतश्चिदिन्द्र ण उपा याहि शतवाजया ।
इषा सहस्रवाजया ॥१०॥

हे इन्द्रदेव ! सैकड़ों प्रकार के बलों से परिपूर्ण हजारों प्रकार के पोषक तत्त्वों एवं रसों सहित अन्तरिक्ष से आप हमारे यज्ञ में पधारने की कृपा करें॥१०॥

अयाम धीवतो धियोऽर्वद्भिः शक्र गोदरे ।
जयेम पृत्सु वज्रिवः ॥११॥

हे बलशाली तथा वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप पहाड़ों को भी नष्ट करने वाले हैं। हम विवेकपूर्ण कार्यों को करें तथा आपके द्वारा प्रदत्त अश्वों से हम युद्ध में विजयश्री का वरण करें॥११॥

वयमु त्वा शतक्रतो गावो न यवसेष्वा ।
उक्थेषु रणयामसि ॥१२॥

हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! जिस प्रकार गोपालक अपनी गौओं को जौ द्वारा हर्षित करते हैं, उसी प्रकार हम आपको अपने स्तोत्रों द्वारा हर्षित करते हैं॥१२॥

विश्वा हि मर्त्यत्वनानुकामा शतक्रतो ।
अगन्म वज्रिन्नाशसः ॥१३॥

हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! आप वज्र धारण करने वाले हैं। समस्त मानव कामनाओं की पूर्ति करना चाहते हैं, उसी प्रकार हम भी ऐश्वर्य की आकांक्षा करते हैं॥१३॥

त्वे सु पुत्र शवसोऽवृत्रन्कामकातयः ।
न त्वामिन्द्राति रिच्यते ॥१४॥

शक्ति-पुत्र हे इन्द्रदेव ! ऐश्वर्य की अभिलाषा करने वाले पुरुष आपकी हीं प्रार्थना करते हैं; क्योंकि आपसे अधिक श्रेष्ठ कोई अन्य देवता नहीं हैं॥१४॥

स नो वृषन्त्सनिष्ठया सं घोरया द्रविल्वा ।
धियाविड्ढि पुरंध्या ॥१५॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! आप रिपुओं के लिए भयंकर तथा सत्पुरुषों के लिए ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं। आप अपनी श्रेष्ठ गुणों वाली मेधा से हमारा संरक्षण करें॥१५॥

यस्ते नूनं शतक्रतविन्द्र द्युम्नितमो मदः ।

तेन नूनं मदे मदेः ॥१६॥

हे शतकर्मा इन्द्रदेव ! आपके लिए अति तेजस्वी अभिषुत किया हुआ सोमरस तैयार किया गया है, उसका पान करके आप तृप्त हों और धनादि देकर हमको आनन्दित करें॥१६॥

यस्ते चित्रश्रवस्तमो य इन्द्र वृत्रहन्तमः ।
य ओजोदातमो मदः ॥१७॥

हे इन्द्रदेव ! जो सोमरस अत्यन्त कीर्तिमान् , अद्भुत, हर्षप्रदायक, ओज-प्रदायक तथा वृत्र का संहार करने वाला है, उसे हमने आपके निमित्त अभिषुत किया है॥१७॥

विद्मा हि यस्ते अद्रिवस्त्वादत्तः सत्य सोमपाः ।
विश्वासु दस्म कृष्टिषु ॥१८॥

वज्रधारी तथा अविनाशी हे इन्द्रदेव ! आप देखने योग्य तथा सोमरस पीने वाले हैं। समस्त मनुष्यों को आपने जो ऐश्वर्य प्रदान किया है, वह हमें भी ज्ञात है॥१८॥

इन्द्राय मद्वने सुतं परि ष्टोभन्तु नो गिरः ।
अर्कमर्चन्तु कारवः ॥१९॥

आनन्दमयी प्रकृति वाले, इन्द्रदेव के निमित्त निकाले गये दिव्य सोमरस की हम स्तोतागण स्तुतियों द्वारा प्रशंसा करते हैं॥१९॥

यस्मिन्विश्वा अधि श्रियो रणन्ति सप्त संसदः ।
इन्द्रं सुते हवामहे ॥२०॥

उन कान्तिमान् इन्द्रदेव का हम सोमयज्ञ में आवाहन करते हैं, जिनकी स्तुति यज्ञ के सातों ऋत्विज् करते हैं॥२०॥

त्रिकद्रुकेषु चेतनं देवासो यज्ञमत्नत ।
तमिद्वर्धन्तु नो गिरः ॥२१॥

प्रेरण गदायी, उत्साह बढ़ाने वाले, तीन चरणों में सम्पन्न होने वाले यज्ञ का विस्तार देवगण करते हैं। साधक गण उस यज्ञ की प्रशंसा करते हैं॥२१॥

आ त्वा विशन्त्विन्दवः समुद्रमिव सिन्धवः ।
न त्वामिन्द्राति रिच्यते ॥२२॥

हे इन्द्र देव ! नदियों के समुद्र में मिलने की भाँति सोमरस आपके अन्दर प्रविष्ट होता है । हे इन्द्रदेव ! आपसे अधिक महा न कोई अन्य देव नहीं है॥२२॥

विव्यक्थ महिना वृषन्भक्षं सोमस्य जागृवे ।
य इन्द्र जठरेषु ते ॥२३॥

शक्तिमान् , जागरणशील हे इन्द्रदेव ! आप सोमपान के लिए अपनी ख्याति से सभी स्थानों में व्याप्त रहते हैं। आपके द्वारा उदरस्थ सोम भी प्रशंसनीय है॥२३॥

अरं त इन्द्र कुक्षये सोमो भवतु वृत्रहन् ।
अरं धामभ्य इन्दवः ॥२४॥

हे वृत्रह- ता इन्द्रदेव ! हमारे द्वारा प्रदत्त सोमरस आपके लिए पर्याप्त हो, आपके साथ-साथ यह सभी देवताओं के लिए भी पर वाप्ति हो॥२४॥

अरमश्वाय गायति श्रुतकक्षो अरं गवे ।
अरमिन्द्रस्य धाम्ने ॥२५॥

श्रुतकक्ष अधि गौओं, अश्वों और इन्द्रदेव के आवास (स्वर्ग) की प्राप्ति के लिए स्तोत्रों का गान करते हैं॥२५॥

अरं हि ष्म सुतेषु णः सोमेष्विन्द्र भूषसि ।
अरं ते शक्र दावने ॥२६॥

हे इन्द्रदेव ! हमारे द्वारा अभिषुत सोमरस को आप विभूषित करते हैं। आप ऐश्वर्य प्रदान करने वाले हैं। आपके निमित्त र हि सोमरस पर्याप्त हो॥२६॥

पराकात्ताच्चिदद्रिवस्त्वां नक्षन्त नो गिरः ।
अरं गमाम ते वयम् ॥२७॥

हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! दूर रहते हुए भी हमारी प्रार्थनाएँ आपके समीप पहुँचती हैं । हम आपके ऐश्वर्य को प्रचुर परिमाण में ग्रहण करें॥२७॥

एवा ह्यसि वीरयुरेवा शूर उत स्थिरः ।
एवा ते राध्यं मनः ॥२८॥

हे बलवान् इन्द्रदेव ! रणक्षेत्र में शत्रुओं को पराजित करने वाले, युद्ध में अडिग रहने वाले आप शूरवीर हैं। आपका मन (संकर पशील) प्रशंसा के योग्य है॥२८॥

एवा रातिस्तुवीमघ विश्वेभिर्धायि धातृभिः ।
अधा चिदिन्द्र मे सचा ॥२९॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्ददेव ! आपके द्वारा प्रदत्त साधन सभी याजक प्राप्त करते हैं। आप हमें ऐश्वर्यवान् बनाकर हमारी सहायता करें॥२९॥

मो षु ब्रह्मेव तन्द्रयुर्भुवो वाजानां पते ।
मत्स्वा सुतस्य गोमतः ॥३०॥

अन्नाधिपति, बलवान् हे इन्द्रदेव ! आप गौ के दूध में मिलाये गये मधुर सोमरस को पनि कर आनन्दित हों। आलसी ब्राह्मण की भाँति निष्क्रिय न रहें॥३०॥

मा न इन्द्राभ्यादिशः सूरो अक्तुष्वा यमन् ।
त्वा युजा वनेम तत् ॥३१॥

हे इन्द्रदेव ! सर्वत्र विचरणशील, सभी ओर शस्त्र फेंकने वाले (राक्षस) रात्रि के समय हमारे निक ट न आ सकें । वे (पास में आयें भी तों) आपके अनुग्रह से ही नष्ट हो जाएँ॥३१॥

त्वयेदिन्द्र युजा वयं प्रति ब्रुवीमहि स्पृधः ।

त्वमस्माकं तव स्मसि ॥३२॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे हैं और हम आपके । आपके ही सहयोग से हम शत्रुओं का सामना कर सकेंगे॥३२॥

त्वामिद्धि त्वायवोऽनुनोनुवतश्चरान् ।
सखाय इन्द्र कारवः ॥३३॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी इच्छा करने वाले, हम सखारूप स्तोतागण आपकी ही प्रार्थना करते हैं॥३३॥

# सूक्त ९३

ऋषि: सुकक्ष: अंगिरस
देवता – इन्द्र ऋभवश्च । छंद: गायत्री

उद्घेदभि श्रुतामघं वृषभं नर्यापसम् ।
अस्तारमेषि सूर्य ॥१॥

जगद् विख्यात, ऐश्वर्य-सम्पन्न, शक्तिशाली, मानवमात्र के हितैषी और (दुष्टों पर) अस्त्रों से प्रहार करने वाले उदीयमान सूर्य इन्द्रदेव ही हैं॥१॥

नव यो नवतिं पुरो बिभेद बाह्वोजसा ।
अहिं च वृत्रहावधीत् ॥२॥

अपने बाहुबल से शत्रु के निन्यानवे निवास केन्द्रों को विध्वंस करने वाले और वृत्रनामक दुष्ट का नाश करने वाले इन्द्रदेव हमें अभीष्ट धन प्रदान करें॥२॥

स न इन्द्रः शिवः सखाश्वावद्गोमद्यवमत् ।
उरुधारेव दोहते ॥३॥

वे हमारे लिए कल्याणकारी मित्ररूप इन्द्रदेव, गौओं की असंख्य दुग्ध-धाराओं के समान ह में बहुसंख्यक धन प्रदान करें॥३॥

यदद्य कच्च वृत्रहन्नुदगा अभि सूर्य ।
सर्वं तदिन्द्र ते वशे ॥४॥

वृत्र के संहारक, अभी उदय हुए हे (सूर्यरूप) इन्द्रदेव ! आपसे प्रकाशित होने वाला वह र अब कुछसम्पूर्ण जगत् ) आपके अधिकार में ही है॥४॥

यद्वा प्रवृद्ध सत्पते न मरा इति मन्यसे ।
उतो तत्सत्यमित्तव ॥५॥

प्रगति करने वाले तथा सज्जनों का पालन करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप स्वयं को अमर मानते हैं, आपका ऐसा मानना ही यथार्थ है ॥५॥

ये सोमासः परावति ये अर्वावति सुन्विरे ।
सर्वाँस्ताँ इन्द्र गच्छसि ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! जो सोमरस दूर अथवा निकट के स्थानों में अभिषुत किया जाता है, आप उन समस्त स्थानों पर पधारते हैं॥६॥

तमिन्द्रं वाजयामसि महे वृत्राय हन्तवे ।
स वृषा वृषभो भुवत् ॥७॥

जो वृत्रहन्ता हैं, हम उनकी प्रशंसा और स्तुति करते हैं । वे दानदाता इन्द्रदेव हमें धन-धान्य से परिपूर्ण करें॥७॥

इन्द्रः स दामने कृत ओजिष्ठः स मदे हितः ।
द्युम्नी श्लोकी स सोम्यः ॥८॥

दान देने के लिए ही उत्पन्न हुए इन्द्रदेव बलवान् बनने के लिए सोमपान करते हैं । प्रशंसनीय कार्य करने वाले वे देव, सोम पिलाये जाने योग्य हैं॥८॥

गिरा वज्रो न सम्भृतः सबलो अनपच्युतः ।
ववक्ष ऋष्वो अस्तृतः ॥९॥

वज्रपाणि, स्तुतियों से प्रशंसित, बलवान्, तेजस्वी, वीर और अपराजेय इन्द्रदेव साधकों को ऐश्वर्य देने की इच्छा रखते हैं॥९॥

दुर्गे चिन्नः सुगं कृधि गृणान इन्द्र गिर्वणः ।
त्वं च मघवन्वशः ॥१०॥

प्रार्थनीय तथा धनवान् हे इन्द्रदेव ! जब आप हमारे ऊपर कृपा करते हैं, तब आप हमें दुर्गम स्थानों तक सरलतापूर्वक पहुँचने योग्य बना देते हैं॥१०॥

यस्य ते नू चिदादिशं न मिनन्ति स्वराज्यम् ।
न देवो नाध्रिगुर्जनः ॥११॥

हे इन्द्रदेव ! आपकी आज्ञा तथा आपके अनुशासन का कोई देवता अथवा अग्रणी मनुष्य भी उल्लंघन नहीं कर सकते॥११॥

अधा ते अप्रतिष्कुतं देवी शुष्मं सपर्यतः ।
उभे सुशिप्र रोदसी ॥१२॥

हे इन्द्रदेव ! द्युलोक तथा पृथ्वीलोक दोनों ही आपके अदम्य सामर्थ्य की उपासना करते हैं॥१२॥

त्वमेतदधारयः कृष्णासु रोहिणीषु च ।
परुष्णीषु रुशत्पयः ॥१३॥

हे इन्द्रदेव ! काले, लाल आदि अनेकानेक रंग की गौओं में देदीप्यमान श्वेत दुग्ध को आपने स्थापित किया, यह आपकी अद्‌भुत सामर्थ्य ही हैं॥१३॥

वि यदहेरध त्विषो विश्वे देवासो अक्रमुः ।
विदन्मृगस्य ताँ अमः ॥१४॥

जब समस्त देवता 'अहि' नामक राक्षस से भयभीत होकर भाग गये, तब इन्द्रदेव ने उस रिपु की सामर्थ्य को पहचान लिया॥१४॥

आदु मे निवरो भुवद्‌वृत्रहादिष्ट पौंस्यम् ।
अजातशत्रुरस्तृतः ॥१५॥

जब से वृत्रहन्ता इन्द्रदेव ने हमारे रिपुओं का संहार किया, तभी से वे रिपुविहीन तथा अपराजेय हो गये॥१५॥

श्रुतं वो वृत्रहन्तमं प्र शर्धं चर्षणीनाम् ।
आ शुषे राधसे महे ॥१६॥

हे ऋत्विजो ! वृत्रहन्ता, बलशाली, हितैषी इन्द्रदेव की स्तुति करके, तुम्हारे निमित्त महान् ऐश्वर्य प्रदान करता हूँ॥१६॥

अया धिया च गव्यया पुरुणामन्पुरुष्टुत ।
यत्सोमेसोम आभवः ॥१७॥

बहुत से नामों से युक्त, बहुप्रशंसित हे इन्द्रदेव ! प्रत्येक सोमयज्ञ में जहाँ आप पहुँचते हैं, वहाँ गौओं की कामना वाली बुद्धि से हम आपकी स्तुति करते हैं॥१७॥

बोधिन्मना इदस्तु नो वृत्रहा भूर्यासुतिः ।
शृणोतु शक्र आशिषम् ॥१८॥

जिस देव के लिए बहुत से व्यक्ति सोमरस तैयार करते हैं, जो हमारी कामनाओं के ज्ञाता हैं, युद्धक्षेत्र में शत्रुओं को पराजित करने वाले हैं, सामर्थ्यवान् और वृत्र संहारक वे इन्द्रदेव हमारी स्तुतियों को ध्यान से सुनें॥१८॥

कया त्वं न ऊत्याभि प्र मन्दसे वृषन् ।
कया स्तोतृभ्य आ भर ॥१९॥

हे अभीष्ट फलदायक इन्द्रदेव ! आप किस साधन से रक्षा करते हुए हमें अति हर्ष प्रदान करते हैं? कौन सी संरक्षण सामर्थ्य से आप स्तोताओं को सम्पन्न बनायेंगे ?॥१९॥

कस्य वृषा सुते सचा नियुत्वान्वृषभो रणत् ।
वृत्रहा सोमपीतये ॥२०॥

सामर्थ्यवान् , अश्ववान्, वृत्रहन्ता तथा अभिलाषाओं की पूर्ति करने वाले हे इन्द्रदेव ! किसे याजक के सोम अभिषव में भाग लेकर आप हर्षित होंगे?॥२०॥

अभी षु णस्त्वं रयिं मन्दसानः सहस्रिणम् ।
प्रयन्ता बोधि दाशुषे ॥२१॥

हे इन्द्रदेव ! आप हर्षित होकर हमें सहस्रों प्रकार के ऐश्वर्य प्रदान करें । वि प्रदाताओं को प्रेरित करने वाले आप, हमारी स्तुतियों पर ध्यान दें॥२१॥

पत्नीवन्तः सुता इम उशन्तो यन्ति वीतये ।
अपां जग्मिर्निचुम्पुणः ॥२२॥

पोषक जल से युक्त यह अभिषुत सोमरस इन्द्रदेव द्वारा पिये जाने की कामना करता हुआ उनकी ओर प्रवाहित होता है। सोमरस उनको आनन्दित करते हुए जल में समाविष्ट हो॥२२॥

इष्टा होत्रा असृक्षतेन्द्रं वृधासो अध्वरे ।
अच्छावभृथमोजसा ॥२३॥

इन्द्रदेव की प्रशंसा करने वाले याजकगण अपनी शक्ति से हमारे यज्ञ में अवभृथ स्नान (यज्ञ की समाप्ति पर होने वाला स्नान) होने तक यज्ञाहुतियाँ देते हैं॥२३॥

इह त्या सधमाद्या हरी हिरण्यकेश्या ।
वोळ्हामभि प्रयो हितम् ॥२४॥

स्वर्णिम केशों वाले तथा साथ-साथ आनन्दित होने वाले इन्द्रदेव के दोनों अश्व, उन ( इन्द्रदेव) को सोमरूप अन्न की ओर ले आएँ॥२४॥

तुभ्यं सोमाः सुता इमे स्तीर्णं बर्हिर्विभावसो ।
स्तोतृभ्य इन्द्रमा वह ॥२५॥

हे अग्निदेव ! आपके लिए यह सोमरस शोधित हुआ है । पवित्र कुश ( आसन के रूप में) बिछाये गये हैं। आप स्तोताओं के निमित्त इन्द्रदेव का आवाहन करें॥२५॥

आ ते दक्षं वि रोचना दधद्रत्ना वि दाशुषे ।
स्तोतृभ्य इन्द्रमर्चत ॥२६॥

हे याजको ! स्तुति करने वालों के निमित्त आप इन्द्रदेव की उपासना करें, जिससे हवि प्रदाता यजमान को वे शक्ति तथा रत्न प्रदान करें॥२६॥

आ ते दधामीन्द्रियमुक्था विश्वा शतक्रतो ।
स्तोतृभ्य इन्द्र मृळय ॥२७॥

हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! बलवर्धक समस्त स्तोत्रों को हम आपके निमित्त उच्चारित करते हैं । स्तुति प्रदान करने वालों को आप सुख प्रदान करें॥२७॥

भद्रम्भद्रं न आ भरेषमूर्जं शतक्रतो ।
यदिन्द्र मृळयासि नः ॥२८॥

हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! आप हमें सुखकारी अन्न-बल से युक्त ऐश्वर्य प्रचुर मात्रा में प्रदान करें, क्योंकि आप ही हमें सुखी बनाते हैं॥२८॥

स नो विश्वान्या भर सुवितानि शतक्रतो ।
यदिन्द्र मृळयासि नः ॥२९॥

हे शतक्रतो इन्द्रदेव ! यदि आप हमें सुख प्रदान करने की इच्छा करते हैं, तो समस्त हितकारी ऐश्वर्यों से हमें परिपूर्ण करें॥२९॥

त्वामिद्वृत्रहन्तम सुतावन्तो हवामहे ।
यदिन्द्र मृळयासि नः ॥३०॥

रिपुओं का विनाश करने वाले हे इन्द्रदेव ! सोम अभिषव करने वाले हमें याजक, जब आपका आवाहन करें, तब आप हमें सुख प्रदान करें॥३०॥

उप नो हरिभिः सुतं याहि मदानां पते ।
उप नो हरिभिः सुतम् ॥३१॥

है सोमाधिपति इन्द्रदेव ! अपने श्रेष्ठ घोड़ों के द्वारा आप हमारे सोमयज्ञ में बार-बार पधारें॥३१॥

द्विता यो वृत्रहन्तमो विद इन्द्रः शतक्रतुः ।
उप नो हरिभिः सुतम् ॥३२॥

जो इन्द्रदेव वृत्रहन्ता तथा शतक्रतु इन दो नामों ( या कर्मों) से जाने जाते हैं, वे हमारे द्वारा अभिषुत सोमरस के निकट अपने अश्वों द्वारा पधारें॥३२॥

त्वं हि वृत्रहन्नेषां पाता सोमानामसि ।
उप नो हरिभिः सुतम् ॥३३॥

हे शत्रुहन्ता इन्द्रदेव ! सोमरस को पीने की इच्छा से आप हमारे यज्ञ में अश्वों के माध्यम से पधारें॥३३॥

इन्द्र इषे ददातु न ऋभुक्षणमृभुं रयिम् ।
वाजी ददातु वाजिनम् ॥३४॥

शक्ति-सम्पन्न इन्द्रदेव हमें श्रेष्ठ धन से सदैव परिपूर्ण करें । वे अन्न प्राप्ति के लिए श्रेष्ठ उत्तराधिकार प्रदान करें । हे बलशाली ! आप हमें बलवान् बनाएँ॥३४॥

# सूक्त १४

ऋषि: बिन्दु पूतदक्षो , अंगिरस
देवता – मरुत:। छंद: गायत्री

गौर्धयति मरुतां श्रवस्युर्माता मघोनाम् ।
युक्ता वह्नी रथानाम् ॥१॥

धन-सम्पन्न मरुतों की माता गौ ( उत्पादक किरणें ), अन्नादि उत्पन्न करने की इच्छा से अपने पुत्रों को दुग्ध (सोम) का पान कराती हैं। वे मरुद्गणों को रथ से नियोजित करती हैं॥१॥

यस्या देवा उपस्थे व्रता विश्वे धारयन्ते ।
सूर्यामासा दृशे कम् ॥२॥

माता गौ के समीप ( गोद में ) रहकर समस्त देवगण अपने-अपने व्रतो का विधिवत् निर्वाह करते हैं । सूर्य तथा चन्द्रमा भी इनके निकट रहकर समस्त भुवनों को आलोकित करते हैं॥२॥

तत्सु नो विश्वे अर्य आ सदा गृणन्ति कारवः ।
मरुतः सोमपीतये ॥३॥

हे मरुतो ! समस्त स्तोतागण आपके सामर्थ्य की विधिवत् प्रार्थना करते हैं; अत: सोमरस पीने के लिए आप यहाँ पधारें॥३॥

अस्ति सोमो अयं सुतः पिबन्त्यस्य मरुतः ।
उत स्वराजो अश्विना ॥४॥

हमारे द्वारा शोधित इस सोमरस का पान तेजस्वी मरुद्गण तथा अश्विनीकुमार करते हैं॥४॥

पिबन्ति मित्रो अर्यमा तना पूतस्य वरुणः ।
त्रिषधस्थस्य जावतः ॥५॥

मित्र, अर्यमा और वरुणदेव इस संस्कारित हुए और तीन पात्रों में रखे हुए प्रशंसनीय सोमरस का पान करते हैं॥५॥

उतो न्वस्य जोषमाँ इन्द्रः सुतस्य गोमतः ।
प्रातर्होतेव मत्सति ॥६॥

इन्द्रदेव भी प्रातः यज्ञ करने वाले होता की भाँति इस गोदुग्ध युक्त सोम का पान करके आनन्दित होते हैं॥६॥

कदत्विषन्त सूरयस्तिर आप इव स्निधः ।
अर्षन्ति पूतदक्षसः ॥७॥

विद्वान् मरुद्गण वक्र गति द्वारा कब उत्पन्न होंगे? वे रिपुओं का संहार करने वाले हैं । पुनीत शक्ति ग्रहण करने वाले वे मरुद्गण हमारे यज्ञ में कब पधारेंगे?॥७॥

कद्वो अद्य महानां देवानामवो वृणे ।
त्मना च दस्मवर्चसाम् ॥८॥

हे मरुतो ! आप अत्यन्त तेजोयुक्त, श्रेष्ठ तथा प्रदीप्त हैं। आपसे सुरक्षा की प्रार्थना हम स्तोतागण कब करें ?॥८॥

आ ये विश्वा पार्थिवानि पप्रथन्रोचना दिवः ।
मरुतः सोमपीतये ॥९॥

जिन मरुद्गणों ने धरती के समस्त पदार्थों तथा दिव्य लोक के तेजोयुक्त पदार्थों को संवधित किया हैं, हम उन वीरों को सोमरस पीने के लिए आहूत करते हैं॥९॥

त्यान्नु पूतदक्षसो दिवो वो मरुतो हुवे ।
अस्य सोमस्य पीतये ॥१०॥

हे मरुद्गण ! आप अत्यन्त तेजोयुक्त तथा पुनीत शक्ति से सम्पन्न हैं । हम सोमरस पीने के लिए आपका आवाहन करते हैं॥१०॥

त्यान्नु ये वि रोदसी तस्तभुर्मरुतो हुवे ।
अस्य सोमस्य पीतये ॥११॥

जिन मरुतों ने आकाश तथा धरती को आधार प्रदान किया है, उनका हम सोमरस पीने के लिए आवाहन करते हैं॥११॥

त्यं नु मारुतं गणं गिरिष्ठां वृषणं हुवे ।
अस्य सोमस्य पीतये ॥१२॥

जो मरुद्गण पर्वतों पर निवास करने वाले हैं तथा शक्ति से सम्पन्न हैं, उन मरुतों के समूह का सोमरस पान करने के निमित्त हम आवाहन करते हैं॥१२॥

# सूक्त ९५

ऋषि: तिरश्चीरांगिरस
देवता – इन्द्र:। छंद: अनुष्टुप

आ त्वा गिरो रथीरिवास्थुः सुतेषु गिर्वणः ।
अभि त्वा समनूषतेन्द्र वत्सं न मातरः ॥१॥

हे स्तुत्य इन्द्रदेव ! रथारूढ़ होकर सुरक्षित पहुँचने वाले योद्धा के समान तथा बछड़े के पास शीघ्र पहुँचने वाली गौ के समान, 'सोमयाग' में हमारी स्तुतियाँ आपके पास पहुँच जाती हैं॥१॥

आ त्वा शुक्रा अचुच्यवुः सुतास इन्द्र गिर्वणः ।
पिबा त्वस्यान्धस इन्द्र विश्वासु ते हितम् ॥२॥

हे प्रार्थनीय इन्द्रदेव ! आपके निमित्त समस्त दिशाओं में सोमरस विद्यमान है। अभिषुत सोमरस आपके समीप शीघ्र गमन करे । हे इन्द्रदेव ! आप अन्नरूष सोमरस को पान करें॥२॥

पिबा सोमं मदाय कमिन्द्र श्येनाभृतं सुतम् ।
त्वं हि शश्वतीनां पती राजा विशामसि ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! आप समस्त प्रजाओं के स्वामी तथा सम्राट् हैं । श्येन पक्षी द्वारा लाये हुए तथा अभिषुत किये हुए सोमरस का आप उत्साहित होने के लिए पान करें । आप समस्त प्रजाओं के स्वामी तथा शासक हैं॥३॥

श्रुधी हवं तिरश्च्या इन्द्र यस्त्वा सपर्यति ।
सुवीर्यस्य गोमतो रायस्पूर्धि महाँ असि ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! सत्कार करने वाले 'तिरश्ची' ऋषि के स्तोत्रों को आप सुनें । हे महान् इन्द्रदेव ! आप श्रेष्ठ बल एवं गौ प्रदान करते हुए हमें धन-सम्पदा से परिपूर्ण करें॥४॥

इन्द्र यस्ते नवीयसीं गिरं मन्द्रामजीजनत् ।
चिकित्विन्मनसं धियं प्रत्नामृतस्य पिप्युषीम् ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! जो भी साधक नवीन आनन्ददायी स्तुतियों से आपका स्तवन करते हैं, उन्हें आप सनातन यज्ञ से वृद्धि को प्राप्त हुई तथा मन को पवित्र करने वाली बुद्धि प्रदान करें॥५॥

तमु ष्टवाम यं गिर इन्द्रमुक्थानि वावृधुः ।
पुरूण्यस्य पौंस्या सिषासन्तो वनामहे ॥६॥

जिन इन्द्रदेव की महिमा मंत्रों और स्तोत्रों द्वारा गायी गई है, उन महान् पराक्रमी इन्द्रदेव की हम भक्तिभाव से स्तुति करते हैं॥६॥

एतो न्विन्द्रं स्तवाम शुद्धं शुद्धेन साम्ना ।
शुद्धैरुक्थैर्वावृध्वांसं शुद्ध आशीर्वान्ममत्तु ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आप शीघ्र पधारें । शुद्ध रूप से उच्चरित साम और यजुर्मंत्रों द्वारा हम आपका स्तवन करते हैं। बलवर्धक, मंत्रों से शोधित किया गया, गो-दुग्ध मिश्रित सोमरस आपको आनन्द प्रदान करे॥७॥

इन्द्र शुद्धो न आ गहि शुद्धः शुद्धाभिरूतिभिः ।
शुद्धो रयिं नि धारय शुद्धो ममद्धि सोम्यः ॥८॥

हे पवित्र इन्द्रदेव ! आप हमारे निकट आएँ। आप पवित्र होकर पवित्र साधनों सहित आएँ । पवित्र होकर ही हमें ऐश्वर्य प्रदान करें। पवित्र होकर सोमपान करके आप आनन्दित हों॥८॥

इन्द्र शुद्धो हि नो रयिं शुद्धो रत्नानि दाशुषे ।

शुद्धो वृत्राणि जिघ्नसे शुद्धो वाजं सिषाससि ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! आप पवित्र हैं। हमें ऐश्वर्य प्रदान करें । उत्तम कर्मों में आने वाले विघ्नों को दूर करें । ऐश्वर्य देने में समर्थ आप हमारे मन्त्रों से शुद्ध होकर शत्रुओं को विनष्ट करें॥९॥

# सूक्त ९६

ऋषि: तिरश्चीरांगिरस, द्यूतानो, मारुत:
देवता – इन्द्र:, १४ इन्द्रामरुत:, १५ इन्द्राबृहस्पती छंद: त्रिष्टुप,
४ विराट, २१ पुरस्ताज्ज्योति:

अस्मा उषास आतिरन्त याममिन्द्राय नक्तमूर्म्याः सुवाचः ।
अस्मा आपो मातरः सप्त तस्थुर्नृभ्यस्तराय सिन्धवः सुपाराः ॥१॥

उन इन्द्रदेव के कारण उषाओं ने अपनी चाल को तेज किया। उनके निमित्त रात के चौथे प्रहर में श्रेष्ठ प्रार्थनाएँ उच्चरित की जाती हैं। उन इन्द्रदेव के कारण ही जल (स्नेह) से पूर्ण सप्त मातृकाये ( या नदियाँ) प्रवाहित होती हैं तथा सिन्धु (नदियाँ या समुद्र) मनुष्यों के लिए सुगमता से पार करने योग्य हो जाती हैं॥१॥

अतिविद्धा विथुरेणा चिदस्त्रा त्रिः सप्त सानु संहिता गिरीणाम् ।
न तद्देवो न मर्त्यस्तुतुर्याद्यानि प्रवृद्धो वृषभश्चकार ॥२॥

अपने वज्र के द्वारा इन्द्रदेव ने बिना किसी की सहायता के एकत्रित हुए पहाड़ों ( या मेघों) के इक्कीस शिखरों को नष्ट कर दिया। उन समृद्धिशाली तथा शक्तिशाली इन्द्रदेव ने जिस शौर्य को प्रकट किया, उसे कोई भी मानव अथवा देव नहीं कर सकते॥२॥

इन्द्रस्य वज्र आयसो निमिश्ल इन्द्रस्य बाह्वोर्भूयिष्ठमोजः ।
शीर्षन्निन्द्रस्य क्रतवो निरेक आसन्नेषन्त श्रुत्या उपाके ॥३॥

इन्द्रदेव अपने कठोर वज्र को परिपुष्ट भुजाओं में धारण करते हैं। संग्राम में प्रस्थान के समय वे अपने सिर पर मुकुट धारण करते हैं। उनके आदेशों को सुनने तथा मानने के लिए समस्त प्रजाएँ विद्यमान रहती हैं॥३॥

मन्ये त्वा यज्ञियं यज्ञियानां मन्ये त्वा च्यवनमच्युतानाम् ।
मन्ये त्वा सत्वनामिन्द्र केतुं मन्ये त्वा वृषभं चर्षणीनाम् ॥४॥

हे इन्द्रदेव ! आप यज्ञों में सर्वाधिक पूज्य, च्युत न होने वाले पर्वतों को भी वज्र के प्रहार से विदीर्ण करने वाले तथा मनुष्यों में सबसे अधिक बुद्धि वाले हैं । हम आपके सम्बन्ध में ऐसी मान्यता रखते हैं॥४॥

आ यद्वज्रं बाह्वोरिन्द्र धत्से मदच्युतमहये हन्तवा उ ।

प्र पर्वता अनवन्त प्र गावः प्र ब्रह्माणो अभिनक्षन्त इन्द्रम् ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! मद से चूर 'अहि' नामक असुर का संहार करने के लिए जब आप अपने वज्र को हाथ में उठाते हैं, उस समय आपके सम्मुख पर्वत (मेघ) तथा गौएँ ( किरणें ) नत होते हैं और विद्वान् लोग आपकी प्रार्थना करते हैं॥५॥

तमु ष्टवाम य इमा जजान विश्वा जातान्यवराण्यस्मात् ।
इन्द्रेण मित्रं दिधिषेम गीर्भिरुपो नमोभिर्वृषभं विशेम ॥६॥

जो इन्द्रदेव समस्त प्राणियों को उत्पन्न करते हैं तथा जिनके बाद समस्त जगत् पैदा हुआ, उन इन्द्रदेव को हम स्तोतागण अपनी प्रार्थनाओं द्वारा अपना मित्र बनाते हैं। नमस्कार करते हुए उन शक्तिशाली देव के समीप बैठते हैं॥६॥

वृत्रस्य त्वा श्वसथादीषमाणा विश्वे देवा अजहुर्ये सखायः ।
मरुद्भिरिन्द्र सख्यं ते अस्त्वथेमा विश्वाः पृतना जयासि ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! वृत्रासुर के भय से आपके सभी सहायक देवगण आपका परित्याग करके चारों दिशाओं में पलायन कर गये । तदनन्तर मरुद्गणों का सहयोग लेकर आपने शत्रु-सेना को परास्त किया॥७॥

त्रिः षष्टिस्त्वा मरुतो वावृधाना उस्रा इव राशयो यज्ञियासः ।
उप त्वेमः कृधि नो भागधेयं शुष्मं त एना हविषा विधेम ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! तिरसठ मरुतों ने बैलों के समूह के समान एकत्रित होकर आपको समृद्ध किया; इससे आप वंदनीय हो गये । हम आपके आश्रय में आते हैं, अत: आप हमें सम्पत्ति प्रदान करें। हम भी सोम की आहुतियाँ समर्पित करके आपकी सामर्थ्य को बढ़ाते हैं ॥८॥

तिग्ममायुधं मरुतामनीकं कस्त इन्द्र प्रति वज्रं दधर्ष ।
अनायुधासो असुरा अदेवाश्चक्रेण ताँ अप वप ऋजीषिन् ॥९॥

हे इन्द्रदेव ! तीक्ष्ण हथियारों , वज्र तथा मरुतों से सम्पन्न आपकी सेनाओं का कौन शत्रु प्रतिरोध कर सकता है ? सोम से सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! आप, हथियार रहित, देवत्व विहीन राक्षसों को भी अपने चक्र से विनष्ट न करें॥९॥

मह उग्राय तवसे सुवृक्तिं प्रेरय शिवतमाय पश्वः ।
गिर्वाहसे गिर इन्द्राय पूर्वीर्धेहि तन्वे कुविदङ्ग वेदत् ॥१०॥

हे याजको ! आप पशुओं को प्राप्त करने के निमित्त, अत्यन्त शौर्यवान् तथा हितकारी इन्द्रदेव की प्रार्थना करें। उन प्रार्थनीय इन्द्रदेव के

निमित्त बारम्बार प्रार्थनाएँ करें, जिससे वे हमारी सन्तानों के लिए प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करें॥१०॥

उक्थवाहसे विभ्वे मनीषां द्रुणा न पारमीरया नदीनाम् ।
नि स्पृश धिया तन्वि श्रुतस्य जुष्टतरस्य कुविदङ्ग वेदत् ॥११॥

हे स्तोताओ ! नाविकों द्वारा नदी पार कराने की तरह आप अपनी स्तुतियों को बुद्धिपूर्वक महान् इन्द्रदेव के लिए प्रेषित करें । वे यशस्वी इन्द्रदेव हमें तथा हमारी सन्तानों को प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करें॥११॥

तद्विविड्ढि यत्त इन्द्रो जुजोषत्स्तुहि सुष्टुतिं नमसा विवास ।
उप भूष जरितर्मा रुवण्यः श्रावया वाचं कुविदङ्ग वेदत् ॥१२॥

हे स्तोताओ ! आप इन्द्रदेव के निमित्त श्रेष्ठ प्रार्थनाएँ करें । आप उनकी इच्छा के अनुरूप प्रार्थनाएँ करें । आप अपनी गरीबी के लिए विलाप न करें, वरन् पवित्र मन से उनकी प्रार्थना करें । वे आपको प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करेंगे॥१२॥

अव द्रप्सो अंशुमतीमतिष्ठदियानः कृष्णो दशभिः सहस्रैः ।
आवत्तमिन्द्रः शच्या धमन्तमप स्नेहितीर्नृमणा अधत्त ॥१३॥

त्वरित गतिशील, दस हजार सैनिकों सहित आक्रमण करने वाले, सम्पूर्ण संसार को दुःख देने वाले, 'अंशुमती' नदी (यमुना) के तट पर विद्यमान, (सबको आकर्षित करके अपने चंगुल में फंसा लेने वाले) कृष्णासुर पर सर्वप्रिय इन्द्रदेव ने प्रत्याक्रमण करके शत्रुओं की सेना को पराजित कर दिया॥१३॥

द्रप्समपश्यं विषुणे चरन्तमुपह्वरे नद्यो अंशुमत्याः ।
नभो न कृष्णमवतस्थिवांसमिष्यामि वो वृषणो युध्यताजौ ॥१४॥

इन्द्रदेव ने कहा-'अंशुमती नदी के तट पर गुफाओं में घूमते हुए 'कृष्णासुर' को हमने सूर्य के सदृश देख लिया है । हे शक्तिशाली मरुतो ! हम आपके सहयोग की आकांक्षा करते हैं। आप संग्राम में उसका संहार करें॥१४॥

अध द्रप्सो अंशुमत्या उपस्थेऽधारयत्तन्वं तित्विषाणः ।
विशो अदेवीरभ्याचरन्तीर्बृहस्पतिना युजेन्द्रः ससाहे ॥१५॥

अंशुमती नदी के तट पर शीघ्रगामी कृष्णासुर तेज-सम्पन्न होकर निवास करता है । इन्द्रदेव ने बृहस्पति देव की सहायता से, सभी ओर से आक्रमण के लिए बढ़ती हुई उसकी सेनाओं को परास्त किया॥१५॥

त्वं ह त्यत्सप्तभ्यो जायमानोऽशत्रुभ्यो अभवः शत्रुरिन्द्र ।
गूळ्हे द्यावापृथिवी अन्वविन्दो विभुमद्भ्यो भुवनेभ्यो रणं धाः ॥१६॥

अजातशत्रु हे इन्द्रदेव ! वृत्रादि सात राक्षसों के उत्पन्न होते ही आप उनके शत्रु हो गये । (राक्षसों द्वारा स्थापित किये गये) अंधकार से घुलोक और पृथ्वी को (उद्धार करके) आपने प्रकाशित किया । अब आपने इन लोकों को भली-भाँति स्थिर करके ऐश्वर्यवान् तथा सौन्दर्यशाली बना दिया है॥१६॥

त्वं ह त्यदप्रतिमानमोजो वज्रेण वज्रिन्धृषितो जघन्थ ।
त्वं शुष्णस्यावातिरो वधत्रैस्त्वं गा इन्द्र शच्येदविन्दः ॥१७॥

वज्र धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप रिपुओं को दबाने वाले हैं। असीमित शक्ति वाले 'शुष्णासुर' को आपने अपने वज्र से विनष्ट किया । राजर्षि 'कुत्स' के निमित्त आपने उसे (शुष्णासुर को) अपने हथियारों द्वारा काट डाला तथा अपने बल से गौओं ( किरणों या जलधाराओं) को उत्पन्न किया॥१७॥

त्वं ह त्यद्वृषभ चर्षणीनां घनो वृत्राणां तविषो बभूथ ।
त्वं सिन्धूँरसृजस्तस्तभानान्त्वमपो अजयो दासपत्नीः ॥१८॥

मनुष्यों में सामर्थ्यवान् हे इन्द्रदेव ! आप ही उन रिपुओं का संहार करके बलशाली हुए हैं। आपने ही अवरुद्ध सरिताओं को प्रवाहित किया तथा दस्युओं द्वारा नियन्त्रित किये हुए जल प्रवाहों को अपने अधिकार में किया॥१८॥

स सुक्रतू रणिता यः सुतेष्वनुत्तमन्युर्यो अहेव रेवान् ।
य एक इन्नर्यपांसि कर्ता स वृत्रहा प्रतीदन्यमाहुः ॥१९॥

सत्कर्म करने वाले इन्द्रदेव सोमयागों में आनन्दित होते हैं। वे अकेले ही मनुष्यों के युद्धों में वृत्र तथा अन्य रिपुओं का संहार अपने पराक्रम द्वारा करते हैं । वे दिन के सदृश ऐश्वर्यवान् हैं तथा अत्यधिक मन्यु (परिष्कृत क्रोध) प्रकट करने वाले हैं॥१९॥

स वृत्रहेन्द्रश्चर्षणीधृत्तं सुष्टुत्या हव्यं हुवेम ।
स प्राविता मघवा नोऽधिवक्ता स वाजस्य श्रवस्यस्य दाता ॥२०॥

जो वृत्र का संहार करने वाले तथा मुनष्यों का पालन करने वाले हैं, ऐसे आवाहनीय इन्द्रदेव को हम अपनी प्रार्थनाओं के द्वारा आहूत करते हैं। जो हमारे संरक्षक तथा नियन्त्रक हैं, ऐसे धनवान् इन्द्रदेव हमें अन्न प्रदान करने वाले हैं॥२०॥

स वृत्रहेन्द्र ऋभुक्षाः सद्यो जज्ञानो हव्यो बभूव ।

कृण्वन्नपांसि नर्या पुरूणि सोमो न पीतो हव्यः सखिभ्यः ॥२१॥

शिल्पकारों के संग निवास करने वाले तथा वृत्र का संहार करने वाले इन्द्रदेव प्रकट होते ही आवाहन करने योग्य हो गये । अनेकों व्यक्तियों के निमित्त कल्याणकारी कर्मों को करते हुए, वे इन्द्रदेव पान किये गये सोमरस के सदृश सखाओं द्वारा वरण करने योग्य हो गये॥२१॥

# सूक्त ९७

ऋषि: रेभ काश्यप:
देवता – इन्द्र:। छंद: वृहती, १०, १३ अतिजगती, ११-१२
उपरिष्टाद् वृहती, १४ त्रिष्टुप, १५ जगती

या इन्द्र भुज आभरः स्वर्वाँ असुरेभ्यः ।
स्तोतारमिन्मघवन्नस्य वर्धय ये च त्वे वृक्तबर्हिषः ॥१॥

आत्मशक्ति सम्पन्न हे इन्द्रदेव ! आप राक्षसों से जीतकर लाये गये धन से स्तोताओं का संरक्षण करें और जो आपका आवाहन करते हैं, उनकी वृद्धि करें॥१॥

यमिन्द्र दधिषे त्वमश्वं गां भागमव्ययम् ।
यजमाने सुन्वति दक्षिणावति तस्मिन्तं धेहि मा पणौ ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! आपके पास जो गौएँ, अश्व तथा अविनाशी ऐश्वर्य विद्यमान हैं, उसे आप सोमयागीं तथा दक्षिणा प्रदान करने वाले याजकों को

प्रदान करें । आप उसे सम्पत्ति अर्जित करने वाले कृपण जमाखोरों को न दें॥२॥

य इन्द्र सस्त्यव्रतोऽनुष्वापमदेवयुः ।
स्वैः ष एवैर्मुमुरत्पोष्यं रयिं सनुतर्धेहि तं ततः ॥३॥

हे इन्द्रदेव ! जो कुमार्गगामी व्यक्ति अपने कर्तव्यों पर ध्यान नहीं देता, वह अपने ही आचरण से अपने ऐश्वर्य को विनष्ट कर देता है । आप उसके ऐश्वर्य को उससे छिपाकर हमें प्रदान करें॥३॥

यच्छक्रासि परावति यदर्वावति वृत्रहन् ।
अतस्त्वा गीर्भिर्द्युगदिन्द्र केशिभिः सुतावाँ आ विवासति ॥४॥

सामर्थ्यवान् , वृत्रहन्ता है इन्द्रदेव ! आप दूरस्थ हों या निकट हों, श्रेष्ठ घोड़ों के समान वेगवान् स्तुतियों में सोमयज्ञ में याजक आपका आवाहन करते हैं॥४॥

यद्वासि रोचने दिवः समुद्रस्याधि विष्टपि ।
यत्पार्थिवे सदने वृत्रहन्तम यदन्तरिक्ष आ गहि ॥५॥

वृत्र का संहार करने वालों में सर्वश्रेष्ठ हे सामर्थ्यवान् इन्द्रदेव ! आप दिव्यलोक के आलोकित स्थान में निवास करते हों, समुद्र के तल में

हों; भूमि या अन्तरिक्ष में जहाँ भी हो; आप उस स्थान से हमारे समीप पधारे॥५॥

स नः सोमेषु सोमपाः सुतेषु शवसस्पते ।
मादयस्व राधसा सूनृतावतेन्द्र राया परीणसा ॥६॥

सामर्थ्य के स्वामी हे इन्द्रदेव ! आप सोमरस पीने वाले हैं। सोमरस संस्कारित होने पर आप हमें मधुर वचनों से सम्पन्न प्रचुर ऐश्वर्य प्रदान करके हर्षित करें॥६॥

मा न इन्द्र परा वृणग्भवा नः सधमाद्यः ।
त्वं न ऊती त्वमिन्न आप्यं मा न इन्द्र परा वृणक् ॥७॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे रक्षक तथा बन्धु हैं । आप हमारे इस यज्ञ में पधारें। हमें आप अपने से कभी भी दूर न करें॥७॥

अस्मे इन्द्र सचा सुते नि षदा पीतये मधु ।
कृधी जरित्रे मघवन्नवो महदस्मे इन्द्र सचा सुते ॥८॥

हे इन्द्रदेव ! आप हमारे यज्ञ मण्डप में साथ-साथ विद्यमान होकर मधुर सोमरस की पान करने के निमित्त आसीन हों । हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! आप स्तोताओं को महान् संरक्षण प्रदान करें॥८॥

न त्वा देवास आशत न मर्त्यासो अद्रिवः ।
विश्वा जातानि शवसाभिभूरसि न त्वा देवास आशत ॥९॥

वज्र धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! कोई भी मनुष्य अथवा देवता आपकी बराबरी नहीं कर सकते । आप अपनी शक्ति से समस्त प्राणियों को परास्त करने वाले हैं॥९॥

विश्वाः पृतना अभिभूतरं नरं सजूस्ततक्षुरिन्द्रं जजनुश्च राजसे ।
क्रत्वा वरिष्ठं वर आमुरिमुतोग्रमोजिष्ठं तवसं तरस्विनम् ॥१०॥

विगण यज्ञ में मिल-जुलकर, सेनानायक, पराक्रमी-संगठित सेना से युक्त, शस्त्रास्त्र धारण करने वाले इन्द्रदेव को प्रकट करते हैं। वे शत्रुहन्ता, उग्र, महिमाशाली, तीव्र गति से कार्य करने वाले इन्द्रदेव की स्तुति करते हैं॥१०॥

समीं रेभासो अस्वरन्निन्द्रं सोमस्य पीतये ।
स्वर्पतिं यदीं वृधे धृतव्रतो ह्योजसा समूतिभिः ॥११॥

भादि त्रषियों ( याजकों) ने सोमपान के लिए इन्द्रदेव की स्तुति की । जब (स्तोतागण), देवलोक के स्वामी, बल एवं वैभवसम्पन्न इन्द्रदेव

की वन्दना करते हैं, तो वे व्रतधारी ओज़ एवं संरक्षण-साधनों से युक्त हो जाते हैं ॥११॥

नेमिं नमन्ति चक्षसा मेषं विप्रा अभिस्वरा ।
सुदीतयो वो अद्रुहोऽपि कर्णे तरस्विनः समृक्वभिः ॥१२॥

नम्र स्वभाव वाले विद्वान् ( भ आदि) नेत्रों एवं वाणी से इन्द्रदेव को नमस्कार करते हैं। किसी से द्रोह न करने वाले हे श्रेष्ठ, तेजस्वी स्तोताओ ! आप भी इन्द्रदेव के कानों को प्रिय लगने वाली चाओं से उनकी स्तुति करें॥१२॥

तमिन्द्रं जोहवीमि मघवानमुग्रं सत्रा दधानमप्रतिष्कुतं शवांसि ।
मंहिष्ठो गीर्भिरा च यज्ञियो ववर्तद्राये नो विश्वा सुपथा कृणोतु वज्री ॥१३॥

धनवान्, वीर, महाबलशाली, अपराजेय इन्द्रदेव को हम सहायतार्थ बुलाते हैं। सबसे महान् , यज्ञों में पूज्य इन्द्रदेव की म्तोत्रों द्वारा प्रार्थना करते हैं। वे वज्रधारी ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए हमारे सभी मार्ग मुलभ बनाएँ॥१३॥

त्वं पुर इन्द्र चिकिदेना व्योजसा शविष्ठ शक्र नाशयध्यै ।
त्वद्विश्वानि भुवनानि वज्रिन्द्यावा रेजेते पृथिवी च भीषा ॥१४॥

हे शक्तिशाली इन्द्रदेव ! आप अपने ओज से रिपुओं की समस्त पुरियों को ध्वस्त करना रानते हैं। वज्र धारण करने वाले हे इन्द्रदेव ! आपके डर से समस्त लोक तथा द्यावा-पृथिवी प्रकम्पित होते हैं॥१४॥

तन्म ऋतमिन्द्र शूर चित्र पात्वपो न वज्रिन्दुरितावि पर्षि भूरि ।
कदा न इन्द्र राय आ दशस्येर्विश्वप्स्न्यस्य स्पृहयाय्यस्य राजन् ॥१५॥

शूरवीर तथा अद्भुत तेजस्वी हे इन्द्रदेव ! आप अपने सत्य से हमारा संरक्षण करें । हे वज्रिन् इन्द्रदेव ! जिस प्रकार नाविक जल से पार लगा देते हैं, उसी प्रकार आप पापों तथा विपत्तियों से हमें पार लगा दें। आप हमें विविध रूपों वाले वांछित ऐश्वर्य को कब प्रदान करेंगे ?॥१५॥

# सूक्त ९८

ऋषि: नृमेध् अंगिरस
देवता – इन्द्रः । छंद: उष्णिक , ७, १०-१२ ककुप्, ९,१२ पुरउष्णिक

इन्द्राय साम गायत विप्राय बृहते बृहत् ।
धर्मकृते विपश्चिते पनस्यवे ॥१॥

हे उद्गाताओ ! विवेक-सम्पन्न, महान् , स्तुत्य, ज्ञानवान् इन्द्रदेव के निमित्त आप लोग बृहत्साम ( नामक स्तोत्रों) का गायन करें॥१॥

त्वमिन्द्राभिभूरसि त्वं सूर्यमरोचयः ।
विश्वकर्मा विश्वदेवो महाँ असि ॥२॥

सूर्य को प्रकाशित करने वाले, दुष्ट-दुराचारियों को पराजित करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप विश्वकर्मा हैं, विश्व के प्रकाशक हैं, महान् हैं॥२॥

विभ्राजञ्ज्योतिषा स्वरगच्छो रोचनं दिवः ।
देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे ॥३॥

अपने तेज का विस्तार करते हुए सूर्य को प्रकाशित करने वाले हे इन्द्रदेव ! आप पधारें । समस्त देवतागण आपसे मित्रतापूर्वक सम्पर्क स्थापित करना चाहते हैं॥३॥

एन्द्र नो गधि प्रियः सत्राजिदगोह्यः ।
गिरिर्न विश्वतस्पृथुः पतिर्दिवः ॥४॥

सर्वप्रिय, सभी शत्रुओं को जीतने वाले, अपराजेय हे इन्द्रदेव ! पर्वत के सदृश सुविशाल, द्युलोक के अधिपति आप ( अनुदान देने हेतु ) हमारे पास पधारें॥४॥

अभि हि सत्य सोमपा उभे बभूथ रोदसी ।
इन्द्रासि सुन्वतो वृधः पतिर्दिवः ॥५॥

सत्यपालक, सोमपायी हे इन्द्रदेव ! आप आकाश और पृथ्वी दोनों लोकों को अपने प्रभाव में लेने में समर्थ हैं । हे द्युलोक के स्वामी ! आप सोमयाग कर्ताओं को उन्नति प्रदान करने वाले हैं॥५॥

त्वं हि शश्वतीनामिन्द्र दर्ता पुरामसि ।
हन्ता दस्योर्मनोर्वृधः पतिर्दिवः ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! आप दुष्टों के अविनाशी पुरों का नाश करने वाले, अज्ञान मिटाने वाले, यज्ञकर्ता, मनुष्यों के मनोबल को बढ़ाने वाले तथा प्रकाशलोक के स्वामी हैं॥६॥

अधा हीन्द्र गिर्वण उप त्वा कामान्महः ससृज्महे ।
उदेव यन्त उदभिः ॥७॥

स्तोत्रों से पूजित हे इन्द्रदेव ! आपके पास हम लोग बड़ी-बड़ी कामनाएँ लेकर उसी प्रकार आते हैं, जैसे जल स्वभावत: जल समूह की ओर (नाले नदी की ओर तथा नदियाँ समुद्र की ओर) प्रवाहित होता हैं॥७॥

वार्ण त्वा यव्याभिर्वर्धन्ति शूर ब्रह्माणि ।
वावृध्वांसं चिदद्रिवो दिवेदिवे ॥८॥

वज्रधारी, शूरवीर हे इन्द्रदेव ! जैसे नदियों के जल से समुद्र की गरिमा बढ़ती है, उसी तरह हम अपनी स्तुतियों से आपकी गरिमा का विस्तार करते हैं॥८॥

युञ्जन्ति हरी इषिरस्य गाथयोरौ रथ उरुयुगे ।
इन्द्रवाहा वचोयुजा ॥९॥

गमनशील इन्द्रदेव के महान् रथ में आज्ञा मात्र से ही दो श्रेष्ठ घोड़े नियोजित हो जाते हैं। स्तोतागण उन्हें स्तोत्रों से नियोजित करते हैं॥९॥

त्वं न इन्द्रा भरँ ओजो नृम्णं शतक्रतो विचर्षणे ।
आ वीरं पृतनाषहम् ॥१०॥

अनेक कार्यों के सम्पादनकर्ता, ज्ञानी हे इन्द्रदेव ! आप हमें शक्ति एवं ऐश्वर्य से पूर्ण करें तथा शत्रु को जीतने वाला पुत्र भी प्रदान करें॥१०॥

त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ ।
अधा ते सुम्नमीमहे ॥११॥

सबको आश्रय देने वाले शतकर्मा हे इन्द्रदेव ! आप पिता तुल्य पालन करने वाले और माता तुल्य धारण करने वाले हैं। हम आपके पास सुख माँगने के लिए आते हैं॥११॥

त्वां शुष्मिन्पुरुहूत वाजयन्तमुप ब्रुवे शतक्रतो ।
स नो रास्व सुवीर्यम् ॥१२॥

असंख्यों द्वारा स्तुत्य, बलवान्, प्रशंसित, शक्तिशाली हे इन्द्रदेव ! हम आपकी स्तुति करते हुए कामना करते हैं कि हमें उत्तम, तेजस्वी सामर्थ्य प्रदान करें॥१२॥

# सूक्त ९९

ऋषि: नृमेध् अंगिरस
देवता – इन्द्र: । छंद: प्रगाथ:

त्वामिदा ह्यो नरोऽपीप्यन्वज्रिन्भूर्णयः ।
स इन्द्र स्तोमवाहसामिह श्रुध्युप स्वसरमा गहि ॥१॥

याजकों द्वारा प्रदत्त सोमरस का निरन्तर सेवन करने वाले हे वज्रधारी इन्द्रदेव ! आप त्वजों द्वारा उच्चारित स्तोत्रों को सुनते हुए यज्ञस्थल पर पधारें॥१॥

मत्स्वा सुशिप्र हरिवस्तदीमहे त्वे आ भूषन्ति वेधसः ।
तव श्रवांस्युपमान्युक्थ्या सुतेष्विन्द्र गिर्वणः ॥२॥

शिरस्त्राण धारक, अश्वपालक, स्तुति के योग्य हे इन्द्रदेव ! आपका पूजन करने वाले विविध सामग्री से आपको सुसज्जित करते हैं। आप सोमरस से तृप्त हों । हे स्तुतियोग्य इन्द्रदेव ! सोम के बाद आपके अनुरूप अन्न (हविष्य) भी आपको प्रदान किये जाते हैं॥२॥

श्रायन्त इव सूर्यं विश्वेदिन्द्रस्य भक्षत ।
वसूनि जाते जनमान ओजसा प्रति भागं न दीधिम ॥३॥

जैसे किरणें सूर्य के आश्रय में रहती हैं, वैसे ही इन्द्रदेव सम्पूर्ण जगत् के आश्रयदाता हैं । पिता से पुत्र को प्राप्त होने वाले धन के भाग की भाँति इन्द्रदेव से हम अपने भाग की कामना करते हैं, क्योंकि वे ही जन्म लिए हुए तथा जन्म लेने वालों को अपना-अपना भाग प्रदान करते हैं॥३॥

अनर्शरातिं वसुदामुप स्तुहि भद्रा इन्द्रस्य रातयः ।
सो अस्य कामं विधतो न रोषति मनो दानाय चोदयन् ॥४॥

हे स्तोताओ ! सात्विक पुरुषों को धनादि दान करने वाले इन्द्रदेव की स्तुति करें, क्योंकि इनके दान कल्याणकारी प्रेरणा प्रदान करने वाले हैं। जब इन्द्रदेव अपने मन के अनुरूप फल देने की प्रेरणा करते हैं, तो उपासक की कामना को नष्ट नहीं करते॥४॥

त्वमिन्द्र प्रतूर्तिष्वभि विश्वा असि स्पृधः ।
अशस्तिहा जनिता विश्वतूरसि त्वं तूर्य तरुष्यतः ॥५॥

हे इन्द्रदेव ! आप संग्राम में शत्रुओं को पराजित करने वाले हैं। सबके जन्मदाता आप, पालन न करने वालों एवं असुरों को नष्ट करने वाले हैं॥५॥

अनु ते शुष्मं तुरयन्तमीयतुः क्षोणी शिशुं न मातरा ।
विश्वास्ते स्पृधः श्नथयन्त मन्यवे वृत्रं यदिन्द्र तूर्वसि ॥६॥

हे इन्द्रदेव ! जिस प्रकार माता-पिता अपने शिशु की रक्षा में तत्पर रहते हैं। आकाश और पृथ्वी उसी प्रकार शत्रु-संहारक आपके बलों के अनुगामी होते हैं। जब आप वृत्रासुर का वध करते हैं, तब आपके क्रोध के समक्ष युद्ध के लिए तत्पर सभी शत्रुपक्ष वाले कमजोर पड़ जाते हैं॥६॥

इत ऊती वो अजरं प्रहेतारमप्रहितम् ।
आशुं जेतारं हेतारं रथीतममतूर्तं तुग्र्यावृधम् ॥७॥

हे साधको ! अपने संरक्षण के लिए, शत्रु-संहारक, सर्वप्रेरक, वेगवान्, यज्ञस्थल पर जाने वाले, उत्तम रथी, अहिंसनीय, जलवृष्टि करने वाले तथा अजर-अमर इन्द्रदेव का आवाहन करो॥७॥

इष्कर्तारमनिष्कृतं सहस्कृतं शतमूतिं शतक्रतुम् ।
समानमिन्द्रमवसे हवामहे वसवानं वसूजुवम् ॥८॥

अपनी सुरक्षा के लिए हम, रिषुओं का संस्कार करने वाले, सैकड़ों यज्ञादि सत्कर्म करने वाले, अनेकों प्रकार से संरक्षण प्रदान करने वाले, सदैव समान रहने वाले, संसार को आच्छादित करने वाले तथा ऐश्वर्य प्रदान करने वाले इन्द्रदेव का आवाहन करते हैं॥८॥

## सूक्त १००

ऋषि: १-३. ६-१२ नेमो भार्गव:, ४-५ इन्द्र:
देवता – इन्द्र:, ८ सुपर्ण: ९ व्रजो, १०-११ वाक । छंद: त्रिष्टुप, ६ जगती, ७-९ अनुष्टुप:

अयं त एमि तन्वा पुरस्ताद्विश्वे देवा अभि मा यन्ति पश्चात् ।
यदा मह्यं दीधरो भागमिन्द्रादिन्मया कृणवो वीर्याणि ॥१॥

हे इन्द्रदेव ! रिपुओं पर विजय प्राप्त करने के निमित्त हम आपके आगे-आगे चलते हैं तथा समस्त देवता ( संरक्षक बनकर). हमारे पीछे-पीछे चलते हैं। आप हमें शौर्य तथा ऐश्वर्य आदि भोग्य-पदार्थ प्रदान करें॥१॥

दधामि ते मधुनो भक्षमग्रे हितस्ते भागः सुतो अस्तु सोमः ।
असश्च त्वं दक्षिणतः सखा मेऽधा वृत्राणि जङ्घनाव भूरि ॥२॥

हे इन्द्रदेव ! अभिषुत सोमरस आपके लिए भली-भाँति रखा हुआ है । उस सोमभाग को हम आपके सामने प्रस्तुत करते हैं। आप हमारे

सखारूप होकर दाहिने हाथ के सदृश रहें, जिससे हम और आप मिलकर अनेकों असुरों का संहार कर सकें॥२॥

प्र सु स्तोमं भरत वाजयन्त इन्द्राय सत्यं यदि सत्यमस्ति ।
नेन्द्रो अस्तीति नेम उ त्व आह क ईं ददर्श कमभि ष्टवाम ॥३॥

शक्ति के आकांक्षी हे मनुष्यो ! वास्तव में यदि इन्द्रदेव शक्तिशाली हैं, तो उनके निमित्त यथार्थरूप में प्रार्थना करें; किन्तु 'भृगुवंशीय नेम' ऋषि तो कहते हैं कि इन्द्रदेव नाम का कोई भी नहीं हैं। यदि कोई है, तो उन्हें किस व्यक्ति ने देखा है ? यदि कोई नहीं है, तो हम किसकी प्रार्थना करें ?॥३॥

अयमस्मि जरितः पश्य मेह विश्वा जातान्यभ्यस्मि मह्ना ।
ऋतस्य मा प्रदिशो वर्धयन्त्यादर्दिरो भुवना दर्दरीमि ॥४॥

हे स्तोताओ ! 'हम' आपके समीप हैं, आप हमें देखें । हम अपनी महिमा से समस्त जीवों को परास्त कर देते हैं । सत्य की दिशाएँ हमें समृद्ध करती हैं। रिषुओं को विदीर्ण करने वाले, हम समस्त लोकों को विनष्ट कर सकते हैं॥४॥

आ यन्मा वेना अरुहन्नृतस्यँ एकमासीनं हर्यतस्य पृष्ठे ।
मनश्चिन्मे हृद आ प्रत्यवोचदचिक्रदञ्छिशुमन्तः सखायः ॥५॥

जब यज्ञ की अभिलाषा करने वालों ने हमें अकेले ही यज्ञ के बीच में आसीन कर दिया, तब उन लोगों के मन ने हमारे हृदय से कहा कि हम सन्तानों वाले, सखारूप आपका आवाहन कर रहे हैं॥५॥

विश्वेत्ता ते सवनेषु प्रवाच्या या चकर्थ मघवन्निन्द्र सुन्वते ।
पारावतं यत्पुरुसम्भृतं वस्वपावृणोः शरभाय ऋषिबन्धवे ॥६॥

हे ऐश्वर्यवान् इन्द्रदेव ! आपने अपने भ्राता रूप 'शरभ' (समर्थ सहयोगी) ऋषि के निमित्त 'पारावत' (पर्वत की तरह अवरोधक) के प्रचुर ऐश्वर्य को अपने अधिकार में कर लिया है । इन सोम अभिषव करने वालों को अपने जो ऐश्वर्य प्रदान किया है; आपके वे समस्त कार्य सराहनीय हैं॥६॥

प्र नूनं धावता पृथङ्नेह यो वो अवावरीत् ।
नि षीं वृत्रस्य मर्मणि वज्रमिन्द्रो अपीपतत् ॥७॥

हे पराक्रमियो ! उन इन्द्रदेव ने वृत्र के मर्मस्थल पर वज्र द्वारा प्रहार कर दिया है, इसलिए निश्चित रूप से अब आप सभी रिपुओं पर चढ़ाई (आक्रमण) करें ; क्योंकि कोई भी ऐसा योद्धा नहीं हैं, जो आपको अवरुद्ध कर सके॥७॥

मनोजवा अयमान आयसीमतरत्पुरम् ।
दिवं सुपर्णो गत्वाय सोमं वज्रिण आभरत् ॥८॥

मन के वेग से चलने वाले गरुड़, लौह नगरों को पार करते हुए दिव्यलोक में पहुँचकर वज्रधारी इन्द्रदेव के निमित्त सोमरस ले आएँ॥८॥

समुद्रे अन्तः शयत उद्गा वज्रो अभीवृतः ।
भरन्त्यस्मै संयतः पुरःप्रस्रवणा बलिम् ॥९॥

उन इन्द्रदेव का वज्र पानी ( मेघों ) से आवृत होकर समुद्र (अंतरिक्ष) के बीच विद्यमान रहता है । युद्ध की इच्छा करने वाले शत्रु, उस (वज्र) के लिए अपनी बलि चढ़ाते हैं॥९॥

यद्वाग्वदन्त्यविचेतनानि राष्ट्री देवानां निषसाद मन्द्रा ।
चतस्र ऊर्जं दुदुहे पयांसि क्व स्विदस्याः परमं जगाम ॥१०॥

अब अज्ञानियों को ज्ञान-सम्पन्न बनाने वाली तथा विद्वानों को आनन्दित करने वाली वाणी जब यज्ञों में प्रकट होती है, तब चारों दिशाओं से अन्न तथा जल का दोहन होता है । यह दिव्य वाणी किस स्थान से प्रकट हुई, कुछ पता नहीं है?॥१०॥

देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति ।
सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुप सुष्टुतैतु ॥११॥

देवताओं ने जिस दिव्यवाणी को उत्पन्न किया, विविध प्रकार के पशु (प्राणी) उसका उच्चारण करते हैं । अन्न और बल प्रदान करने वाली तथा गौ के सदृश हर्ष प्रदान करने वाली, वह वाणी हमारे द्वारा भली-भाँति स्तुन होती हुई, हमारे समीप आए॥११॥

सखे विष्णो वितरं वि क्रमस्व द्यौर्देहि लोकं वज्राय विष्कभे ।
हनाव वृत्रं रिणचाव सिन्धूनिन्द्रस्य यन्तु प्रसवे विसृष्टाः ॥१२॥

हे सखा विष्णुदेव ! आप अत्यधिक पराक्रम प्रकट करें । हे द्युलोक ! आप हमारे वज्र के गमन के लिए विस्तृत स्थान प्रदान करें । हे विष्णुदेव ! हम और आप एक साथ होकर वृत्र का संहार करे और जल को प्रवाहित करें । वे जल, मुक्त होकर इन्द्रदेव के आदेश से प्रवाहित हों॥१२॥

# सूक्त १०१

ऋषि: जगदग्निः । देवता- मित्रावरुणादित्याः, ६ आदित्याः, ७-८ आश्विनौ, ९-१० वायुः, ११-१२ सूर्य, १३ उषा सूर्यप्रभा, १४ पवमान, १५-१६ गौः। छंद: १-२ प्रगाथ, ३ गायत्री, ४ सतोवृहती, ५-१३ प्रगाथ , १४-१६ त्रिष्टुप

ऋधगित्था स मर्त्यः शशमे देवतातये ।
यो नूनं मित्रावरुणावभिष्टय आचक्रे हव्यदातये ॥१॥

जो व्यक्ति मित्रावरुण को अपनी कामनाओं की पूर्ति के लिए आहुति प्रदान करता है, वहीं यथार्थ रूप में, देवताओं को हर्षित करने के लिए आहुति प्रदान करता है॥१॥

वर्षिष्ठक्षत्रा उरुचक्षसा नरा राजाना दीर्घश्रुत्तमा ।
ता बाहुता न दंसना रथर्यतः साकं सूर्यस्य रश्मिभिः ॥२॥

मित्रावरुण अत्यन्त शक्ति-सम्पन्न, तेज-सम्पन्न, श्रेष्ठनायक, विराट् दृष्टि-सम्पन्न तथा महान् मेधावी हैं। वे अपनी दोनों बाहुओं के सदृश सूर्य की रश्मियों के साथ यज्ञ-कृत्य में पधारते हैं॥२॥

प्र यो वां मित्रावरुणाजिरो दूतो अद्रवत् ।
अयःशीर्षा मदेरघुः ॥३॥

हे मित्रावरुणदेवो ! जो यजमान सेवा करने के लिए दूत के रूप में आपके समीप आते हैं, वे स्वर्ण से अलंकृत सिर वाले होकर हर्ष प्रदायक धन प्राप्त करते हैं॥३॥

न यः सम्पृच्छे न पुनर्हवीतवे न संवादाय रमते ।
तस्मान्नो अद्य समृतेरुरुष्यतं बाहुभ्यां न उरुष्यतम् ॥४॥

हे मित्रावरुणदेवो ! जो व्यक्ति किसी प्रश्न में रस नहीं लेते । यज्ञ-कर्म तथा श्रेष्ठ भाषण से भी हर्षित नहीं होते, ऐसे शत्रु के साथ युद्ध में आप अपने बाहुबल से हमारी रक्षा करें॥४॥

प्र मित्राय प्रार्यम्णे सचथ्यमृतावसो ।
वरूथ्यं वरुणे छन्द्यं वचः स्तोत्रं राजसु गायत ॥५॥

हे परमार्थी याज्ञिको ! 'मित्र' 'वरुण' और 'अर्यमादेव' के यज्ञशाला में प्रतिष्ठित होने के बाद आप छन्दोबद्ध गेय स्तोत्रों से उनकी प्रार्थना करें॥५॥

ते हिन्विरे अरुणं जेन्यं वस्वेकं पुत्रं तिसृणाम् ।
ते धामान्यमृता मर्त्यानामदब्धा अभि चक्षते ॥६॥

वे मित्रावरुणदेव लाल रंग के सूर्य के सदृश ओजस्वी, विजय प्राप्त कराने वाले तथा सबको निवास प्रदान करने वाले होकर तथा तीनों लोकों (द्युलोक, भूलोक तथा अन्तरिक्ष लोक) के इकलौते पुत्र सूर्य को उदय होने के निमित्त प्रेरणा देते हैं। आलस्यरिहत अविनाशी देवगण मनुष्यों के स्थानों का निरीक्षण करते हैं॥६॥

आ मे वचांस्युद्यता द्युमत्तमानि कर्त्वा ।
उभा यातं नासत्या सजोषसा प्रति हव्यानि वीतये ॥७॥

सत्य का पालन करने वाले हे अश्विनीकुमारो ! आप हमारे द्वारा उच्चारित की गई वाणी के पास हवियों के सेवन करने के निमित्त पधारें॥७॥

रातिं यद्वामरक्षसं हवामहे युवाभ्यां वाजिनीवसू ।
प्राचीं होत्रां प्रतिरन्तावितं नरा गृणाना जमदग्निना ॥८॥

धन-धान्य से सम्पन्न हे अश्विनीकुमारो ! हम, आप दोनों से नीतियुक्त दान की कामना करते हैं । जमदग्न उष से स्तुत्य होकर उनकी प्राचीन स्तुतियों को समृद्ध करते हुए आप दोनों पधारें॥८॥

आ नो यज्ञं दिविस्पृशं वायो याहि सुमन्मभिः ।
अन्तः पवित्र उपरि श्रीणानोऽयं शुक्रो अयामि ते ॥९॥

हे वायो ! भली-भाँति अभिषुत किये गये पवित्र सोमरस को हम आपके लिए प्रदान करते हैं । दिव्यलोक का स्पर्श करने वाले हमारे इस यज्ञ में श्रेष्ठ स्तोत्रों के समीप आप पधारें॥९॥

वेत्यध्वर्युः पथिभी रजिष्ठैः प्रति हव्यानि वीतये ।
अधा नियुत्व उभयस्य नः पिब शुचिं सोमं गवाशिरम् ॥१०॥

हे वायो ! याजकगण आपके सेवन के लिए आहुतियों को सरल मार्गों से ले जाते हैं। आप शुद्ध तथा गौदुग्ध मिले हुए, हमारे दोनों तरह के सोमरस का पान करें॥१०॥

बण्महाँ असि सूर्य बळादित्य महाँ असि ।
महस्ते सतो महिमा पनस्यतेऽद्धा देव महाँ असि ॥११॥

प्रेरक, अदितिपुत्र हे इन्द्रदेव ! यह सुनिश्चित सत्य हैं कि आप महान् तेजस्वी हैं । हे देव ! आप महान् शक्तिशाली भी हैं, आपकी महानता का हम गुण-गान करते हैं॥११॥

बट् सूर्य श्रवसा महाँ असि सत्रा देव महाँ असि ।
मह्ना देवानामसुर्यः पुरोहितो विभु ज्योतिरदाभ्यम् ॥१२॥

हे सूर्यदेव ! आप अपने यश के कारण महान् हैं। देवों के बीच विशेष महत्त्व के कारण आप महान् हैं । आप तमिस्रा (अन्धकार) रूपी असुरों का नाश करने वाले हैं। पुरोहित के समान देवों का नेतृत्व करने वाले हैं। आपका तेज अदम्य, सर्वव्यापी और अविनाशी है॥१२॥

इयं या नीच्यर्किणी रूपा रोहिण्या कृता ।
चित्रेव प्रत्यदर्श्यायत्यन्तर्दशसु बाहुषु ॥१३॥

वे सौन्दर्य युक्त उषा देवी नीचे की तरफ मुख किए हुए सूर्य के प्रताप से ही उत्पन्न हुई हैं। वे विश्व की दशों दिशाओं से आती हुई, चिह्नित गौ के सदृश दर्शनीय हैं॥१३॥

प्रजा ह तिस्रो अत्यायमीयुर्न्यन्या अर्कमभितो विविश्रे ।
बृहद्ध तस्थौ भुवनेष्वन्तः पवमानो हरित आ विवेश ॥१४॥

तीनों भुवनों में जिन प्रजाओं का सृजन किया गया हैं, वे समस्त प्रज्ञाएँ सूर्यदेव के आश्रित रहती हैं। वे विराट् सूर्यदेव समस्त लोकों में व्याप्त हैं तथा वायुदेव समस्त दिशाओं में समाविष्ट हो रहे हैं॥१४॥

माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः ।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट ॥१५॥

हम विद्वान् लोगों से यही कहते हैं कि वे अपराधरहित तथा न मारने योग्य गौओं को न मारें, क्योंकि गौ-रुद्रों की माँ, वसुओं की पुत्री, आदित्यों की बहिन तथा अमृत की मूल हैं॥१५॥

वचोविदं वाचमुदीरयन्तीं विश्वाभिर्धीभिरुपतिष्ठमानाम् ।
देवीं देवेभ्यः पर्येयुषीं गामा मावृक्त मर्त्यो दभ्रचेताः ॥१६॥

जो वाणी को प्रेरणा प्रदान करती हैं, सबको देवत्व प्रदान करती हैं, हर प्रकार से वर्णित की जाती हैं तथा हमारी ओर आती हैं, ऐसी गौ (विद्या) को हीन बुद्धि वाले मनुष्य ही त्यागते हैं॥१६॥

# सूक्त १०२

ऋषि: भार्गव: प्रयोग: अग्निर्बार्हस्पत्य, पावको, सहस: पुत्रौ, गृहपति -यविष्ठौ त्योवान्तर:
देवता – अग्नि: । छंद: गायत्री

त्वमग्ने बृहद्वयो दधासि देव दाशुषे ।
कविर्गृहपतिर्युवा ॥१॥

हे अग्निदेव ! आप अत्यन्त ज्ञानी, घर के मालिक तथा हमेशा युवा बने रहने वाले हैं। हवि प्रदान करने वालों को आप महान् अन्न प्रदान करते हैं॥१॥

स न ईळानया सह देवाँ अग्ने दुवस्युवा ।
चिकिद्विभानवा वह ॥२॥

हे तेजसम्पन्न अग्निदेव ! आप श्रेष्ठ ज्ञानी हैं। हमारी भावविह्वल पुकार से प्रेरित होकर समस्त देवों को आप यहाँ ले आएँ॥२॥

त्वया ह स्विद्युजा वयं चोदिष्ठेन यविष्ठ्य ।
अभि ष्मो वाजसातये ॥३॥

अत्यन्त बलशाली हे अग्निदेव ! समस्त देवों को सन्मार्ग में प्रेरित करने वाले आप ही हैं । हम आपके सहयोग से धन-धान्य प्राप्त करने के लिए रिपुओं को परास्त करें॥३॥

और्वभृगुवच्छुचिमप्रवानवदा हुवे ।
अग्निं समुद्रवाससम् ॥४॥

समुद्र में वास करने वाले हे अग्निदेव ! 'भृगु' और 'अप्नवान्' आदि ज्ञानी अषियों ने सच्चे मन से आपकी प्रार्थना की हैं। हम भी हृदय से आपकी स्तुति करते हैं॥४॥

हुवे वातस्वनं कविं पर्जन्यक्रन्द्यं सहः ।
अग्निं समुद्रवाससम् ॥५॥

मेघों के सदृश गर्जना करने वाले, सागर में सोने वाले, वायु के सदृश शब्द करने वाले अत्यन्त शक्तिशाली तथा विद्वान् अग्निदेव को हम बुलाते हैं ॥५॥

आ सवं सवितुर्यथा भगस्येव भुजिं हुवे ।
अग्निं समुद्रवाससम् ॥६॥

'भग' देवता के भोग के सदृश तथा आदित्य के उदय होने के सदृश सागर में सोने वाले अग्निदेव को हम बुलाते हैं॥६॥

अग्निं वो वृधन्तमध्वराणां पुरूतमम् ।
अच्छा नप्त्रे सहस्वते ॥७॥

हे ऋत्विजो ! अपने श्रेष्ठतम पारमार्थिक कार्यों ( यज्ञों) में सहायक, अतिश्रेष्ठ, सबके हितैषी तथा बलशाली अग्निदेव का सान्निध्य प्राप्त करो॥७॥

अयं यथा न आभुवत्त्वष्टा रूपेव तक्ष्या ।
अस्य क्रत्वा यशस्वतः ॥८॥

विश्वकर्मा ( बढ़ई) जिस प्रकार लकड़ी को संस्कारित करके उत्तम स्वरूप प्रदान करता है, उसी प्रकार इन अग्निदेव के कर्मों से हम यशस्वी होते हैं एवं श्रेष्ठ स्वरूप प्राप्त करते हैं॥८॥

अयं विश्वा अभि श्रियोऽग्निर्देवेषु पत्यते ।
आ वाजैरुप नो गमत् ॥९॥

सभी प्रकार के ऐश्वर्यों को प्रदान करने वाले अग्निदेव हमारे निकट अन्न एवं धन सहित पधारें॥९॥

विश्वेषामिह स्तुहि होतॄणां यशस्तमम् ।
अग्निं यज्ञेषु पूर्व्यम् ॥१०॥

हे याजको ! समस्त होताओं में सर्वाधिक कीर्तिमान् तथा यज्ञों में प्रमुख अग्निदेव की यज्ञमण्डप में आप प्रार्थना करें॥१०॥

शीरं पावकशोचिषं ज्येष्ठो यो दमेष्वा ।
दीदाय दीर्घश्रुत्तमः ॥११॥

जो अग्निदेव देवताओं में सर्वश्रेष्ठ तथा अत्यन्त ज्ञानी होकर याजकों के गृह ( यज्ञमण्डप) में प्रदीप्त होते हैं, हम उन पवित्र ज्योतिरूप अग्निदेव की प्रार्थना करें॥११॥

तमर्वन्तं न सानसिं गृणीहि विप्र शुष्मिणम् ।
मित्रं न यातयज्जनम् ॥१२॥

हे स्तोताओ ! अश्व की भाँति सेवा करने योग्य, अत्यन्त शक्ति-सम्पन्न, सखा की तरह हर्ष प्रदायक तथा रिपुओं का संहार करने वाले उन अग्निदेव की प्रार्थना करें॥१२॥

उप त्वा जामयो गिरो देदिशतीर्हविष्कृतः ।
वायोरनीके अस्थिरन् ॥१३॥

हे अग्निदेव ! यजमान की वाणी से उच्चरित होने वाली प्रिय स्तुतियाँ आपके गुणों को प्रकट करती हैं। वे (यजमान) वायु के सहयोग से आपको प्रदीप्त करते हैं॥१३॥

यस्य त्रिधात्ववृतं बर्हिस्तस्थावसंदिनम् ।
आपश्चिन्नि दधा पदम् ॥१४॥

जिन अग्निदेव (या अग्निकुण्ड) के चारों ओर तीन धारण क्षमताएँ ( या मेखलाएँ) बँधी हुई हैं तथा जिनके चारों ओर विभिन्न लोक ( या कुशाएँ ) खुली स्थिति में स्थापित हैं, उन (अग्निदेव) के साथ जल भी स्थिर पद प्राप्त करता है॥१४॥

पदं देवस्य मीळ्हुषोऽनाधृष्टाभिरूतिभिः ।
भद्रा सूर्य इवोपदृक् ॥१५॥

प्रशंसनीय और तेजस्वी अग्निदेव के स्थाने, रिपुओं की बाधाओं से रहित एवं सुरक्षित हैं। उनका दर्शन भी सूर्य दर्शन के समान कल्याणकारी है॥१५॥

अग्ने घृतस्य धीतिभिस्तेपानो देव शोचिषा ।
आ देवान्वक्षि यक्षि च ॥१६॥

हे अग्निदेव ! आपकी वृद्धि के साधनभूत, घी से समर्थ (प्रज्वलित) होते हुए, आप अपनी लपटों के द्वारा देवों का आवाहन करें तथा उनका यजन करें॥१६॥

तं त्वाजनन्त मातरः कविं देवासो अङ्गिरः ।
हव्यवाहममर्त्यम् ॥१७॥

हे अग्निदेव ! आप विद्वान्, अविनाशी तथा आहुतियों का वहन करने वाले हैं। सभी देवताओं ने आपको माता के समान उत्पन्न किया है॥१७॥

प्रचेतसं त्वा कवेऽग्ने दूतं वरेण्यम् ।
हव्यवाहं नि षेदिरे ॥१८॥

हे ज्ञानी अग्निदेव ! आप श्रेष्ठ ज्ञान वाले, आहुतियों का वहन करने वाले तथा वरण करने योग्य हैं। आपको समस्त देवता सम्मानपूर्वक प्रतिष्ठित करते हैं॥१८॥

नहि मे अस्त्यघ्न्या न स्वधितिर्वनन्वति ।
अथैतादृग्भरामि ते ॥१९॥

हे अग्निदेव ! हमारे पास ( अग्नि के लिए उपयोगी) दुग्ध प्रदान करने वाली गौ नहीं है और न ही लकड़ी ( समिधा) काटने वाली कुल्हाड़ी है, फिर भी अपने कल्याण के लिए ( अभाव में भी हम आपका पोषण करते हैं॥१९॥

यदग्ने कानि कानि चिदा ते दारूणि दध्मसि ।
ता जुषस्व यविष्ठ्य ॥२०॥

हे सामर्थ्यवान् अग्निदेव ! जो भी समिधाएँ आपके निमित्त समर्पित की जाएँ, वे सभी घृत-आहुतियों के समान ही आपको परमप्रिय हों । आप उन सभी को प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण करें॥२०॥

यदत्त्युपजिह्विका यद्वम्रो अतिसर्पति ।
सर्वं तदस्तु ते घृतम् ॥२१॥

हे तरुण अग्निदेव ! दीमक जिस काष्ठ को चट कर जाती है, वल्मीक जिस काष्ठ को खा जाती हैं, ऐसे काष्ठ की समिधाएँ आपको घृतवत् प्रिय हों॥२१॥

अग्निमिन्धानो मनसा धियं सचेत मर्त्यः ।
अग्निमीधे विवस्वभिः ॥२२॥

मनोयोगपूर्वक अग्नि प्रदीप्त करने वाले साधक अपनी श्रद्धा को भी प्रदीप्त करते हैं। अस्तु, ( सूर्य किरणों) के साथ ही अग्निहोत्र की व्यवस्था करते हैं॥२२॥

# सूक्त १०३

ऋषि: सोभरि: काण्व
देवता – अग्नि:, १४ अग्निमरुत: । छंद: वृहती:, ५ विराडरूपा, ७, ९, ११, १३ सतो वृहती, १२ ककुप्, १४ अनुष्टुप

अदर्शि गातुवित्तमो यस्मिन्व्रतान्यादधुः ।
उपो षु जातमार्यस्य वर्धनमग्निं नक्षन्त नो गिरः ॥१॥

धर्ममार्गों के ज्ञाता अग्निदेव प्रकट हो गये हैं, जिनके माध्यम से यज्ञ के नियम पूरे किये जाते हैं। उत्तम मार्ग से प्रकट हुए, सज्जनों की प्रगति के आधार अग्निदेव हमारी स्तुतियाँ स्वीकार करें॥१॥

प्र दैवोदासो अग्निर्देवाँ अच्छा न मज्मना ।
अनु मातरं पृथिवीं वि वावृते तस्थौ नाकस्य सानवि ॥२॥

इन्द्रदेव के समतुल्य शक्तिशाली अग्निदेवदिवोदास' (दिव्य कार्यों के लिए समर्पित व्यक्ति के लिए पृथ्वी पर प्रकट हुए। अपने यज्ञीय कार्यों के परिणाम स्वरूप वे (दिवोदास) स्वर्ग के अधिकारी बने॥२॥

यस्माद्रेजन्त कृष्टयश्चर्कृत्यानि कृण्वतः ।
सहस्रसां मेधसाताविव त्मनाग्निं धीभिः सपर्यत ॥३॥

कर्तव्य परायणों से कर्महीन मनुष्य भयभीत रहते हैं । हे मनुष्यो ! सहस्रों देने वाले-बुद्धिपूर्वक उत्तम कर्मों से सहस्रों ऐश्वर्य देने वाले अग्निदेव की सेवा करो॥३॥

प्र यं राये निनीषसि मर्तो यस्ते वसो दाशत् ।
स वीरं धत्ते अग्न उक्थशंसिनं त्मना सहस्रपोषिणम् ॥४॥

सर्वाधार हे अग्निदेव ! जो साधक ऐश्वर्य के लिए आपके उपासक बनकरे हवि प्रदान करते हैं, वे सहस्रों व्यक्तियों के पोषण में सक्षम वीर पुत्र को उत्पन्न करने में समर्थ होते हैं॥४॥

स दृव्ळ्हे चिदभि तृणत्ति वाजमर्वता स धत्ते अक्षिति श्रवः ।
त्वे देवत्रा सदा पुरूवसो विश्वा वामानि धीमहि ॥५॥

प्रचुर ऐश्वर्यो के स्वामी हे अग्निदेव ! जो याजक आपकी प्रार्थना करते हैं, वे शक्तिशाली रिपुओं की सुदृढ़ पुरियों में विद्यमान अन्न को, अपने अश्वों द्वारा विनष्ट करके, अविनाशी कीर्ति ग्रहण करते हैं । हे अग्निदेव

! आप जैसे महान् दाता के अधीन रहकर हम भी श्रेष्ठ ऐश्वर्यों को प्राप्त करें॥५॥

यो विश्वा दयते वसु होता मन्द्रो जनानाम् ।
मधोर्न पात्रा प्रथमान्यस्मै प्र स्तोमा यन्त्यग्नये ॥६॥

याजकों को धन-धान्य के रूप में अपार वैभव देकर आनन्दित करने वाले अग्निदेव की , हम प्रथम स्तुति करते हैं, जैसे उन्हें सर्वप्रथम सोम का पात्र समर्पित किया जाता हैं॥६॥

अश्वं न गीर्भी रथ्यं सुदानवो मर्मृज्यन्ते देवयवः ।
उभे तोके तनये दस्म विश्पते पर्षि राधो मघोनाम् ॥७॥

हे अग्ने ! श्रेष्ठ दान-दाता और देवपक्षधर यजमानों द्वारा रथ में जोते गये अश्वों के रथ वाहक के समान ही आपकी स्तुति की जाती है। आप याजकों के पुत्र-पौत्रादिकों को, धनवानों के धन को छीनकर प्रदान करें॥७॥

प्र मंहिष्ठाय गायत ऋताव्ने बृहते शुक्रशोचिषे ।
उपस्तुतासो अग्नये ॥८॥

हे स्तोताओ ! आप श्रेष्ठ स्तोत्रों द्वारा अग्निदेव की स्तुति करें । वे महान् सत्य और यज्ञ के पालक, महान् तेजस्वी और रक्षक हैं॥८॥

आ वंसते मघवा वीरवद्यशः समिद्धो द्युम्न्याहुतः ।
कुविन्नो अस्य सुमतिर्नवीयस्यच्छा वाजेभिरागमत् ॥९॥

वीरों के समान प्रतापी अग्निदेव, आवाहित एवं प्रदीप्त होकर श्रेयस्कर अन्न-धन प्रदान करते हैं । इन अग्निदेव की अनुकूलता हमें प्रचुर मात्रा में धन-धान्य प्रदान करे॥९॥

प्रेष्ठमु प्रियाणां स्तुह्यासावातिथिम् ।
अग्निं रथानां यमम् ॥१०॥

हे स्तोताओ ! जो अग्निदेव आत्मीय जनों में सबसे अधिक पूज्य अतिथि स्वरूप तथा समस्त रथों का नियंत्रण करने वाले हैं, उन अग्निदेव की आप सभी प्रार्थना करें॥१०॥

उदिता यो निदिता वेदिता वस्वा यज्ञियो ववर्तति ।
दुष्टरा यस्य प्रवणे नोर्मयो धिया वाजं सिषासतः ॥११॥

वे अग्निदेव अत्यन्त विद्वान् और वन्दनीय हैं तथा वे प्रकट और गुप्त ऐश्वर्यों को प्रदान करते हैं। जिनकी विशाल लपटें, अधोगामी सागर

की तरंगों की तरह भयंकर हैं, उन अग्निदेव की आप प्रार्थना करें॥११॥

मा नो हृणीतामतिथिर्वसुरग्निः पुरुप्रशस्त एषः ।
यः सुहोता स्वध्वरः ॥१२॥

हमारे प्रिय अतिथि स्वरूप अग्निदेव को यज्ञ से दूर मत ले जाओ। वे देवताओं को बुलाने वाले, धनदाता एवं अनेकों मनुष्यों द्वारा स्तुत्य हैं॥१२॥

मो ते रिषन्ये अच्छोक्तिभिर्वसोऽग्ने केभिश्चिदेवैः ।
कीरिश्चिद्धि त्वामीट्टे दूत्याय रातहव्यः स्वध्वरः ॥१३॥

सबको निवास प्रदान करने वाले हे अग्निदेव ! जो यजमान अपनी श्रेष्ठ वाणियों तथा श्रेष्ठ साधनों के द्वारा आपकी साधना करते हैं, वे कभी भी दुःखी नहीं होते । यज्ञ सम्पादन करने वाले एवं आहुति प्रदान करने वाले याजक तथा सन्देशवाहक का कार्य करने वाले भी आपकी स्तुति करते हैं॥१३॥

आग्ने याहि मरुत्सखा रुद्रेभिः सोमपीतये ।
सोभर्या उप सुष्टुतिं मादयस्व स्वर्णरे ॥१४॥

मरुतों के मित्र है अग्निदेव ! आप हमारे यज्ञमण्ड़प में सोमपान के निमित्त मरुद्गणों के साथ पधारें । हे अग्निदेव ! मुझ 'सोभरि' ऋषि की प्रार्थनाओं को ग्रहण करके आप हर्षित हों॥१४॥

**॥इति अष्टम मण्डलं॥**